भारतीय सशस्त्र सेनाओं के परिवर्तित नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों का अध्ययन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी
की
रक्षा अध्ययन विषय
में
विद्या वाचस्पति (पी–एच0डी0) **उपाधि**
हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

शोध निर्देशक
डॉ0 ओमप्रकाश सिंह
रीडर एवं अध्यक्ष
रक्षा अध्ययन विभाग
अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अतर्रा (बांदा)

शोधार्थी
अरुण सिंह

रक्षा अध्ययन विभाग
अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अतर्रा (बांदा)
2007

डॉ0ओमप्रकाश सिंह
रीडर एवं अध्यक्ष
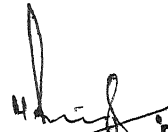
रक्षा अध्ययन विभाग
अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अतर्रा (बाँदा) 210201

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री अरूण सिंह ने मेरे निर्देशन में पी–एच0डी0 अध्यादेश 7 में उल्लिखित अवधि तक पी–एच0डी0 उपाधि हेतु 'भारतीय सशस्त्र सेनाओं के परिवर्तित नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों का अध्ययन' विषय पर शोधकार्य किया है। अभ्यर्थी द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा शोध प्रबन्ध उनकी मौलिक कृति है।

श्री अरूण सिंह ने अत्यन्त अध्यवसाय, लगन एवं परिश्रम के साथ शोध कार्य किया है। इसके पूर्व यह शोध प्रबन्ध किसी अन्य विश्वविद्यालय में शोध उपाधि हेतु प्रस्तुत नही किया गया है।

दिनांक– 15.12.07

डॉ0 ओमप्रकाश सिंह
शोध निर्देशक

घोषणा–पत्र

मै यह घोषणा करता हूँ कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध ***'भारतीय सशस्त्र सैनिकों के परितवर्तित नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों का अध्ययन'*** *मेरा मौलिक कार्य है। इसके पूर्व इसे पूर्ण अथवा आंशिक रूप से किसी अन्य विश्वविद्यालय में शोध उपाधि हेतु प्रस्तुत नही किया गया है।*

Arun Singh
अरूण सिंह
शोधार्थी

दिनांक– 15-12-07

आमुख

सुरक्षा मानव जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं में से एक है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से ही अनियोजित विकास तीव्र औद्योगीकरण अनियंत्रित जनसंख्या वृद्धि एवं बढ़ती निर्धनता के कारण मानवीय मूल्यों की गुणवत्ता में निरन्तर ह्रास हो रहा है। शक्तिशाली राष्ट्रों ने अपने जीवनस्तर को समुन्नत बनाने की प्रतिस्पर्द्धा में विगत शताब्दी में दो विश्वयुद्ध लड़े जिसमें अपूर्ण क्षति हुई तथा मानवीय मूल्यों का अवनयन हुआ। महाशक्ति राष्ट्रों ने अपने वर्चस्व को बढ़ाने के लिए विज्ञान व तकनीकी का प्रयोग रचनात्मक कार्यों की अपेक्षा संहारात्मक शक्ति अर्जित करने में किया। जिससे जल, थल एवं नभ सभी क्षेत्र रणभूमि में परिवर्तित हो गये हैं। वर्तमान में पूर्णयुद्ध की अवधारणा, पृथ्वी पर सम्पूर्ण जीवों के जीवन के अस्तित्त्व को चुनौती दे रही है। परमाणु सम्पन्न राष्ट्रों के पास इतनी विशाल संख्या में ही घातक अस्त्र–शस्त्र है जिससे सम्पूर्ण दुनियां नष्ट हो सकती है। मानवीय मूल्यों के क्षरण के परिणामस्वरूप देश में आतंकवाद, नक्सलवाद, विदेशीघुसपैठ, अवैध हथियारों का व्यापार, नशीले पदार्थों की तश्करी, मानव अंगों की तश्करी, नकली मुद्रा का प्रसार जैसी गम्भीर समस्यायें अपना संजाल बढ़ाती जा रही हैं। ऐसी स्थिति में यदि मानवीयमूल्यों का उचित प्रबन्धन न किया गया तो पूरे विश्व को महाविनाश का सामना करना पड़ेगा। मानवीय मूल्यों के क्षरण के चलते देश की आन्तरिक एवं बाह्रय सुरक्षा हेतु उत्तरदायी सेना में भ्रष्टाचार बढ़ रहा है एवं सैनिक आत्महत्या तथा अपने साथियों एवं अधिकारियों की हत्याएं कर रहे हैं। ये घटनायें दिनानुदिन बढ़ती जा रही हैं। जिससे भविष्य में देश की सुरक्षा पर ही प्रश्न चिह्नन लग सकता है। अतः सेना के प्रत्येक वर्ग में मानवीय मूल्यों के प्रति संचेतना एवं सकारात्मक अभिवृत्ति के विकास की आवश्यकता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 'भारतीय सशस्त्र सैनिकों के परिवर्तित नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों का अध्ययन' सेना में मानवीय संचेतना विकास का एक विनम्र प्रयास है लक्ष्य की प्राप्ति में जिन संस्थाओं, संगठनों एवं महानुभावों से यद्किंचित सहयोग प्राप्त हुआ है उन सभी के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा प्रथम कर्त्तव्य है।

सर्वप्रथम मैं अपने शोध निर्देशक प्रो० (डॉ०) ओ०पी० सिंह, विभागाध्यक्ष रक्षा अध्ययन, अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा के प्रति हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके योग्य एवं कुशल निर्देशन में शोध कल्प पूर्णता को प्राप्त हुआ। शोधकार्य की सम्पूर्ण समयावधि में उनसे प्राप्त मार्गदर्शन, सतत् उत्साहवर्धन एवं आलोचनात्मक किन्तु रचनात्मक सुझाव मेरे प्रेरणास्रोत बने रहे।

नेशनल डिफेन्स एकेडमी खड़गवासला (पुणे—महाराष्ट्र) में लेफ्टीनेण्ट कर्नल सिद्धगोपाल विभागाध्यक्ष (कम्प्यूटर विभाग) एवं श्रीमती उमा देवी के स्नेह एवं सहयोग को मैं कभी भुला नही पाऊँगा, पुस्तकालयाध्यक्ष एवं संग्रहालयाध्यक्ष सहित वहाँ के कर्मचारियों का मैं हृदय से आभारी हूँ।

मैं अपने गुरूजनों डॉ० रामप्रकाश सिंह, डॉ० वीरेन्द्र सिंह, डॉ० रमेश सिंह रक्षा अध्ययन विभाग अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा (बांदा), जिनसे समय—समय पर मुझे प्रेरणा मिलती रही और निर्देशन प्राप्त हो रहा के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। शोधकार्य को पूर्ण कराने में रचनात्मक सहयोग के लिए डॉ० रमेशचन्द्र अग्निहोत्री, रीडर, भूगोल विभाग अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा (बांदा), डॉ० नीरज श्रीवास्तव ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज इलाहाबाद, के प्रति कृतज्ञता प्रकाशन करना अपना पावन कर्त्तव्य समझता हूँ।

मैं डॉ० विष्णुदत्त द्विवेदी प्रधानचार्य राजकुमार इण्टर कॉलेज नरैनी जिनसे भाषा सम्बंधी समस्याओं के निराकरण में समुचित सहायता प्राप्त हुई, के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

शोधकार्य को मूर्तरूप देने के लिए प्रकाश कम्प्यूटर्स अत्रि नगर अतर्रा (बांदा) के श्री अखिलेश प्रजापति के सक्रिय सहयोग हेतु मैं उन्हे धन्यवाद देता हूँ। शोध अवधि में पुस्तकालयाध्यक्ष, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद, बुन्देलखण्ड विश्वद्यिालय झाँसी, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, अतर्रा महाविद्यालय अतर्रा (बांदा) द्वारा प्रदत्त सहयोग सराहनीय है। मैं उन समस्त, लेखकों एवं प्रकाशकों के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूँ जिनकी कृतियों का उपयोग प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से शोध कार्य में किया।

मैं अपने पूजनीय पितरौ श्रीमती गनेशी देवी, श्री भानुप्रताप सिंह सहित अपने समस्त परिवार के प्रति हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करना उनके योगदान का अवमूल्यन ही होगा जिनके सौहार्द से मेरा सम्बंध शिक्षा के चरम बिन्दु से हुआ। शोधकार्य के समय से पूर्ण होने में मेरे प्रिय दोस्त श्री कुशल सिंह, श्री पुष्पेन्द्र सिंह एवं डॉ0 आशीष सिंह प्रशंसा के पात्र हैं जिन्होने शोध की सम्पूर्ण समयावधि में मुझे भावनात्मक सम्बल प्रदान किया है।

Arun Singh

अरूण सिंह

शोधार्थी

अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

प्रस्तावना

नैतिकता एवं नैतिक मूल्य-

भारत का राष्ट्रीय सिद्धान्त 'सत्यमेव जयते' है। गाँधी जी ने अपने जीवन में सत्य पर अनेक प्रयोग किये हैं। भारत के ऋषियों–मुनियों ने सत्य की खोज में हजारों वर्ष जंगल में बिताये हैं। गौतम बुद्ध ने सत्य की खोज में अपना राजसी जीवन त्याग दिया। दुनियाँ के वैज्ञानिकों ने भी सत्य की खोज में अपना जीवन लगाया है। हमारे न्यायालय में भी साक्ष्य प्रारम्भ करने के पहले यह शपथ दिलाते हैं कि सत्य के सिवा कुछ नही बोलेंगे। संसद में बोले गये असत्य कथन सदन की अवमानना माना जाता है।

किसी की विश्वसनीयता अर्जित करने के लिये सत्य का ही आधार लेना पड़ता है। यह सत्य ही हमारी नैतिक शक्ति होती है यही हमारे जीवन के नैतिक मूल्यों की जड़ है। सत्य रहित जीवन निरर्थक होता है परस्पर विश्वास के लिये सत्य ही आधार है। सत्य वाणी के व्यवहार से आत्मशक्ति में वृद्धि होती है। सत्य आभास न करने की मानसिकता की पृष्ठभूमि मे स्वार्थ एवं लालच छिपा हुआ होता है। स्वार्थ तथा लालच भरा जीवन ही अनैतिक जीवन है। अपनी क्षमतानुसार असहाय या निर्धन की सहायता करना नैतिकता का प्रबल पक्ष है। इसकी पृष्ठभूमि में हमारी नैतिकता ही छिपी हुई है।

सामाजिक सौहार्द्र बनाकर जीना चाहिये किसी से घृणा न करें, घृणा शब्द नैतिक शब्दकोष में होता ही नही है। घृणा पारस्परिक भाई–चारे का विरोधी है। नैतिक मूल्यों का सबसे बडा शत्रु बदला है। यह सिर्फ तब आता है जब किसी को लगता है कि किसी ने उसे कष्ट, दुःख या हानि पहुँचाई है। असहाय लोगो की सहायता, मानवीय धर्म है। किसी की सहायता करके स्वयं को अनुगृहीत माने न कि किसी पर अहसान दिखायें। गरीब, रोगी, लाचार, बुजुर्गो एवं विकलांगो के प्रति अच्छी भावना रखने से स्वयं के नैतिक पक्ष में वृद्धि होती है। सेवा कार्यो से नैतिकता बढ़ती है। सेवा के यज्ञ में अनैतिकता जलकर भस्म हो जाती है। सेवा भाव आ जाने पर

क्रोध समाप्त हो जाता है, अहम् नष्ट हो जाता है, ईर्ष्या भी गायब हो जाती है और जीवन नैतिकता से भरकर सच्चा आनन्द प्राप्त करता है। प्रेम और मित्रता नैतिक है जबकि घृणा अनैतिक है। नैतिक मूल्यों के लिये विश्वास आवश्यक है नैतिक मूल्यों के सही आचरण के लिये चरित्र का मजबूत होना आवश्यक है और एक उच्च नैतिक मूल्य वाला व्यक्ति ही सच्चरित्र हो सकता है। एक व्यक्ति जिसे खुद पर विश्वास नही है वह दूसरों पर भरोसा करता है और वह जिस पर भरोसा करता है उनके लिये अनैतिक कार्य करने के लिये तैयार हो जायेगा। एक व्यक्ति जिसे खुद पर भरोसा है, वह अपनी शक्ति और चरित्र का प्रयोग करते हुये अपने लक्ष्य को प्राप्त करता है।

नैतिकता में सत्य की महान शक्ति होती है। गाँधी जी इसी सत्य अंहिसा के बल पर स्वतंत्रता संग्राम में विजयी हुये। अनैतिक मूल्यों की राह फिसलन भरी होती है। एक बार आदमी इस राह पर एक कदम चलता है तो वह फिसलता चला जाता है और फिर आसानी से वह रुक नही पाता। अच्छा यही है कि पहले कदम को न उठाया जाये। एक बार जब कोई खुद अग्नि परीक्षाओं को पास कर लेता है, तो फिर वह भविष्य में अपने नैतिक मूल्यों में विश्वास कर, विश्वास की परीक्षा के लिये वह हमेशा तैयार रहता है अतः वह विजयी होता है। नैतिक मूल्यों से समझौता खतरनाक है। उच्च तथा सुन्दर लक्ष्य बनाना जितना महत्त्वपूर्ण है उससे अधिक महत्त्वपूर्ण लक्ष्य प्राप्त हेतु नैतिक तरीकों का प्रयोग होता है। सामाजिक असमानतायें ही नैतिक मूल्यों के लिये सबसे अधिक हानिकारक हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक राष्ट्रीय संगठनों के स्वस्थ ढांचों के लिये भी नैतिक मूल्य आवश्यक है। पारस्परिक सहिष्णुता एक अपना महत्त्वपूर्ण नैतिक मूल्य है, पारस्परिक विश्वास, सत्य, प्रेम, सहानुभूति, परस्पर सम्मान तथा आध्यात्मिक महत्त्वाकांक्षायें, ईमानदारी, पक्षपात रहित होना देश भक्ति जैसी सम्भावनाएं नैतिक मूल्यों में ही निहित हैं। भौतिक वातावरण की अपेक्षा, नैतिक वातावरण का क्षरण अधिक हानिकारक है। वर्तमान में हमारे देश के नैतिक मानकों में लगातार क्षरण हो रहा है। इसका कारण है कि लोगो ने देश की अपेक्षा

स्वयं तथा स्वयं की पीढ़ियों के प्रति अधिक ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया है। वास्तव में प्रायः यह देखा गया है कि लोग स्वयं तथा देश के हितों को स्वयं के हितों के ऊपर न्योछावर करने को तैयार हो जाते हैं। ऐसे में नैतिक मूल्यों पर ध्यान देना अधिक महत्त्वपूर्ण है।

स्वतंत्रता से पूर्व हम निर्धन थे परन्तु हमारा नैतिक स्तर उच्च था। इसी उच्च नैतिक स्तर के कारण सारा विश्व हमारा सम्मान करता था। हमारे अन्दर एक शक्तिशाली साम्राज्य के विरूद्ध सत्य, अहिंसा के नैतिक शस्त्रों के साथ संघर्ष करने का साहस भी था।[1] स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में कुछ राजनेताओं और नौकर शाहों तथा व्यापारियों ने इन मूल्यों का उल्लंघन किया और रातों रात अमीर बन बैठे। दूसरों ने उनका अनुसरण किया और इस प्रकार नैतिक मूल्यों में जबरजस्त गिरावट आनी प्रारम्भ हो गयी। फलतः देश के कुछ भाग सम्पन्न होने लगे और सम्पन्नता और भ्रष्टाचार के मध्य एक उच्च सह–सम्बन्ध स्थापित हो गया, कुछ लोगों ने तो बहस करनी भी आरम्भ कर दी कि सम्पन्नता प्राप्त करने के लिये भ्रष्टाचार का मार्ग अपनाना आवश्यक है वे यह अनुभव करते है कि हमारे देशवासी बिना घूस लिये किसी भी कार्य को करने के लिये तत्पर नही होते। इनमें मंत्री से लेकर चपरासी तक शामिल है और एक हास्यास्पद प्रचार भी किया गया कि प्रत्येक भारतीय इस दलदल में फँसा हुआ है। आर्थिक विकास तथा नैतिक पतन के मध्य इतना स्पष्ट सह–सम्बन्ध है कि समय के साथ हम पूर्ण विकसित देश तो हो सकते हैं लेकिन विश्व में व्याप्त भ्रष्टाचार के शीर्ष के अत्यन्त निकट और जीवन की गुणवत्ता से अत्यन्त दूर रहेंगे। यदि हम अपनी प्रगति की तुलना चीन, कोरिया, ताइवान, सिंगापुर आदि देशों की प्रगति के साथ करके आसानी से यह देख सकते हैं कि ये सभी देश भ्रष्टाचार से मुक्त हैं तथा इन्होंने अपने नैतिक मूल्यों की रक्षा करने के कारण ही प्रगति की है और उनकी विशुद्ध देश भक्ति ने उन्हे यह प्रश्न करने का अधिकार प्रदान किया कि वे अपने देशों को क्या दे सकते हैं? बजाय इसके कि वे अपने देश से क्या ले सकते हैं। इन देशों में भी नैतिक मूल्यों में पतन तथा कुछ भ्रष्टाचार भी

व्याप्त है परन्तु यह शीर्षतम् स्तर पर पाया जाता है और जब इसकी पहचान हो जाती है तो इसके लिये कठोरतम दण्ड़ भी दिया जाता है। यही विकसित देशों का सत्य है। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान प्रत्येक व्यक्ति देश के प्रति अपने कर्त्तव्यों की बातें करता था; लेकिन आज प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों की ही बातें करता है हमारे देश में नैतिक मूल्यों पर आधारित हमारी परम्पराओं में पर्याप्त गहराई आज भी विद्यमान है।

प्रत्येक धर्म में एक मूलभूत दार्शनिकता, आध्यात्मिकता, ईश्वर तथा मनुष्य के मध्य सम्बन्ध पर चर्चा, धार्मिक कृत्यों तथा नैतिक मूल्यों से सम्बंधित एक संग्रह होता है। नैतिक मूल्यों को सम्बन्धित धर्म की अवधारणा के अनुसार ही व्यक्त किया जाता है। प्राचीन नैतिक शिक्षा, धार्मिक शिक्षा का ही एक अंग थी। वर्तमान गिरते हुये नैतिक मूल्यों के संकट को ध्यान में रखकर सभी धर्म के नैतिक मूल्यों का परीक्षण करके एक नवीन नैतिक शिक्षा का पाठ्यक्रम तैयार किया गया है। माध्यमिक स्तर की शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा इसे विभिन्न स्तरों पर लागू किया गया है। हमारे देश की एक सबसे महत्त्वपूर्ण धरोहर संयुक्त परिवार प्रणाली भी रही है। जिसमें बड़े लोग बच्चों को नैतिक शिक्षा देने का कार्य स्वयं ही किया करते थे। इसके लिये विद्यालय में अलग से शिक्षण के लिये आवश्यकता नही थी वर्तमान में हमारी यह प्रणाली टूट रही है। अब बच्चे अपने माता पिता के साथ अकेले रहते हैं। नैतिक शिक्षा का कार्य माता–पिता भी कर सकते थे परन्तु पति–पत्नी द्वारा कार्यालयों में कार्य करने के कारण उनके पास अब समय ही नही बचता। अतः अब नैतिक शिक्षा घर के भरोसे नही छोड़ी जा सकती है। इसके लिये औपचारिक शिक्षा तक को इसका उत्तर दायित्व भी निभाना पड़ेगा, ताकि बचपन से ही चरित्र का निर्माण किया जा सके ।

चरित्र वह ज्योति है जो सूर्यास्त हो जाने और सभी रोशनियों के बुझ जाने के बाद भी आलोकित होती रहती है। चरित्र वह शक्ति है, जिसके द्वारा हम हारते हुये युद्धों को भी जीत सकते हैं। चरित्र, मनुष्य में जाग्रत वह दिव्यता है जिसके समक्ष सभी नतमस्तक हो जाते हैं। चरित्र वह उत्प्रेरणा है, जो निर्धनता के बीच भी चमकती

रहती है। वह सुदृढ़ नींव है जिस पर जीवन की समस्त कालजयी संस्थाएँ खड़ी हैं। हम निर्भयता पूर्वक किसी भी प्रकार के वर्तमान और भविष्य का सामना करके उस पर विजय प्राप्त कर सकते हैं 'परन्तु इसके अभाव में न हमारा कोई वर्तमान है और न भविष्य ही। कोई भी राष्ट्र उतना ही बलवान है जितना कि उसका चारित्रिक आधार। चरित्र क्या है ? यूनानी भाषा में चरित्र के पर्यायवाची शब्द का तात्पर्य है—दुनिया में अपने अस्तित्व की शैली को अंकित कर जाना।[2] किसी व्यक्ति या राष्ट्र के विशेष मानसिक तथा नैतिक गुणों का समुच्चय अथवा किसी व्यक्ति या वस्तु के अस्तित्व पर प्रकृति, शिक्षा या आदतों द्वारा अंकित व्यक्तित्व की छाप को चरित्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

प्रत्येक कार्य, प्रत्येक गतिविधि, प्रत्येक विचार मन पर एक संग्रह छोड़ जाता है। मन के इन्हीं संस्कारों के योग से प्रतिक्षण का अस्तित्व निर्धारित होता है। यदि अच्छे संस्कारों का प्राबल्य हो, तो चरित्र अच्छा हो जाता है और बुरे संस्कारों से बुरा हो जाता है।[3] चरित्रवान मनुष्य यदि उन्नति की ओर बढता है तो चरित्रहीन व्यक्ति अधोगति को प्राप्त होता है। चरित्रवान व्यक्ति इतिहास का निर्माण करता है और इससे विहीन व्यक्ति इतिहास की मार खाकर रह जाता है। चरित्रवान व्यक्ति मानवता की आशा, सांत्वना, भलाई, शान्ति तथा प्रेरणा बनता है और चरित्रहीन व्यक्ति समाज में कठिनाईयां, संघर्ष, चिन्ता और दुःख उत्पन्न करता है। चरित्र में ही जीवन की प्रत्येक पहेली को सुलझाने की कुंजी छिपी है। इसमें प्रत्येक कुचक्र को तोड़ने की क्षमता है। ऐसा कोई भी रहस्य नही, चरित्र जिसका उद्घाटन न कर सके। हमे अपने राष्ट्र को समृद्ध एवं शक्तिशाली बनाने के लिये यथेष्ट चरित्र की आवश्यकता है, नही तो हम चाहे जो भी क्यों न करे हमारे जीवन के व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सभी स्तरों पर समस्याओं में वृद्धि ही होती जायेगी। अतः समस्याओं के समाधान के लिये बहुत कुछ करना और चरित्र निर्माण के लिये कुछ भी न करना समझदारी का परिचायक नही है।

यदि हमारे पास यथेष्ठ चरित्र न हो तो हमारी शक्तियों की अपेक्षा दुर्बलतायें ही अधिक प्रभावी होगी, हमारे सौभाग्य की तुलना में दुर्भाग्य ही अधिक प्रबल होगा, हमारे जीवन में सुख–शान्ति की जगह शोक–विषाद की ही बहुतायत होगी और हमारे भविष्य की तुलना में हमारा अतीत ही अधिक गौरवशाली होगा। यदि हमारे पास यथेष्ठ चरित्र न हो तो हमारे मित्रों की अपेक्षा शत्रु ही अधिक सबल होगे, शान्ति की तुलना में युद्ध ही अधिक होंगे, मेल–मिलाप के स्थान पर हिंसा का ही आधिक्य होगा।[4] परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। यह निरंतर चलता रहता है। लेकिन कभी–कभी परिवर्तन सदियों से मान्य नैतिक मूल्यों में ही होने लगता है तब सम्पूर्ण सामाजिक परिवेश अव्यवस्थित होने लगता है ऐसे ही परिवर्तन को श्रीमद्भागवत गीता में निम्न प्रकार कहा गया है–

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।[5]

जब धर्म की हानि होती है और अधर्म बढ़ता है तब मै अपने को प्रकट करता हूँ तथा सज्जन पुरूषों की रक्षा करते हुये दुष्टों का संहार करता हूँ और पुनः धर्म की अच्छी तरह स्थापना करता हूँ। महाभारत का युद्ध तत्कालीन सेनानायकों के नैतिक ह्रास के कारण हुआ था, जिसके सूत्राधार दुर्योधन और शकुनि थे। दुर्योधन को समझाने का प्रयास श्रीकृष्ण ने किया था लेकिन उसके अनैतिक कार्य इतने बढ़ चुके थे परिणामतः सारा राज्य एवं राजवंश नष्ट हो गया।

नैतिकता एवं सैन्य शक्ति-

किसी राष्ट्र की आधार शक्ति होती है। उसके नैतिक क्षरण से राष्ट्र कमजोर होकर अवनति की ओर जाता है। वर्तमान में भारतीय सशस्त्र सेनाओं में आये दिन नैतिक क्षरण के अनेक प्रकरण सामने आ रहे हैं। नैतिक मूल्यों में मानवता और राष्ट्रशक्ति का समावेश होता है यदि इसमें गिरावट आती है तो सामाजिक सौहार्द्र और सद्भावना में कमी आनी स्वाभाविक है। भारतीय सशस्त्र सेना के नैतिक मूल्यों में तेजी से क्षरण हो रहा है। जीवन में बढ़ती उपभोगवादी संस्कृति ने धन के ब्यामोह में तेजी से वृद्धि की है। भारतीय सेनायें भी इससे प्रभावित हुई है। सैनिक अधिकारी अधिकाधिक धन अर्जित करने की चाह में भ्रष्टाचार एवं राष्ट्रविरोधी गतिविधियों में संलग्न पाये गये है। जिससे सैनिकों के जीवन मूल्यों में भी कमी आ रही है।

वर्तमान में थल सेना, सैनिक अधिकारियों की कमी से जूझ रही है। सेना में समाज का अच्छा वर्ग जाने को तैयार नही है जो पहुंच गये हैं वह वहां से आना चाहते हैं। नौ सेना के अधिकारी भी पलायन कर रहे हैं। इस सन्दर्भ में यह विस्मृत नही किया जा सकता कि वायुसेना के पायलट पहले से ही निजी एअर लाइनों की ओर आकर्षित हो रहे हैं। यह ठीक है कि वायुसेना ने अपने पायलटों पर अनेक तरह के प्रतिबन्ध लगा दिये हैं, ताकि वे निजी एअरलाइनों की सेवायें आसानी से न अपना सकें लेकिन कुल मिलाकर यह चिंताजनक है कि भारतीय सेनाओं के तीनो अंग योग्य एवं सक्षम अधिकारियों की कमी का सामना कर रहे हैं। निःसंदेह यह कोई साधारण बात नही कि कर्नल और मेजर स्तर के अधिकारी सैन्य सेवा छोड़ने के लिये तैयार हैं तथा उनकी संख्या बढ़ती ही जा रही है। सेनाओं के तीनों अंग सक्षम अधिकारियों के अभाव से जिस तरह ग्रस्त हो गये हैं, उसे देखते हुये सैन्य अधिकारियों और राष्ट्र के नीति निर्माताओं को गंभीर चिंतन मनन करने की आवश्यकता है। सेनाओं में योग्य अधिकारियों की कमी यही बताती है कि राष्ट्र सेवा और देश भक्ति के भावनाओं पर युवाओं को सैन्य सेवाओं की ओर आकर्षित नही किया जा सकता और न उन्हें सेना में रोंके रखा जा सकता है। मौजूदा स्थिति में यह जरूरी हो जाता है कि इस सन्दर्भ

में सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक परिस्थितियों का गहन अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाये। यह एक कटु सत्य है कि अर्थ की प्रधानता वाले इस युग में देशभक्ति की भावना को कोई विशेष महत्त्व नहीं दिया जा रहा है। आर्थिक प्रगति की होड़ में जिस तरह धन, वैभव और ऐश्वर्य को जरूरत से ज्यादा महत्त्व दिया जा रहा है उसे देखते हुये ऐसी अपेक्षा उचित नही कि राष्ट्र सेवा के नाम पर सामर्थ्यवान युवा पीढ़ी सैन्य सेवा की ओर आकर्षित होती रहेगी। राष्ट्र के नीति निर्माताओं को इस पर प्राथमिकता के आधार पर विचार करना होगा कि वे कौन सी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ है जिनके चलते देश की युवा शक्ति सैन्य सेवाओं में शामिल होकर देश की सेवा करने के लिये तत्पर नही है ? यह अपेक्षा तो उचित है कि युवा पीढ़ी राष्ट्र की आन–बान शान पर मर मिटने के लिये तत्पर रहे लेकिन इसके लिये यह भी जरूरी है कि समाज को सबसे अधिक प्रभावित करने वाली राजनीति अपने आचरण के जरिये यह स्थापित करे कि राष्ट्र की रक्षा और उसका उत्थान उसकी प्राथमिक सूची में है। वास्तव में अब समय आ गया है कि यह समझ लिया जाये कि नारों और उपदेशों के जरिये राष्ट्रभक्ति के जज्बे को बरकरार नही रखा जा सकता।

इस युग में खोखले नजर आने वाले नारे और कभी न पूरे होने वाले आश्वासन युवा पीढ़ी को प्रभावित नही कर सकते। अभी भी समय है राजनीति और समाज के श्रेष्ठवर्ग को अपने व्यवहार से यह प्रदर्शित करना होगा कि भारत का सम्मान उसकी प्राथमिक सूची में सर्वोपरि है। जब यथार्थ के धरातल पर ऐसा होगा तभी सेनाओं में समक्ष योग्य युवाओं का जो संकट है, उसे दूर किया जा सकता है।

भ्रष्टाचार एवं सैन्य सेवाएं-

भ्रष्टाचार हमारे राष्ट्रीय जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है जिसका दूरगामी प्रभाव भयावह है। भारतीय सशस्त्र सैनिकों मे पिछले दशक से बड़ी तीव्र गति से परिवर्तन होता जा रहा है। भारतीय सशस्त्र सेना की व्यावसायिक दक्षता महाशक्तियों के समकक्ष पहुँच रही है और इस क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित हों रहे हैं। जिसमें परमाणु परीक्षण, अन्तर्महाद्वीपीय प्रक्षेपास्त्र, अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी प्रमुख हैं। आज हम सेना की दक्षता बढ़ाने के लिये विश्व की श्रेष्ठ रक्षा तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी तथा सामग्री आयात करने के लिये प्रयत्नशील है। वर्तमान में भारत विश्व का सर्वाधिक हथियार खरीदने वाला देश है। एक ओर सेना की दक्षता बढ़ाने के लिये भारत पूर्ण मनोयोग से लगा हुआ है, वहीं दूसरी ओर देश की सुरक्षा के लिये उत्तरदायी सैन्य कर्मियों का नैतिक क्षरण भविष्य के लिये गंभीर संकट खड़ा कर रहा है। अतः समय रहते ही नैतिक स्तर के क्षरण को रोककर भारत को विकसित और महाशक्ति के रूप में स्थापित किया जा सकता है। इस समय भारतीय सशस्त्र सेना बहुत कठिन दौर से गुजर रही है सेना के वरिष्ठ अधिकारियों तथा अधीनस्थ अधिकारियों में शीतयुद्ध जैसा वातावरण बनता जा रहा है। सैनिकों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ा है। फलतः सैनिक आत्मनियंत्रण खोते जा रहे हैं और अपने साथियों तथा अधिकारियों की हत्या तक कर रहे हैं जो इस्पाती अनुशासन रखने वाली भारतीय सेना के लिये एक कलंक है तथा अत्यन्त चिंता का विषय है। विगत चार वर्षो में ऐसी चार सौ घटनाएँ हो चुकी है।[6] विदेशी खुफिया एजेन्सियों द्वारा भारतीय सशस्त्र सेना में प्रवेश दिलाया जा रहा है। आई0 एस0 आई0 के लोग सेना में प्रवेश पा चुके हैं साथ ही वह अतिमहत्त्वपूर्ण सूचनाओं को लीक कर भारतीय सेना का मनोबल तोड़ रहे हैं। देश में वर्ष 2003 से अब तक सशस्त्र सेना कर्मियों के जासूसी गतिविधियों में लिप्त होने के 11 मामले सामने आये हैं और इस सम्बन्ध में 23 सैन्य कर्मियों को गिरफ्तार किया गया है। रक्षामंत्री ए0के0 एंटनी ने बताया कि थल सेना में ऐसे चार मामले 2003 में,

एक मामला 2005 में, एक 2006 में तथा वायुसेना में एक मामला 2006 में सामने आया। इन मामलों में पाकिस्तान के उच्चायोग कर्मियों को भी लिप्त पाया गया।

वाररूम लीक काण्ड भ्रष्टाचार सम्बधी सबसे महत्त्वपूर्ण घटना है। विंग कमाण्डर एस0एल0 सुर्वे से बरामद पेन ड्राइव के फोरेंसिक विश्लेषण में यह बात सामने आई है कि आरोपियों ने विदेशी एजेंटो को न केवल अपने देश के रक्षा सम्बन्धी खुफिया जानकारी पर आधारित अपनी प्रतिरोधी योजनाओं को भी मुहैया कराया है बल्कि महत्त्वपूर्ण यह है कि इन सूचनाओं को विंग कमाण्डर सुर्वे की पेनड्राइव से नष्ट की गयी फाइलों से प्राप्त किया गया है। भारतीय वायु सेना के अफसर एस0एल0सुर्वे ने खास तौर पर हाल में परमाणु सहयोगी बने अमेरिका, पाकिस्तान और इजराइल समेत विदेशी नौ सेनाओं से जुड़े अति गोपनीय रक्षा आंकड़ों का एक विशाल भण्ड़ार कथित तौर पर विदेशी एजेण्टो को मुहैया कराया। साथ ही देश के अगले बीस सालों की प्रतिरोधी योजनाओं के साथ भी समझौता किया। ये सभी रहस्य सुर्वे के घर से बरामद पेन ड्राइव से प्राप्ति किये गये हैं। जिसके आधार पर उन्हें बर्खास्त कर दिया गया था। हालांकि सुर्वे की पेनड्राइव से 3603 पृष्ठों की विदेशी नौ सेनाओं से सम्बन्धित कई गोपनीय सूचनायें मिली हैं, जिन्हे नष्ट कर दिया गया था लेकिन फोरेंसिक एक्सपर्ट की मदद से इन्हें पुनः प्राप्त कर लिया गया। वाररूम लीककाण्ड का प्रमुख अभियुक्त, एडमिरल अरूण प्रकाश के रिश्तेदार, कमाण्डर रविशंकरण के मुम्बई स्थिति कार्यालय सैक्स ओसनो ग्राफिक प्राइवेट लिमिटेड और गोवा में कथित तौर पर उसके संगठन को चलाने वाली जेनिफर मिर्जा के कार्यालय पर सी0बी0आई0 ने छापे मारे और उनके दस्तावेज बरामद किये थे। इस कार्य में पूर्व नौसेना कमाण्डर कुलभूषण पारासर, वायुसेना के पूर्व विंग कमाण्डर सम्भाजीराव सुर्वे शंकरण, पूर्व नौसेना कमाण्डर विनोद कुमार झाँ और विनोद रॉणा, विजेन्द्र राणा, राजरानी जयसवाल, मुकेश बजाज और विंग कमाण्डर सेवानिवृत्त एस0एल0 कोहली, कश्यप कुमार के खिलाफ सी0बी0आई0 ने मामला दर्ज किया है तथा रविशंकरण के दोस्त अभिषेक वर्मा भी इस कार्य में संलिप्त

पाये गये है। विपक्ष के नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी ने अठ्ठारह हजार करोड़ रूपये का स्कॉर्पीन पनडुब्बी सौदे में दलाली के मामले से जोड़कर वाररूम लीक मामले को व्यक्त किया है। इन सारे तथ्यों को जोड़कर देखने से स्पष्ट हो जाता है कि वाररूम लीक काण्ड में कुछ भ्रष्ट राजनेता एवं सैन्य अफसरों एवं नौकरशाहों का एक अत्यन्त सुनियोजित संगठन था। जिसने राष्ट्र की सुरक्षा को बेंच दिया। इस काण्ड से भारतीय सुरक्षा अति संवेदनशील हो गयी है।

जिस प्रकार पूर्व में मुहम्मद गोरी ने राजा जयचन्द्र को अपने साथ मिलाकर महान पराक्रमी सम्राट पृथ्वीराज चौहान को पराजित कर मुगलों का शासन स्थापित कराया था। उसी प्रकार अंग्रेजों ने भारत पर नियंत्रण करने के लिये देश के विभिन्न राज्यों में फूट डालने और उनमें युद्ध कराने की रणनीति अपनाई थी। इस रणनीति के तहत अंग्रेज युद्ध में किसी एक राजा का साथ देकर दूसरे को हरवा देते थे तथा उसके राज्य पर अधिकार कर लेते थे। शायद उन्ही घटनाओं में वाररूम लीक भी अपना स्थान बना सकती थी लेकिन समय से पहले ही इस घटना का खुलासा हो गया जिससे यह खतरा टल गया लेकिन अभी पता नही कि कितने भेदिये इस तरह के सेना के अन्दर छिपें हो जो 'वाररूमलीक' से भी खतरनाक खेल खेल रहे हों। इस समस्या की जड़ में सेनाओं के नैतिक मूल्यों में होने वाला क्षरण ही है। अतः इसको तत्काल रोकना हमारे लिये अपरिहार्य हो गया है। मात्र सेना का ही नैतिक क्षरण हुआ बल्कि राष्ट्र का नेतृत्व करने वाले जनप्रतिनिधियों जिनका सेना से सीधा सम्पर्क है वे लोग भी नैतिक पतन की सीमायें तोड़ने में पीछे नही हैं।

संसद में प्रस्तुत 'कैग रिपोर्ट' में 2163 करोड़ 9 लाख रूपये के जिन 123 सौदों की जाँच रिपोट में शामिल है उनमें से 35 सौंदों में वित्तीय अनिमितताएं बतायी गयी हैं। रिपोर्ट के अनुसार 1999 में आपरेशन विजय के दौरान सैनिकों के लिए मंगाये गये करोड़ों रूपये के कपड़े हथियार व गोला–बारूद जुलाई 1999 के बाद ही प्राप्त हुये जिससे इनका कोई इस्तेमाल नही हो सका। रिपोर्ट के अनुसार 1762 करोड़ रूपये का साजोसमान तो युद्ध समाप्त होने के लगभग 6 माह बाद जनवरी

2000 में पहुंचा। इतना ही नही कारगिल युद्ध के नाम पर 1606 करोड़ रूपये के साजोसामान के लिए सौंदो पर हस्ताक्षर युद्ध समाप्त होने के बाद ही किये जाने की बात इस रिपोर्ट में कही गयी है। जिन 35 सौंदो में अनिमिततायें पायीं गयीं हैं उनमें ताबूत घोटाला भी सम्मिलित हैं जो निम्नवत है– प्रति ताबूत की कीमत 1.20 लाख रूपये (2500 डालर) और प्रति बाडी बैग की कीमत 85 डालर तय की गयी थी। अमेरिका की *Brootan and Beja* कम्पनी से कुल 1505000 डालर की खरीद की गयी थी लेकिन पता चला कि यह कम्पनी ताबूत बनाती ही नही है। पहली ही खेप में 150 ताबूतों की आपूर्ति की गयी थी जो बेहद घटिया साबित हुई। उसका निर्धारित वजन 18 किग्रा0 होने के बजाय 55 किग्रा0 था। जाँच में पाया गया कि ताबूतों को विल्डिंग पद्धति से तैयार किया गया था, जिसके लीक होने का खतरा था। घटिया ताबूत की आपूर्ति से भारत सरकार को 90 लाख रूपये (18700 डालर) का नुकसान हुआ। ताबूत आपूर्ति करने वाली उस अमेरिकी कम्पनी पर यह भी आरोप है कि उसने सोमालिया में तैनात अमेरिकी सैनिकों को ताबूत 178 डालर में और बाड़ी बैग 27 डालर की दर पर बेंचा था। प्राथमिक जाँच में पाया गया कि जिन संदिग्ध अधिकारियों ने ताबूतों और बाड़ी बैग को उन्होंने नियमों को ताक में रखकर जानबूझ कर ऐसी खरीद की थी। जिसमें सैन्य अफसरों एवं अमेरिकी कम्पनी की स्पष्ट मिलीभगत थी।[7] भारतीय सेना के पूर्व के रक्षा सौदो में घोटाला किये गये। पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय राजीव गाँधी के प्रधानमंत्रित्व काल में रक्षामंत्री रहे श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने अपनी पुस्तक "मंजिल से ज्यादा सफर" में इस बात का रहस्योद्घाटन किया है। एच0डी0डब्ल्यू पनडुब्बी जो जर्मन से स्व0 श्रीमती इन्दिरा गांधी जी के प्रधानमंत्रित्व कार्यकाल में खरीदने के लिये कीमत पर सौदेबाजी हो रही थी। कुछ दिन बाद एक टेलीग्राफ मुझे मिला, जर्मनी में हमारे जो राजदूत थे उनका तार था। उन्होने तार से सूचना दी थी कि जर्मन सरकार का एक सीनियर अफसर दूतावास आया था और वह कह रहा था कि एच0डी0डब्ल्यू पनडुब्बी की कीमत इसलिये नही कम कर सकता है क्योंकि एक भारतीय एजेण्ट को सात प्रतिशत कमीशन देना है। वह तार कूट भाषा में था, वही तार प्रधानमंत्री कार्यालय में भी गया। श्री सिंह ने कहा

कि उसी दिन कैबिनेट की बैठक में इस तार के बारे में प्रधानमंत्री से बात हुई लेकिन वे कुछ बोले नही। बी0पी0 सिंह ने कार्यालय पहुँचकर रक्षा सचिव भटनागर से इस बारे में पूंछ तांछ की उन्होंने बताया कि पिछले सौदे में हिन्दुजा भारतीय एजेण्ट थे। भटनागर ने यह भी बताया कि पिछला सौदा राजीव जी के आने के पहले ही हो चुका था। इस रक्षा सौदे में रक्षामंत्री और प्रधानमंत्री के बीच मतभेद हो गये फलतः रक्षामंत्री ने अपना इस्तीफा देने के का फैसला किया। उनके अनुसार रक्षा सौदे में बिचौलिया होते थे और वे अपना कमीशन लेते थे।[8]

रक्षा सौदों में दलाली रूपी ग्रहण से सैन्य क्षमता पर असर पड़ता जा रहा है। दक्षिण अफ्रीका से डेनेल तोपों का सौदा हुआ था जिससे भारतीय तोपखाने को 1989 में पहली खेप की तोपें मिल जानी थी जिसको पिछली सरकार ने मंजूरी दे दी थी और वर्तमान ने उसे दलाली के आरोप में काली सूची में डाल रखा है यानि अब डेनेल के साथ भारत रक्षा सौदा नही करेगा। इसी प्रकार नौसेना के लिये स्कार्पिन पनडुब्बी खरीदे जाने को अनुमति मिली और फिर रोक लगाई जाने लगी, बाद में प्रधानमंत्री के फ्रांस दौरे के बाद ही उस पर मुहर लग सकी। सेना मुख्यालय के मुताबिक ऐसे तमाम रक्षा सौदे ठंडे बस्ते में पड़े हैं। सूत्रों के मुताबिक पिछले पन्द्रह सालों से इसी तरह के फैसलों से सरकार के ग्रसित होने के कारण सैन्य क्षमता पर विपरीत असर रहा है। सरकार आधुनिक सैन्य उपकरणों से सेना को सम्पन्न कर पाने में पिछड़ती जा रही है। जनरल के0 सुन्दर जी के समय से ही इन्फैन्ट्री को आधुनिक बनाने की योजना थी। सुन्दर जी ने एक अध्ययन भी कराया था जो युद्धक क्षमता बढ़ाने के लिये आक्रमण संचार व्यवस्था और सैनिकों की पहुँच पर केन्द्रित था अध्ययन की सिफारिशों पर 1997 से अमल होना शुरू हुआ लेकिन अभी तक पूरा नही हो पाया।

भारतीय सशस्त्र सेनाओं के कुछ अफसरों में पद और सम्मान की लालसा इस कदर बढ़ गयी कि उन्होंने नैतिकता की सारी सीमाएं ही तोड़ दी हैं। दुनियाँ का सबसे ऊँचा सामरिक स्थल जहां का तापमान शून्य से दो सौ सेन्टीग्रेड लगभग कम

होता है भारत का सियाचिन ग्लेशियर क्षेत्र है जहां पर सरहद की रक्षा के लिये भारतीय सशस्त्र सेना तैनात है। ग्लेशियर क्षेत्र में तैनात गोरखा राइफल के मेजर सुरेन्दर सिंह ने फर्जी मुठभेंड़ दिखाकर दुश्मन के बंकर को नष्ट करते हुये शत्रु के तीन घुसपैठियों को मार डालने तक सारा दृश्य एक वीडियोटेप के जरिये दिखाया है जो बाद में सारे साक्ष्यों द्वारा फर्जी सिद्ध हो जाता है मेजर सिंह ने अपने उच्च अधिकारियों पर यह आरोप भी लगाया है कि यह सारी फर्जी मुडभेड़ इन अधिकारियों के निर्देशानुसार की गयी है। यह उन ईमानदार राष्ट्रभक्त सेना अधिकारियों की हरकतें हैं, जिन पर देश की सुरक्षा का दायित्त्व है।

आज किसी भी देश की सेना में ऐसा भ्रष्टाचार शायद हो जैसा कि हमारे देश की सेना में है। अंग्रेजों के शासनकाल में ब्रिटिश भारतीय सशस्त्र सेना ने 1857 में विद्रोह का विगुल बजा दिया था। जिसका परिणाम कम्पनी शासन का अन्त हो गया था तथा भारत का शासन सीधे ब्रिटेन के हाथों आ गया जिसे उसने अपने प्रतिनिधि (गवर्नर जनरल वाइसराय) के माध्यम से सम्भाला। सैनिकों के विद्रोह के कारण, उनके सम्मान को ठेंस पहुँचाना, धार्मिक भावना को आहत करना तथा उनकी पारिवारिक स्थिति खराब होना और जवानों को राष्ट्रीयता का बोध होना तथा भारत को स्वतंत्र कराने की नैतिक जिम्मेदारी समझना आदि ये कारण थे। सन् 1857 की ब्रिटिश भारतीय सेना तथा स्वतंत्र भारत की 1984 की सेना की तुलना करने पर पता चलता है कि सन् 1857 में देश को स्वतंत्र कराने की एक प्रचण्ड विचारधारा व्याप्त थी। 1984 में पंजाब में जरनैल सिंह भिण्डरवाला एक स्वतंत्र खालिस्तान बनाने की माँग आतंकवादी गतिविधियों के माध्यम से चला रहा था। पंजाबियों की आस्था का केन्द्र अमृतसर का स्वर्णमन्दिर, जिसका केन्द्र बिन्दु था और जो अत्याधुनिक हथियारों गोला बारूद और आतंकवादियों से भरा पड़ा था।[9] भारतीय सशस्त्र सेना जब आतंकवादियों के सफाये के लिये मन्दिर में प्रवेश करती है तब इस बात को लेकर सिख रेजीमेन्ट के अन्दर यह बात घर कर जाती है कि हमारे धर्म तथा धार्मिक स्थल का अपमान हुआ है इस बात को लेकर वे शायद विद्रोही हो जाती है। जैसे सन्

1857 के विद्रोह का तात्कालिक कारण गाय और सुअर के चर्बी का कारतूसों के ऊपर लेप जिसको दाँतों से तोड़कर ही प्रयोग किया जा सकता था। यह बात हिन्दू और मुसलमान दोनो के लिये धर्म विरूद्ध जो 1857 की क्रान्ति का तात्कालिक कारण बना। इसी प्रकार 1984 में स्वर्ण मन्दिर में सेना का प्रवेश ही सिख रेजीमेन्ट के विद्रोह का तात्कालिक कारण था।

पूरे देश में सम्पन्नता और विपन्नता का जो जंग छिड़ा हुआ है जिससे एक इतनी लम्बी चौड़ी खाई का निर्माण हो चुका है जिसको मिटा पाना असम्भव नही तो मुश्किल जरूर है। आज पूरे देश के अन्दर नैतिकता का इतना ह्रास होता जा रहा है कि जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद, धर्मवाद इनका प्रभाव इतना व्यापक हो गया है कि राष्ट्रीयता और राष्ट्र प्रेम की धारा इन छोटे–छोटे विचारखण्डों में वितरित हो गयी है। सेना भी इसी समाज से निकल कर आई है जिसके कारण इसका संस्कार पड़ना सेना में स्वाभाविक है लेकिन इन संस्कारों को परिष्कृत कर उच्च नैतिकता से युक्त कर सेना को देश की रक्षा करने में सामर्थ्यवान बनाना आज प्रत्येक भारतीय का कर्त्तव्य बन गया है। अन्यथा वो दिन दूर नही जब पुनः भारत किसी महाशक्ति के चंगुल में होगा। इस आपा–धापी के कारण सेना के जवान एक गम्भीर परिस्थिति से गुजर रहे हैं जिसके कारण बात–बात पर अपने अधिकारियों तथा साथियों की सामूहिक हत्या कर खुद भी आत्महत्या कर रहे हैं। 1857 में तो बैरकपुर छावनी में मंगल पाण्डे नामक सिपाही ने अपने अधिकारियों की हत्या कर विद्रोह में चिंगारी लगाने का कार्य किया था लेकिन स्वतंत्र भारत की सशस्त्र सेना में पिछले दशक से इन घटनाओं ने तीव्रगति पकड़ ली है; जिसमें लगभग हजारों कोर्टमार्शल किये जा चुके हैं, जिससे स्पष्ट होता जा रहा है कि सेना का नैतिक स्तर कितने तीव्र गति से क्षरण की ओर जा रहा है।

व्यावसायिक दक्षता एवं भारतीय सेना-

भारतीय सेना की व्यावसायिक दक्षता इतनी तीव्र गति से वृद्धि कर रही है कि महाशक्तियों ने अपनी बौखलाहट की वजह से आँखे बन्द कर ली हैं तथा भारत पर अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगा दिये। भारत ने 18 मई 1974 को ही परमाणु परीक्षण कर लिया था लेकिन परमाणु परीक्षणों की पूर्णता 11 एवं 13 मई 1998 को पूर्ण हुई तथा देश ने अपनी सामरिक शक्ति में वृद्धि किया।[10] वास्तव में भारत एक स्वाभिमानी राष्ट्र है क्योंकि भारत ने अमेरिका से अत्याधुनिक कम्प्यूटर का सौदा किया, लेकिन अमेरिका ने कम्प्यूटर देने से इंकार कर दिया, जिससे भारतीय स्वाभिमान को ठेस पहुँची अतः भारत के युवा वैज्ञानिकों ने अमेरिका के कम्प्यूटर से लाख गुना बेहतर क्षमता वाला कम्प्यूटर (सुपर फ्लोसोलर एम.के.–3, पेस, परम 10000, परम अनंत, सी डैक आदि) जिन पर परमाणु परीक्षण सम्भव है। अब भारत को बाह्य परमाणु परीक्षण (भूमिगत) करने की जरूरत नही है।[11]

इसी प्रकार इजराइल से फाल्कन टोही विमान खरीदने की पेशकश की, इजराइल पहले तो तैयार हुआ लेकिन बाद में यह सौदा अधर में पड़ गया। फलतः कानपुर के आई0 आई0 टी0 के दो युवा छात्र वैज्ञानिकों ने भारत के लिये एक ऐसा मानव रहित टोही विमान जो इजराइल के विमान से बेहतर तथा कम लागत पर तैयार कर लिया। सेना में मिग–25 एक ऐसा टोही विमान था जिसने एक लाख तेईस हजार पाँच सौ तेईस फुट की ऊँचाई पर उड़ान भरना जिसका दैनिक कार्य था। जिसके बारे में एअर चीफ मार्शल सत्यप्रकाश त्यागी जी ने बताया कि इन विमानों से हम दुश्मन के इलाके के ऊपर से गुजर सकते थे और इसे वो बस देख सकते थे इसका बिगाड़ कुछ नही सकते थे। आमतौर पर यह विमान हिमालय से तीन गुना ऊँचाई पर उड़ता था। बीस टन वजन के इस विमान में बीस टन ही ईंधन भरा होता था और उड़ान में हिमालय से कन्याकुमारी तक की दूरी नाप दिया करता था। भारत ने आज एंटीमिसाइल क्षमता अर्जित कर ली है। जिसका प्रदर्शन मनमोहन सिंह के सामने 6 मई 2006 को हुआ। जिसका एक दृश्य रात्रि के अंधेरे में

आई0एन0एस0 गोमती से दागी गयी सतह से सतह पर मार करने वाली (P-21) मिसाइल को कुछ सेकेण्डों में आई0एन0एस0 गंगा से दागी गयी बराक मिसाइल ने रास्ते में ही मार गिराया। यह पहला मौका था जब भारतीय नौसेना ने अपनी एंटीमिसाइल क्षमता का खुले तौर पर प्रदर्शन किया और वह भी सीधे प्रधानमंत्री के सामने, देश के एक मात्र विमान वाहक युद्धपोत (आई0एन0एस0 विराट) पर सी0 हैरियट विमान के छः लडाकू इस्क्वाड्रन तैनात हैं। यह विमान दुनियाँ का एकमात्र ऐसा विमान है जिसे रनवे की जरूरत नही पड़ती और हेलीकाप्टर क्षमता से भी युक्त है।[12] बराक मिसाइल को तलवार श्रेणी के तीन युद्धपोतों में लगाया जा चुका है। यह मिसाइल दुश्मन की मिसाइल को सिर्फ हिटसीकिंग की वजह से नही बल्कि रडार प्रणाली से भी लक्षित करके मारती है। यह समुद्र की सतह से बहुत करीब से दुश्मन की मिसाइल को भेंदने जाती है जिससे दुश्मन की एंटीमिसाइल से भी खतरा बहुत कम हो जाता है। रूस की कीलों श्रेणी की सिन्धुराज पनडुब्बी जो साइलेंट किलर के नाम से विख्यात है काले रंग की है, दुश्मन में भय पैदा कर देती है। आई0एन0एस0 मुम्बई, आई0एन0एस0 मैसूर यह दुश्मन की पनडुब्बियों को नष्ट कर देते है। नये मिसाइल कोर्वेट आई0एन0एस0 प्रलय में सेमुलेटर फायरिंग क्षमता से युक्त है। आई0एन0एस0 प्रहार 22 किलर इस्क्वाड्रन मिसाइल कोर्वेट युद्धपोत 450 टन वजनी तथा 200 करोड़ रूपये लागत का है गाइडेट मिसाइल कोर्वेट है, जिस पर सतह से सतह पर मार करने वाली (P-21) मिसाइलों समेत कई अन्य अस्त्र–शस्त्र तैनात है। यह अपनी स्पीड और मारक क्षमता के लिए प्रसिद्ध है। जैसे 1971 के भारत पाक युद्ध में अमेरिका द्वारा निर्मित सेवरजेट विमान जो पाकिस्तान के पास थे हरदृष्टि से नेट विमानों से शक्तिशाली था लेकिन भारत का नेट विमान फुर्तीला था जाबांज पायलेटों ने सेवरजेट विमानों की चितायें आकाश में ही लगा दी थी।

भारत की वायुसेना को अत्यधिक सशक्त बनाने के लिये 16 दिसम्बर 2002 को ग्रुपकैप्टन शौविक राय के नेतृत्त्व में मिडएअर रिफ्यूलिंग इस्क्वाड्रन का गठन किया गया जिसे 78 इस्क्वाड्रन के नाम से जाना जाता है। आई0एल0–78 MKI

विमान 15 हजार फुट से अधिक ऊँचाई पर 500 किलोमीटर प्रति घण्टे की रेस से उडान भरते हुये विशालकाय विमान से एक साथ तीन विमानों में ईंधन भरा जा सकता है। वायु सेना के अग्रिम पंक्ति के तीन लडाकू विमान SU-30, *MIRAJ-2000* और *JAGUWAR* आसमान में इससे ईधन भर सकते है। आई0एल0–78 विमान से ईंधन भरते हुये जगुआर विमान हिन्द महासागर और प्रशान्त महासागर को पार करते हुये अमेरिका पहुंचे इन विमानों ने तय समय सीमा के अन्दर पहुँचकर इस अभ्यास में हिस्सा लेने आये, नाटों देशो को आश्चर्य में डाल दिया। भारत अब दुनियाँ के उन गिने चुने देशों में शामिल हो गया जिनकी वायुसेना के पास एक विमान से दूसरे विमान में ईंधन भरने की क्षमता है। आई0एल0–78 विमान को 15 मई 2002 को वायुसेना में शामिल किया गया। पिछले वर्षो में वायुसेना के पायलटो ने इस तकनीक में महारत हासिल कर विश्व को दिखा दिया है कि वे नई से नई प्रौद्योगिकी को शीघ्रता से अपनाने में विश्व में किसी से कम नही है।

वर्तमान युद्धों में इतनी घातक व रासायनिक गैसों का इस्तेमाल किया जाता है कि सारी सेना बिना युद्ध किये ही नष्ट हो सकती है। इन घातक गैसों का प्रयोग द्वितीय विश्व युद्ध में बहुतायत में हुआ था। जिससे लाखों जवानों को जान से हांथ धोना पड़ा था। आज इनका परिष्कृत स्वरूप अत्यधिक बिनाशक एवं व्यापक है। अब तक इनसे बचने के लिये भारतीय सशस्त्र सेना को आयात पर निर्भर रहना पड़ता था। अहमदाबाद, टेक्सटाइल इंडस्ट्रीज रिसर्ज एसोशियेसन (ATIRA) और इण्डियन डिफेन्स लेबोरेटरी ने रासायनिक युद्ध के दौरान भारतीय सैनिको के बचाव के लिये विशेष प्रकार के कपड़े तैयार किये है।

ए0 टी0 आई0 आर0 रसायन विज्ञान के प्रभारी डा0 एम0एस0रहमान ने बताया कि डिफेन्स लेबोरेटरी इस परियोजना पर पिछले 15 सालों से काम कर रही है। उसने ऐसी विशेष सामग्री तैयार की है जो पाउडर की तरह है व जहरीली गैसों को सोख लेती है। रहमान ने बताया कि रासायनिक युद्ध में सल्फर और मस्टर्ड जैसी घातक गैसों का इस्तेमाल किया जाता है। यह त्वचा से होकर शरीर में प्रवेश करती

है और हड्डियों पर अपना असर डालती है जिससे जवानों की शीघ्र मृत्यु हो जाती है। अनेक अनुसंधानों के बाद सैनिकों के लिये दो स्तर वाले वस्त्र तैयार करने का फैसला किया गया है। बाहरी सतह सेना की वर्दी की तरह डिजाइन की गयी है जो रासायनिक हथियारों के लिये प्रतिरोध का काम करती है और फायरप्रूफ भी है वही कपड़े के अन्दरूनी सतह पर डिफेन्स लैबोरेटरी के विशेष सामग्री से बनाये गये फैब्रिक को लगाया गया है। यह रासायनिक गैंसे इस वर्दी के बाहरी सतह द्वारा निष्प्रभावी नही की जाती उन्हें अन्दरूनी सतह अवशोषित कर लेती है।

सेना की जितनी भी व्यावसायिक दक्षता बढाई जाये लेकिन आने वाले कल के लिये सारी प्रौद्योगिकी पुरानी पड़ जाती है और निरन्तर न्यू प्रौद्योगिकी विकसित होती रहती है। भारत भी इस ओर अग्रसर है भावी युद्ध के लिये माइक्रो हथियार तैयार हो रहे है। वाशिंगटन 8 अगस्त एजेन्सी पेण्टागन द्वारा भविष्य के अन्तरिक्ष युद्ध (स्टारवार) लड़ने के लिये तैयार किये जा रहे हंथियारों को देखने से स्पष्ट हो गया है कि आने वाले दिनों में जो युद्ध लड़े जायेंगे वे इतिहास के युद्धों से पूरी तरह अलग होंगे।

अमेरिकी रक्षा विभाग द्वारा विकसित इस परियोजना की एक खास बात यह है कि इसकी एक महत्त्वपूर्ण कमान अप्रवासी भारतीय आलोकदास के हाथ भी है। (वार फाइटर वन सेटेलाइट) ऐसा ही एक हथियार है जो देखने में आम घरेलू रेफ्रिजरेटर जैसा ही लगता है लेकिन इसमें लगे कैमरों की खासियत यह है यह बारीक से बारीक दो महीन वस्तुओं में भेद कर पाने में सक्षम है। वार फाइटर वन सेटेलाइट के प्रयोग से प्रकाश की किरणों में भेदकर पेड़ों के नीचे छुपे हुये टैंको या उन्हें छुपाने के लिये अलग रंगो में रंगे होने का भी पता लगाया जा सकता है। भविष्य के युद्धो में इस्तेमाल किये जाने वाले इन हथियारों में काइनेटिक एनर्जी राड, माइक्रोवेव गन में इतनी अद्‌भुत क्षमता होगी कि वह अपनी तरंगों से शत्रु के उपग्रह को भूनकर रख देगी और उसे स्थाई रूप से पंगु कर देगी तथा अन्तरिक्ष से चालित लेजर बन्दूकें शामिल हैं। पहला माइक्रोवेव सेटेलाइट का वास्तविक परीक्षण 2008 तक किये जाने

की उम्मीद है। मानव रहित विमान अब एक सच्चाई बन चुके हैं जो 2025 तक एक नई भूमिका में होंगे। मानव रहित विमानों को अन्तरिक्ष से नियंत्रित किया जायेगा और वे अविश्वसनीय गति से युद्ध क्षेत्र में शक्तिशाली हथियारों को गिराने में सक्षम होंगे। उत्तरी बेम्पसायर से रिपब्लिकन सीनेटर बाब स्मिथ ने कहा कि अन्तरिक्ष उनका अगला पड़ाव है। अन्तरिक्ष को हथियारों से युक्त करना पड़ेगा इससे पहले कि कोई और ऐसा करे भारतीय वैज्ञानिकों ने दुनियाँ की सम्पूर्ण चुनौती को स्वीकार करते हुये सर्वश्रेष्ठ तकनीकी व प्रौद्योगिकी देर सबेर विकसित ही कर ली है तथा सेना की शक्ति में निरन्तर बढ़ोत्तरी हो रही है।

यह सत्य है कि युद्ध का प्रथम और अन्तिम हथियार मनुष्य ही है नैतिक मूल्यों में क्षरण सैनिको की व्यावसायिक दक्षता में अत्याधुनिक तकनीक के समावेश के बावजूद भी सेना को मजबूत बनाना एक दुरूह कार्य बन चुका है। जिन सेनाधिकारियों की देखरेख में सेना के जवान पुष्पित और पल्लवित होकर देश की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगा देते है वही सेनाधिकारी इन जवानों के भोजन में ही कटौती कर अपना पेट भरते हैं। इन सभी घटनाओं से स्वतः सिद्ध हो जाता है कि सेना में कितनी तेजी से नैतिक क्षरण होता जा रहा है। आज नैतिक क्षरण के कारण सेनाध्यक्ष के समक्ष बहुत बड़ी चुनौती बनकर यह समस्या सामने खड़ी है एक तरफ सेनाधिकारी अपना रूतबा बढ़ाने के लिये कुछ भी कर जाने के हद तक सोच रहे है। वाररूमलीक, फर्जी मुठभेड़, रक्षा सौदों में दलाली तथा सेना के राशन में घोटाला तथा सेनाधिकारियों का आपसी संघर्ष जवानों द्वारा आत्म हत्यायें जिसका जीता जागता उदाहरण है।

आजकल का समाज जो सामाजिक–आर्थिक बदलाव देख रहा है, उसका असर सेना पर भी पड़ रहा है। आज का सैनिक दस वर्ष पुराने सैनिकों के बजाय ज्यादा बुद्धिमान एवं ज्यादा जागरूक है। उनकी अपने लीडर एवं संस्था से उम्मीदें बहुत हैं। प्रिन्ट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के द्वारा उनको वास्तविक दुनिया देखने का मौका मिलता है जिसकी वजह से उसकी अभिलाषाएं बढ़ने लगी हैं, भले ही उनकी

पहुँच से दूर हो और उन्हे प्राप्त करने के लिए वह अनुचित व्यवहार कर लेता है।[13] देश में भ्रष्टाचार और बेईमानी समाज को अवनति की ओर ले जा रहा है। सेना भी इससे अछूती नही है। भारतीय सशस्त्र सेनाओं के परिवर्तित नैतिक और व्यावसायिक मूल्यों के क्षरण को रोककर सकारात्मक वातावरण के निर्माण की महती आवश्यकता है। जिससे सशस्त्र सेनायें स्वावलम्बन के साथ महाशक्तियों के समक्ष अपने को प्रतिष्ठित कर सके और भारत विश्व बन्धुत्व की भावना को संसार में दृढ़ता के साथ स्थापित कर सकें।

सन्दर्भ

1. दिनमान, 13–19 जनवरी 1980, 7–बहादुर शाह जफर मार्ग नई दिल्ली–110003, पृष्ठ– 25

2. सामाजिक चिंतन, अंक 1–2, 1991, भारतीय सामाजिक विज्ञान अकादमी इलाहाबाद पृष्ठ– 78

3. जाली0 जे0 (सम्पा0), 'मानव धर्म शास्त्र' (कोड ऑफ मनु शीर्षक के अन्तर्गत) लन्दन 1981 पृष्ठ–55

4. वेदप्रकाश वर्मा, 'नीतिशास्त्र के मूल सिद्धान्त' एलाइट पब्लिशर्स लिमिटेड दिल्ली 1977 पृष्ठ–81

5. श्रीमद्भागवत् गीता, '182वां संस्करण' गोविन्द भवन कार्यालय गीता प्रेस गोरखपुर वि0 सम्वत् 2055 अध्याय चार का 7–8 श्लोक, पृष्ठ– 73

6- *India today, November 2006 page-40*

7. प्रतियोगिता दर्पण फरवरी 2002 पृष्ठ–1178

8. डॉ0 राजवीर सिंह, 'देश देशान्तर समसामयिकी' एडवांस पब्लिकेशन इलाहाबाद, 1989 पृष्ठ संख्या– 97, 98

9- *Mainstream, Vol. XXX. No- 33 New Delhi 6-6-1992 Page - 4*

10. सुखदेव प्रसाद, भारत एवं शेष नाभिकीय विश्व, साहित्य भण्डार इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या–75

11. बाबूराम पाण्डेय, 'राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध' प्रकाश बुक डिपो, बरेली 2005 पृष्ठ– 220

12- *Annual Report 1985-86 ministry of defence government of India page-14*

13. कर्नल कमाण्डेट नरेन्द्र सिंह, ''कनिष्ठ नेतृत्व अकादमी (कोर्स प्रैसी) पाठ्यक्रम, 8–जे0एल0 बरेली 2006 पृष्ठ–116

द्वितीय अध्याय

भारतीय सशस्त्र सेनाओं की दक्षता

दोनो विश्व युद्धों के पूर्व सशस्त्र सेनाओं की व्यावसायिक दक्षता-

सोलहवीं शताब्दी में अंग्रेजों में पूर्वी देशों से व्यापार करने की इच्छा बलवती हुई। इंग्लैण्ड के व्यापारियों ने भारत तथा पूर्वी द्वीप समूहों से व्यापार करने के लिये महारानी एलिजावेथ के शासनकाल में (*East India company*) स्थापना की। तत्कालीन भारत के बादशाह अकबर ने अंग्रेजी राजदूत 'सर टामस रो' को संग्रहालय बनाने की अनुमति न देते हुये कहा था– **"वे व्यापार करने के लिये यहाँ आते है मगर शासन करने के लिये यहाँ पंजे जमा जाते हैं।"**[1] लेकिन उसके उत्तराधिकारी इस दूरदर्शिता को भूल बैठे और सन् 1603 ई0 में बादशाह जहाँगीर ने (*East India company*) को सूरत में अपना संग्रहागार बनाने की अनुमति दी; जब कि मद्रास के लिये उन्हें ये सुविधाएं 1640 ई0 में प्राप्त हुयी।

East India Company में चौकीदारों को नियुक्त किया जाता था **चौकीदार सैनिक नहीं कहे जा सकते थे इनकी नियुक्ति कम्पनी की शान बढाने के लिये की जाती थी न कि रक्षा के लिये।** सन् 1662 में इंग्लैण्ड के राजा चार्ल्स द्वितीय ने बम्बई का टापू *East india company* को दे दिया। इस टापू के रक्षक दल को कम्पनी के अन्तर्गत कार्य करने को रख लिया गया। इस (Troops) गौरीसन में "दो गनर, इक्कीस तोपे, पाँच ऑफीसर, एक सौ उन्तालीस नानकमीशण्ड़ अफसर और सैनिक थे। और यहीं से पहली ब्रिटिश कम्पनी सेना का उनकी फैक्ट्रियों की सुरक्षा करने के रुप में प्रादुर्भाव हुआ। स्थानीय सेना से भागे हुये अफगान और अरब के सिपाहियो को अधिक वेतन तथा कम्पनी द्वारा आयोजित लूटमार के सुअवसरों का प्रलोभन देकर *Company army* में भर्ती कर लिया गया और इन भगोड़े जवानो को अनुशासन तथा सैनिक संगठन का प्रशिक्षण देने के लिये ब्रिटेन से शाही सेना का एक दस्ता भेजा गया। इन सभी जवानो को शीघ्र ही एक कम्पनी में संगठित किया गया।

सन् 1683 ई0 में भारतीय अधिकारियों की अधीनता में दो राजपूतों की कम्पनियाँ बम्बई में बनायी गईं। इन्हें अंग्रेजी कम्पनियों के समान संगठित किया और

उसी प्रकार हथियार दिये गये। 36 फुट ब्रिटिश रेजीमेण्ट ने इन्हे प्रशिक्षण दिया ऐसी ही कम्पनियाँ मद्रास तथा कलकत्ता में स्थापित की गयी। कुछ समय बाद ये बम्बई, मद्रास और बंगाल प्रेसीडेन्सी के नाम से विख्यात हुयी। सन् 1696 में *East India company* ने नवाब से आज्ञा लेकर बंगाल में कम्पनी के चारो ओर दीवार बनाने के बहाने फोर्ट–विलियम दुर्ग का निर्माण किया। सन् 1698 ई0 में तीनों की पृथक सेनायें बनीं जो आपस में स्वतंन्त्र थीं तथा प्रत्येक सरकार का प्रेसीडेन्ट ही कमाण्ड का कमाण्डर इन चीफ था। सन् 1741 ई0 में बम्बई प्रेसीडेन्सी की संख्या बढ़ाकर (गौरीसन की सात कम्पनियो) को एक स्थायी रेजीमेण्ट के रुप में संगठित किया गया।

सन् 1748 ई0 में तीनो प्रेसीडेन्सी सेनायें एक कमाण्डर इन चीफ के अन्तर्गत कर दी गयी और मेजर स्ट्रींचर लारेंस इनके सर्वप्रथम कमाण्डर इन चीफ नियुक्त हुए। जिन्हें हम अंग्रेजी शासन काल की भारतीय सेना का जन्मदाता कह सकते है।[2] सन् 1757 में बंगाल में क्लाइव ने सिपाही बटालियन के संगठन की योजना बनायी। बटालियन को यूरोपियन प्रणाली पर अस्त्र–शस्त्र, वर्दी और प्रशिक्षण दिया जाता था और इसकी कमान केन्द्र के अधीनस्थ कुछ अंग्रेज अधिकारियो के हाथ में रहती थी। मद्रास में यह योजना 1759 ई0 में कार्यान्वित हुयी और बम्बई में 1767 ई0 में इसे अपनाया गया।[3] उस समय अधिकांश सेना पैदल ही थी। अश्वारोही सेना शक्तिशाली नही हो पायी थी। कम्पनी का बटालियन में संगठन किया गया और प्रत्येक बटालियन में आठ कम्पनियाँ रखी गयी थीं। प्रथम दो कम्पनियाँ ग्रेनेडियर की थी; जिसमें विशेषतया चुने हुये जवान जिनका कद पाँच फुट तीन इन्च ऊँचा था रखे गये थे। एक वर्ष पश्चात इन बटालियनो में आठ से बढाकर दस कम्पनियाँ कर दी गयीं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी से प्रभावित अथवा इसके अधीनस्थ प्रत्येक रियासत को एक निश्चित सेना रखने की अनुमति दी गयी थी। बड़ी रियासतो के पास बडी से सेना थी, जो कि यूरोपियन प्रणाली पर संगठित की गयी थी और कुछ ने अपनी सेनाओं के प्रशिक्षित तथा कमान के लिये विदेशी अधिकारी रखे हुये थे। दक्षिण में अट्ठारहवी

शताब्दी के अन्त तक ईस्ट इंण्डिया कम्पनी की सेनाओं ने एक अच्छी शक्ति पैदा कर ली। छः नई बटालियने बनाई गयी। सन् 1763 में मद्रास प्रेसीडेन्सी के पास अपनी एक पूर्णतया प्रशिक्षित व संगठित सेना हो गयी थी। दूसरी सेना बंगाल प्रेसीडेन्सी की थी। जिसका संगठन 1757 ई0 मे प्लासी के युद्ध के बाद हुआ। बम्बई प्रेसीडेन्सी की सेना यद्यपि सबसे पहले बनी किन्तु उसका पुनर्गठन सबसे बाद में हुआ क्योंकि अस्साई के युद्ध में पराजित न होने तक यहाँ मराठों की शक्ति बनी रही। मेजर स्ट्रीन्चर लारेन्स ने सेना का तीन भागो में पुनर्गठन किया, शाही दस्ते कम्पनी के यूरोपियन सेना और भारतीय बटालियनो इस पुर्नगठन के अनुसार दोनो प्रकार के यूरोपियन दस्ते विद्रोह अधिनियम के अधीन आ गये। भारतीय दस्ते को अंग्रेजी प्रणाली के अनुसार पुनर्गठित किया गया यूनिट के प्रशासनिक अधिकार और आन्तरिक अर्थव्यवस्था भारतीय कमाण्डेण्ट के हाथ में थी और अंग्रेज कमाण्डिंग अफसर और उसके कर्मचारियो पर यूनिट के प्रशिक्षण एवं सामरिक गतिविधियों का भार था।

सन् 1796 में तीनो प्रेसीडेन्सी सेनाओ का रेजीमेण्ट के आधार पर पुनर्गठन हुआ दो इन्फैण्ट्री बटालियन एक साथ मिलाकर एक कर्नल कमाण्डेण्ट के अधीन कर दी गयीं। प्रत्येक बटालियन में भारतीय सैनिको की संख्या कम कर दी गयी और अंग्रेज अफसरो की संख्या बढ़ाकर 10 से 22 कर दी गयी। सेना में 75 रेजीमेण्ट रखी गयी। घुड़सवार रेजीमेण्टो का भी संगठन किया गया, और तोपखाना को भी बटालियो में विभक्त किया गया। सन् 1798 ई0 मद्रास आर्मी में ही 1800 यूरोपियन तथा 2400 भारतीय जवान थे। बंगाल आर्मी की संख्या इसके बराबर थी जबकि बाम्बे आर्मी की संख्या सबसे छोटी थी जिसमें 1000 भारतीय जवान थे। इरेगुलर फोर्स में पंजाब और हैदराबाद कण्टिनजेण्ट फोर्स, जिसमें घुड़सवार और पैदल सेना की रेजीमेण्ट भी शामिल थी। यह पूर्णतया प्रशिक्षित सेना थी जिसके दस्ते अवध से बम्बई तक फैले हुये थे।

सन् 1814 ई0 में प्रेसीडेन्सी सेनाओं का पुनर्गठन किया गया। जिसमें उच्च जाति के हिन्दू ब्राह्मण और राजपूत रखे गये। मद्रास और बाम्बे आर्मी में ईसाई मुसलमान तथा निम्न जाति के रखे गये। प्रेसीडेन्सी सेनाओ की शक्ति में यूरोपियन घुड़सवार तोपखाना (एक बटालियन तथा चारट्रुप्स), दुर्ग तोपखाना (40 कम्पनियाँ), इंजीनिर्यस (47 कम्पनियाँ), पैदल (6 रेजीमेण्ट), भारतीय नियमित घुड़सवार (21 रेजीमेण्ट) अनियमित घुड़सवार (7 रेजीमेण्ट) और माइनर्ज (2 कोर) पैदल (144 बटालियन) इस सेना पर बड़ा भारी खर्च आता था। जिसके कारण घुड़सवार सेना में सिल्लेदारी प्रथा लागू की गयी। दो बटालियन के रेजीमेण्ट वाली प्रथा समाप्त कर दी गई इस पुर्नगठन के बाद तीनो प्रेसीडेन्सी सेनाओं की स्थिति, बंगाल आर्मी (24000) मद्रास आर्मी (24000) तथा बाम्बे आर्मी में (9000) सैन्यबल हो गया था।[4] कम्पनी अपनी सेनाओं का निरन्तर विस्तार कर रही थी सन् 1824 ई0 बंगाल आर्मी (57000) तथा मद्रास आर्मी में (53000) और (20000)सैनिक बाम्बे आर्मी में बढ़ाकर किये गये थे। इस प्रकार कम्पनी सेना (130000) तक पहुँच गयी थी।[5] सन् 1847 ई0 में सतलज क्षेत्र के लिये एक फ्रण्टियर बिग्रेड बनाई गयी इसके बाद कोर आफ गार्डस का संगठन हुआ सीमा क्षेत्र के लिये पंजाब इरेगुलर फोर्स का निर्माण, जिसमे तीन लाइट फील्ड बैक्ट्री, पाँच घुड़सवार रेजीमेण्ट तथा पाँच रेजीमेण्ट थे। सन् 1850 तक अंग्रेजी साम्राज्य का संगठन पूर्ण हो चुका था। इस प्रकार से खैबर से कोहिमा और कश्मीर से कन्याकुमारी तक भारत की सीमा कम्पनी ध्वज के नीचे आ गयी थी।

बहुत सी लड़ाइयों में कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ने तथा अनेक अवसरों पर कठिनाइयों का इकट्ठा मिल–जुल कर सामना करने के कारण तीनो प्रेसीडेन्सी सेनाओं की यूनिटो मे एक विचित्र एक सूत्रता आ चुकी थी। हार की परिस्थितियों में भी वे हमेशा विजयी रहें। अंग्रेजो ने कम्पनी की सम्पूर्ण सेना को अंग्रेजी सैन्य पद्धति से प्रशिक्षित किया तथा नवीन अस्त्र–शस्त्रो से सुसज्जित किया एवं उच्चकमाण्ड़ तथा कठोर अनुशासन रखा। सन् 1852 में ही सेना के अन्दर आन्तरिक असन्तोष की लहर फैल चुकी थी। कम्पनी ने अल्पवेतन भोगी सैनिको का संसार के चारों कोने में अपने

क्षेत्र विस्तार के लिये मुक्तहस्त से प्रयोग किया। लगभग प्रत्येक युद्धस्थल में भारतीयों को अपनों में ही टक्कर लेनी पड़ी। इस मानसिक विचारधारा तथा अंग्रेजो की भेदनीति ने बंगाल आर्मी के जवानो को सन् 1857 में ई0 विद्रोह के लिये बाध्य कर दिया।

भारत सरकार द्वारा 1918 ई0 में ब्रिटिश सरकार को भेजे गये एक तार से स्पष्ट है।" किसी आन्तरिक विद्रोह के समय ब्रिटिश सेनाओं का प्रभुत्व बनाये रखने के लिये हमने बहुत पहले ही एक नीति बना ली थी। जिसकी मुख्य विशेषता यह थी कि तोपखानो का नियंत्रण अंग्रेजों के हाथ में रहे। अंग्रेजों और भारतीयों को एक निश्चित अनुपात में रखा जाय और स्त्रातजिक स्थलो पर अंग्रेज सेनाओं का अधिकार रहें। ब्रिटिश शासकों का ध्यान जब हिन्दुस्तानी सिपाहियों की ओर गया तो अंग्रेजों ने इसके धार्मिक भावों एवं धार्मिक नियमों की अवहेलना करना शुरू कर दिया। यहाँ तक कि कम्पनी की सेना के अनेक अंग्रेज अफसर खुले तौर पर अपने सिपाहियों के धर्म परिवर्तन के काम में लग गये। बंगाल की पैदल सेना के एक अंग्रेज कमाण्डर ने अपनी सरकारी रिपोर्ट में लिखा हैं–कि **"मै लगातार 28 साल से भारतीय सिपाहियों को ईसाई बनाने की नीति में काम कर रहा हूँ और गैर ईसाई आत्मओं को शैतान से बचाना मेरे फौजी कर्त्तव्य का एक अंग रहा है।"** सन् 1857 ई0 के शुरू मे ही हिन्दुस्तानी सेना के बहुत से कर्नल, सेना को ईसाई बनाने के अत्यन्त दुष्कर काम में लगे हुये पाये गये। इन लोगों ने हिन्दू, मुसलमान अफसरों और सिपाहियों में प्रचार करना और उसमें ईसाई पुस्तकों के अनुवाद और पत्रिकायें बाँटना शुरू कर दिया इस अरसे में ये विचित्र अंग्रेज अफसर जिन्हे मिशनरी कर्नल और पादरी लेफ्टीनेन्ट कहा जाने लगा। हिन्दुस्तानी सिपाहियों की सहनशीलता का नाजायज फायदा उठातें हुये जोरदार शब्दो में निंदा करने एवं मोहम्मद और राम को दगाबाज एवं पक्का धूर्त की संज्ञा देने लगे। इसके अतिरिक्त सिपाहियों के पदोन्नति एवं रिश्वत का लालच भी देकर ईसाई धर्म स्वीकार करने के लिये मजबूर किया जाने लगा। जिससे भारतीय सिपाहियों में बहुत अधिक असन्तोष फैलने लगा।[6] इन्ही सब असन्तोष के कारणो ने

अंग्रेजों के विरूद्ध भारतवासियों के दिलो में एक ऐसी क्रोधाग्नि को जन्म दिया , जो कुछ समय में प्रथम स्वतंन्त्रता संग्राम के रुप में प्रस्फुटित हों गयी।

सन् 1856 ई0 मे अंग्रेज कम्पनी की सैनिक शक्ति मेलविन के अनुसार "कि उस अंग्रेज क्लब में 32000 आदमियों की ताकत उसके पास थी।"[7] एक अन्य सन्दर्भ के अनुसार तोपखाना घुड़सवार और पैदल सैनिक करीब 323823 की संख्या में थे जो कि भिन्नता प्रकट करती है। फिलिप मेलीनेली के अनुसार 289529 की सैनिक शक्ति थी जिसमें 32000 कण्टीजेन्टस सम्मिलित थे। सैन्य संख्या 14000 घुड़सवार सैनिक, 24200 पैदल सैनिक, 2660 घुड़सवार तोपखाना, 4044 पैदल तोपखाना, 6215 कम्पनी सेना के अधिकारी, 9000 कम्पनी की पैदल सेना, 700 मुख्य अधिकारी, 300 सुरक्षा अधिकारी तथा एन0 सी0 स्टाफ, कुल मिलाकर 48519 यूरोपियन अधिकारी एवं सैनिक थे। 275304 भारतीय सैनिक थे जिनमें 2566 सैंपर्स, 4480 पैदल और 440 घुड़सवार तोपखाना, 9450 नियमित 23780 अनियमित घुड़सवार सैनिक, 170000 नियमित तथा 91150 अनियमित पैदल सैनिक तथा 516 बन्दूके और 138 घुड़सवार सम्बद्ध थे।

यह विस्तृत सेना 1350000 वर्गमील राष्ट्र के क्षेत्र मे फैलकर उसकी रक्षा करती थी। यह सेना 150 मिलियन लोगों की रक्षा के लिये थी। इस प्रकार एक सैनिक 456 की आबादी पर पड़ता था किन्तु यह आंकड़ा असामान्य रुप से विभाजित था, जैसे पंजाब के क्षेत्र में 200 व्यक्तियों पर एक सैनिक बंगाल में 3000 लोगो पर एक सैनिक पड़ता था।[8] सेना का जो विवरण ऊपरी आंकड़ो में दिया गया है। चार्ल्स नेपियर के अनुसार– "उसमें पंजाब पुलिस बटालियन सम्मिलित नही था। सिंध और अन्य स्थानों की संगठित पुलिस जिनकी संख्या लगभग 16000 थी तथा जो पूर्णतः प्रशिक्षित एवं शस्त्रों से सुसज्जित थे। उनमे से अधिकतर अनियमित सेनाओ की श्रेणी में आते थे। इसमें एक लाख सामान्य पुलिस और राजस्व के चपरासी भी सम्मिलित थे। बंगाल और आगरा की प्रेसीडेन्सी में एक लाख अट्ठावन हजार सैनिक थे लेकिन वास्तविक संख्या 59000 तथा पंजाब में कुल सैन्य शक्ति 11000 की थी। इसी

अनुपात में 30000 की सैन्य शक्ति मद्रास और बम्बई में रही होगी।[9] अंग्रेजों की अपेक्षा राजपूत सैनिक नेपाल की पहाडियों पर अंग्रेजों की विपरीत परिस्थितियों में सहयोगी साबित हुयी थी । गोरखा सैनिकों ने भी समय–समय पर अंग्रेजों का साथ दिया। इन सब घटनाओं से प्रसन्न होकर भारतीय सैनिकों की वेतनवृद्धि पर अंग्रेजों ने विचार किया। इस समय भारत के राजस्व का आधा भाग लगभग 1100000 रूपये प्रतिवर्ष खर्च होता था। इसे बढाने पर सरकार का दिवालिया होने का भय था। वर्मा और सिक्ख युद्ध के समय अंग्रेजो की सैन्य शक्ति इतनी अधिक थी कि हिन्दुस्तान में उनके सामने कोई एक घन्टे भी नही टिक सकता था। सैनिकों को उन दिनो में छः, बारह अथवा बीस महीनों में वेतन एरियर रुप में देना सामान्य बात थी। उस समय के सैनिक 1857 ई0 के सैनिको से चरित्र में अच्छे थे। इसलिये साम्राज्य की कुछ भागों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुये कम खर्चीले एवं कार्यकुशल सैनिको को बढ़ावा दिया गया। इस प्रकार कार्यकुशलता व आर्थिक व्यवस्था में समन्वय स्थापित करते हुये कमाण्डर इन चीफ की भी नियुक्ति की गयी जो कि सेना का दिशा निर्देश करत था।

अंग्रेजी सेना में दूसरा महत्वपूर्ण सुधार रेजीमेण्ट के उन आदेशो में प्रतिबन्ध लगाना था जिसमें अंग्रेज सैनिक 30 से 40 वर्ष की अवस्था में भी पुरानी योग्यता के आधार पर पुरस्कृत होते थे उनका विचार था कि रेजीमेण्ट अफसरो के अच्छे होने पर सेना अधिक अच्छा कार्य कर सकती है, भले ही सेनाध्यक्ष बुरा हो। उदाहरणार्थ रेजीमेण्ट के व्यक्तिगत कार्यकुशलता के आधार पर ही, 'इनकरमैन' ने विजय हासिल की थी ,जिसमें जरनल की योजना शामिल नही थी। इसी तरह अंग्रेजो ने कई भारतीय युद्ध भी जीते थे। जरनल ऐनसन और जनरल ग्रान्ट की नियुक्ति इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करती है कि कमाण्डर्स को अधिक योग्य एवं अनुभवी होना चाहिये। इन दोंनो ही के पास अपने जनसंख्या का समस्त ज्ञान व शक्ति का उपयोगी प्रयोग करने का उचित ज्ञान था।

बीस वर्ष पहले तोपखाने के सम्बन्ध में एक समिति की रिपोर्ट में कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये गये थे जो इस समय लागू किये गये। जनरल पैट्रिक ग्राण्ट ने पार्लियामेण्ट के सामने अपने बयान में कहा था कि तोपखाने के सम्बन्ध में कुछ वर्ष पूर्व सुझाव दिये गये थे किन्तु नियमित व अनियमित सैनिकों के बीच हड़ताल होने के कारण यह सुझााव क्रियाविन्त नही हो सका जो कि निम्न था—योग्य अधिकारियों का गठन करके उनकी रिपोर्ट पर सलाह कर उसे प्रकाशित करके लागू किया जाय।[10] बाम्बे और मद्रास में योग्यता के आधार पर चयन के नियमों को अपनाया गया। पदाधिकारियों की पदोन्नति योग्यता के आधार पर की गयी। वेतन वृद्धि सात वर्ष बाद करने की व्यवस्था की गयी जिसके परिणामस्वारूप कमाण्डिग अफसरों ने अपनी क्षमता से अधिक काम करना प्रारम्भ किया; किन्तु अनुशासन का अभाव और योग्यमूलवासी सैनिको व अफसरों को इन नियमो से और निराशा ही मिली। मूलवासी सैनिको को यही शिकायत थी कि उनके वर्ग में सबसे उच्चवेतन 1200 रुपया प्रतिमाह है तथा कुछ स्थानों पर यही वेतन 1000 रुपये, कहीं पर 800 रुपये, कहीं पर 600 रुपये तथा कुछ लोगों के लिये 250 रुपये प्रतिमाह ही था। प्रत्येक जिले में ऐसे लोग पाये जा सकते थे जिनका वेतन 250 रुपये ही था। उसी जिले में दो या तीन व्यक्ति भी मिल सकते थे जिनका वेतन 400 से 500 रुपये तथा अपवाद स्वरुप 800 से 1000 रुपये प्रतिमाह भी हुआ करता था। 275000 की सेना में औसत वेतन 300 रुपये प्रतिमाह था जिस वेतन में कोई भी व्यक्ति सुविधापूर्वक नही रह सकता था। उदाहरणस्वरुप हैदराबाद का एक रिसालेदार जो मूलवासी तोपखाने में हुआ करता था उसका वेतन 413 रुपये से घटाकर 300 रुपये कर दिया गया। इसी प्रकार ट्रुप्स के जमादार जिसका वेतन 165 रुपया था उसको घटाकर 150 रुपया कर दिया गया । कालान्तर में एक सूवेदार का नियमित सेना में वेतन 65 रुपये तथा भत्ता 25 रुपये कुल मिलाकर 90 रुपये हुआ करता था। जब पैदल सैनिक मार्च करते थे तो उनको 15 रुपये अधिक मिलता था। जिससे उनके अत्यधिक खर्चे पूरे हुआ करते थे।[11]

भारतीय सेना में सुधार के लिये फ्रान्स की व्यवस्था को (*Oreder of Merit*) लागू किया गया। मूलवासी सेना के सभी रैंक के सिपाही व्यक्तिगत वीरता के आधार पर इस व्यवस्था में शामिल हो सकते थे। यह व्यक्तिगत वीरता के आक्रमण या सुरक्षा दोनो में होती थी, किन्तु इसको प्राप्त करने में काफी बाधायें थी। इस व्यवस्था को तीन भागों में विभक्त किया गया था पहली श्रेणी उसी को प्राप्त होती थी जिसने पहले ही वीरता का प्रदर्शन किया हो। प्रथम श्रेणी का चिन्ह सोने का स्टार था जिसमें (*The Riward of walar*) लिखा होता था, द्वितीय व तृतीय श्रेणी का चिन्ह चाँदी का स्टार था, जिसमे उपर्युक्त प्रथम श्रेणी के शब्द लिखे रहते थे। सभी स्टार में नीले रंग का लाल किनारे वाला 'रिवन' लटकता था। वह व्यक्ति बहुत भाग्यशाली माना जाता था जिसने व्यक्तिगत वीरता का एक अवसर प्राप्त किया हो क्योंकि उसकी व्यक्तिगत वीरता उसके साथी सैनिकों द्वारा स्वीकृत करानी पड़ती थी; तत्पश्चात उसे समिति को सौंपा जाता था इसके बाद ही पैसा स्वीकृत किया जाता था। इसके अतिरिक्त एक अन्य व्यवस्था में रैंक और टाइटिल निर्धारित की जाती थी जिसे (*Order of British India*) कहते थे। यह दो भागों में बंटा था, प्रत्येक में सौ सदस्य हुआ करते थे। पहली श्रेणी में सूबेदार और रिसालेदार थे। जिन्हें सिरदार बहादुर की उपाधि दी जाती थी तथा उनके वेतन में दो रूपये प्रतिदिन के आधार पर वृद्धि की जाती थी। दूसरी श्रेणी में सामान्यत मूलवासी अधिकारी थे जिन्हें बहादुर की उपाधि दी गयी थी और एक रूपया प्रतिदिन की बृद्धि थी। इन लोगों का विशेष चिह्न सोने का स्टार हुआ करता था जिसमें नीचे एक 'रिवन' लटकता था, यद्यपि यह पुरस्कार अच्छी सेवा हेतु दिया जाता था, फिर भी यह अधिकांश बृद्ध व्यक्तियों को ही प्रदान किया जाता था। नियमित पैदल सेना के एक जमादार को 2450 रूपया, हवलदार को 1400 रूपया, नायक को 1200 रूपया, सिपाही (देशी अंग्रेजी सैनिक) को, सात सौ रूपये प्रतिमाह के आधार पर दिया जाता था। सैपर्स और मूलवासी तोपखाना सैनिकों का वेतन पैदल सेना के ही समान था। सिपाहियों को 16 वर्ष की अच्छी सेवा के बाद दो रूपये अतिरिक्त प्रदान किया जाता था इस प्रकार

कुछ प्रलोभन देकर भारतीय मूल के सैनिकों को अंग्रेज अपनी तरफ आकर्षित किये रहते थे।

यद्यपि प्रारम्भ के दिनों में अंग्रेजों को भारतीय मूल सैनिकों पर अधिक निर्भर रहना पड़ता था फिर भी इन मूलवासी सैनिकों को अंग्रेज बहुत परेशान करते थे। इस समय मूलवासी और अंग्रेज दोनो का नैतिक स्तर ठीक नही था इनको ईमानदार बनाने के लिये कई कदम उठाये गये, जिसमें सामान्य भारतीय सैनिको को पर्याप्त वेतन आदि दिया जाना था। पंजाब में पुलिस की छः बटालियनों को मूलवासी अधिकारियों की कमाण्ड में दिया गया। इनमें से कुछ सिक्ख अधिकारी भी थे जो एडवर्ड की सेना में भी काम कर चुके थे। दो या तीन अधिकारी सीमावर्ती क्षेत्रों की सुरक्षा में तैनात थे। इन मूलवासी अधिकारियों ने बहुत ही निष्ठा व जिम्मेदारी से अपना कार्य किया फिर भी इनका वेतन यूरोपियन अधिकारियों के एक चौथाई ही, लगभग 200 रूपये प्रतिमाह कैप्टन जो समान कार्य करता था, का एक तिहाई कर दिया गया। इसी प्रकार समानुपातिक रूप से जमादारों के वेतन में वृद्धि की गयी। एक योजना के अन्तर्गत स्टाफ आफीसर्स का निराकरण (स्टाफ कार्प्स) के रूप में किया गया जिसमें 85 अतिरिक्त अधिकारी रखे गये और 100 लोगो का कैप्टन के रूप में पदोन्नति की गयी थी। साथ ही साथ कलकत्ता और रामगढ़ के बटालियन के सुधार हेतु वहाँ भी सीमावर्ती रेजीमेण्ट की ही तरह अच्छे अधिकारी नियुक्त किये गये तथा अच्छे हथियार दिये गये। सैन्य संगठन के सुधार के लिये सभी को समान अवसर दिये गये जिससे उनकी नैतिकता एवं व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि हुई। आर्डर आफ मेरिट एवं ब्रिटिश इण्डिया को प्रोत्साहित कर इसे यूरोपियन एवं मूलवासी सैनिकों के सभी रैंको हेतु सरल बनाया गया। इसके अतिरिक्त पदकों और सजावट को बढ़ावा दिया गया। सर चार्ल्स नैपियर (जो काफी योग्य अनुभवी सेनाध्यक्ष थे जिसने बंगाल और बम्बई के सैनिकों का युद्ध के समय नेतृत्व किया था) ने घोषणा की थी कि "**मौजूदा सैनिक प्रणाली बहुत ही सूक्ष्मरूप से परीक्षण में सही उतरी है और कुछ हद तक यह सही है।**" सैनिक सेवा में कोई एक रूपता नही थी।

उदाहरणार्थ एक रेजीमेन्ट के लोग अपने सर पर 'कैटेल्स' पहनते थे तो दूसरे रेजीमेण्ट के लोग 'हैट्स' पहनते थे इसी प्रकार कुछ लोग तो अपने सर की सुरक्षा के लिये पगड़ियाँ ही बाँध लिया करते थे।

सन् 1857 ई0 का विद्रोह मुख्यतः सैनिक विद्रोह था जिसमें बंगाल प्रेसीडेन्सी की प्रमुख भूमिका थी जिसमें लगभग एक लाख सैनिक भारत के समुद्रपार जाना धर्म के खिलाफ समझते थे। इस प्रकार बंगाल आर्मी के सैनिक यह समझने लगे कि अंग्रेज हमारे धर्म को नष्ट कर रहे है। सन् 1857 के प्रयास की सफलता और असफलता दोनो ही भारतीय सैनिक के गुण पर प्रकाश डालती है और जो सदैव उद्देश्य की प्राप्ति के लिये अपना जीवन न्योछावर करने को तत्पर रहा है। केवल उसे अपनी स्वामिभक्त की ही आवश्यकता थी जो विद्रोही बने वे अपने देश की स्वतंत्रता के लिये वीरता पूर्वक लड़कर परलोक सिधारे। उनके अन्दर बहादुरी थी, साहस था, आत्मोसर्ग की भावना थी जो सैनिक कम्पनी के साथ रहे और जिनकी विजय हुयी उन्होने अपनी स्वामिभक्ति अनुशासन एवं एक निष्ठा का परिचय दिया। बंगाल की आर्मी में पुराने अफसर भरे हुये थे, अंग्रेज अफसरों को 70 वर्ष तक और भारतीयों को 50 वर्ष तक नौकरी करने की अनुमति थी और इन पुराने अफसरों ने अपना एकाधिकार बना रखा था और अनुशासन नही रख पा रहे थे ।

सन् 1824 के सुधारों ने बहुत सी अनिमितता दूर कर दी थी फिर भी देशी रेजीमेन्टों में अंग्रेज अफसर भारी अनुपात में थे। शाही सेना के अंग्रेज अफसरों में भी भेदभाव रखा जा रहा था जिसकी जानकारी सिपाहियों तक पहुँच गयी जो विद्रोह के लिये एकत्र हो गये। तीनों प्रेसीडेन्सी की सेनायें अलग–अलग थी और अपनी पृथक् सत्ता बनाये हुये थी। कम्पनी का अत्यधिक विस्तार हो चुका था उसके क्षेत्र दूर–दूर तक विखरे हुये थे किन्तु सेना केवल अपने प्रेसीडेन्सी क्षेत्र में ही काम करती थी युद्ध के समय में उनकी युद्ध सेवा के फलस्वरूप उन्हें मुआवजा दिया जाता था, किन्तु जैसे ही सेना अपने भारतीय स्टेशन पर पहुँचती थी उनको दी जाने वाली रियायतें समाप्त कर दी जाती थी। रेजीमेण्टल प्रथा के अनुसार 22 ब्रिटिश अफसर प्रति

बटालियन रेजीमेण्ट के वरिष्ठ अधिकारियों के ऊपर नियुक्त किये गये जिससे भारतीय अफसरों के सम्मान को ठेस पहुंची भारतीय अफसरों को कम्पनी द्वारा नियुक्त होने के कारण सबसे बड़ा आघात सहना पड़ा। दिल्ली का समस्त शस्त्रागार भारतीयों के अधीनता में था जिसकी लगभग 300 तोपें और 20000 राइफलें विद्रोहियों के हाथ लग गयी। बंगाल आर्मी के दस्ते कलकत्ते से पेशावर तक लम्बे मार्ग की सुरक्षा के लिये तैनात थे और उन पर सदैव क्रान्तिकारी और राजनीतिक दबाव पड़ता था। भारतीय सैनिक सदैव धर्म पर अडिग रहे है अर्थात उनका नैतिक स्तर सदैव प्रेरक रहा है। सत्य के लिये महाभारत का युद्ध हुआ, हिन्दुत्व के लिये महाराणा प्रताप ने यातनाएं सही, अल्लाह में विश्वास के लिये मुसलमानों ने स्पेन से आसाम तक विजयालोक और सिक्ख धर्म के लिये गुरूगोविन्द सिंह ने अपने चार बेटों की बलि तक दे दी। धर्म के कारण ही शिवा जी ने केशरिया ध्वज लहराया। हर एक देश में हर एक युद्धस्थल पर भारतीय सैनिक वीरता पूर्वक लड़ता रहा और मरते समय तक उसकी जुबान पर ईश्वर का नाम रहा। धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप के कारण बंगाल आर्मी के उच्च जाति के हिन्दुओं में उस समय असन्तोष पैदा हो रहा था। बंगाल में एक लाख सुशिक्षित ब्राह्मण सैनिक आपस में धार्मिक गुत्थियों से बंधे हुये थे।'' निम्न जाति के अफसरों का अपने ब्राह्मण रंगरूटों से नम्रता से झुककर बात करना एक साधारण बात थी

विद्रोह में केवल बंगाल आर्मी की यूनिटें ही सम्मिलित हुयी जबकि मद्रास आर्मी और बाम्बे आर्मी कम्पनी के प्रति पूर्णतया वफादार रही। बैरकपुर छावनी में मंगल पाण्डे द्वारा अंग्रेज अफसर को गोली मार देने पर 10 मई 1857 को विद्रोह प्रारम्भ हुआ। वन प्रदेश में लगी आग की तरह यह समाचार फैलता चला गया और शीघ्र ही लखनऊ, कानपुर, झांसी, मेरठ स्थिति सैनिक दस्ते इसमें कूद पड़े। जनरल हियरसे और जनरल लारेन्स ने बड़ी चतुराई से उभरती हुयी चिंगारियों को वही दबा दिया। मेरठ छावनी ने विद्रोही होकर दिल्ली पर अधिकार कर लिया तो विद्रोह ने युद्ध का रूप धारण कर लिया। अंग्रेजों ने भारत के चारों कोने से अपनी सेना को

बुला लिया और इंग्लैण्ड ने उन्हें कुमुक पहुँचा दी उनकी दुर्ग सेनाओं ने हर जगह अपनी सामान्य वीरता एवं चतुराई के साथ विद्रोहियों का सामना किया। सर कालिन कैंपवेल ने इंग्लैण्ड से बडी सेना लेकर कलकत्ता और वहां से लखनऊ आकर अधिकार कर लिया। करांची से सिन्ध फोर्स मुल्तान होती हुयी दिल्ली की ओर बढ़ी जहां कि ये जनरल लारेन्स की अधीनता में पंजाब फोर्स से मिल गई। अहमद नगर से दक्षिण फील्ड फोर्स बनाई गयी जो कि इन्दौर में सेन्ट्रल फोर्स से जा मिली। सर ह्यूमरोज की उच्च कमान में इसी सेना ने विद्रोह की अन्तिम लड़ाई लड़ी। अंग्रेजों ने सितम्बर में दिल्ली में आक्रमण किया और सर जान लारेन्स ने 21 सितम्बर 1857 को एक घमासान युद्ध के बाद दिल्ली पर अधिकार कर लिया और बहादुरशाह को पकड़कर देश निकाला दे दिया। जनरल हैवलैक ने लखनऊ पर अधिकार करने के बाद शीघ्र ही कानपुर की ओर कूँच किया और उसने नाना की सेना को परास्त किया।

इन सभी मोर्चो पर भारतीय सैनिक आपस में लड़ रहे थे। भारतीय सैनिक जिस ओर भी लड़ा, बडी बहादुरी से लड़ा और उसने अपनी सहन शक्ति बलिदान और वीरतापूर्वक कर्त्तव्य का पालन कर अपनी श्रेष्ठ नैतिकता एवं व्यावसायिक दक्षता को प्रदर्शित किया। बंगाल आर्मी और विद्रोही सेना में कूटनीतिक योजना का अभाव था। राजनीतिक ध्येय का अभाव, सैनिक ज्ञान का अभाव, कमान एक बद्धता का अभाव, युद्ध सम्बन्धी योजना का अभाव, अच्छे शस्त्रास्त्रों का अभाव, जिसके कारण वे अंग्रेजी सेना से पराजित हो गये। अंग्रेजों ने बहुत सी नई यूनिटें खड़ी कर ली थी और इंग्लैण्ड से सेना बुलाई गयी। अंग्रेजों के पास अच्छे कमाण्डर थे उनके पास आधुनिक हथियार थे और पूर्णतया प्रशिक्षित सेना थी। विद्रोहियों के दुर्ग में घुसने की आदत का पूरा लाभ उठाया। उन्हें वहां घेरे में रखकर अंग्रेजों को नये जवान भर्ती करने तथा उन्हें प्रशिक्षण देने का अच्छा अवसर मिल गया। युद्ध के प्रारम्भ में अंग्रेजों ने दिल्ली को विद्रोह का केन्द्र समझकर अपनी शक्ति उसे दबाने में लगाई। उन्होंने अपनी गतिशीलता का पूरा लाभ उठाया और कभी भी शत्रु को इकट्ठा होने या

तैयारी करने का अवसर नही दिया। एक बार पहली टक्कर को पार करने के बाद वे हमेशा आक्रमण में पहल करते रहे। बंगाल आर्मी के जवानों के साथ व्यवहार में अंग्रेजों ने अपनी भूल अनुभव की और भारत के राजनीतिक तथा सैनिक ढाँचे का पूर्णतया पूनर्गठन किया।

इंग्लैण्ड की महारानी विक्टोरिया ने 1 नवम्बर 1958 को एक घोषणा पत्र द्वारा भारत का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सत्ता समाप्त कर दी गयी। दिल्ली में एक वाइसराय की नियुक्ति हुयी जबकि लन्दन में भारत विषयक मामलों का उत्तरदायित्व एक राज्य सचिव को सौंपा गया। इस प्रकार भारत में अंग्रेजी राज्य की नींव पक्की हो गयी। मुगल बादशाह बहादुर शाह को बन्दी बनाकर वर्मा भेज दिया गया जहां उनका निधन हो गया।

पुनः सेनाओं का पुनर्गठन कियां गया। स्वामिभक्त रहने वाली बंगाल आर्मी की 18 बटालियन को छोडकर शेष सब समाप्त कर दी गयी। सब यूरोपियन सेना अंग्रेजी यूनिटों में ले ली गयी और इस प्रकार शाही और दूसरे यूरोपियन सैनिको में चला आ रहा भेदभाव समाप्त हो गया। इसके बाद अंग्रेजी यूनिटें प्रेसीडेन्सी सेनाओं के अधीन आ गयी। चौदह नई बटालियनें खड़ी की गई और पंजाब अनियमित सेना का नाम बदल कर पंजाब फ्रण्टियर फोर्स कर दिया गया। आठ नई घुड़सवार रेजीमेण्ट खड़ी की गयी। तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं की तोपखाना बटालियन समाप्त कर दी गयी और सहायता के लिये अंग्रेजी तोपखाना विग्रेड रखी गयी। सब अंग्रेज अफसरों को क्वीन्स कमीशन देकर एक नामावली में ले लिया गया। भारतीय अफसरों को वाइसराय कमीशन दिये गये। सारी सेना को खाकी वर्दी दी गयी और यह शाही सेना बन गयी।

सन् 1861 में समस्त सेना की रसद, वेतन, और पेंशन के प्रबन्ध के लिये दो नये विभाग, विभागीय कोर और सैन्य लेखा नियंत्रण विभाग के नाम से बनाये गये तथा सेना में छँटनी हुयी तथा बची हुयी सेना का पुनर्गठन किया गया। उस समय शाही सेना में 80000 सिपाही रह गये थे। बहुत सी भारतीय तोपखानों की यूनिटें

तोड़ दी गयी थी और पैदल सेना की बटालियनें भी कम कर दी गयी थी। घुडसवार सेना सिल्लेदारी प्रणाली का पुनर्गठन होने से अंग्रेज अफसरों की संख्या, बटालियनों में कम हो गयी थी। तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं में स्टाफ फोर्स बनाई गयी। 1879 ई0 में एक संगठन समिति बनायी गयी जिसके फलस्वरूप भारतीय सेना की चार घुड़सवार रेजीमेण्ट और 18 इन्फैन्ट्री रेजीमेण्ट कम की दी गयी तथा घुड़सवार 499 के स्थान पर 500 और इन्फैन्ट्री रेजीमेण्ट में 772 के स्थान पर 832 जवान और अफसर होने निश्चित किये गये। आर्डिनेन्स ट्रान्सपोर्ट और सप्लाई ब्रान्चे मिलाकर एक कर दी गयी पर तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं को वास्तविक रूप से समाप्त करने वाला प्रभावशाली प्रस्ताव सिक्रेटरी आफ स्टेट ने नहीं माना।

सन् 1884 में भारतीय आर्डीनेन्स विभाग की स्थापना हुयी। यह विभाग भारतीय सरकार के अधीन रखा गया। 1885 ई0 में तीन घुड़सवार रेजीमेण्टों को बनाया जाना प्रत्येक रेजीमेण्ट में चौथा स्क्वाड्रन खोलना, पर्वतीय तोपखानों की 6 नई वैक्ट्रियाँ बनाना, बंगाल आर्मी में नौ बटालियन बढ़ाना, सभी बटालियनों में 80 अतिरिक्त जवान रखे जाना। इस प्रकार कुल मिलाकर 20000 जवानों की वृद्धि की स्वीकृति दी गयी। सन् 1886 ई0 में पंजाब फ्रण्टियर फोर्स जो अब तक पंजाब सरकार के अधीन थी, कमाण्डर इन चीफ की अधीनता में आ गयी। सन् 1887 में भारतीय सेना को लम्बी स्नाइडर राइफल दी गयी। ऊपरी व्यय में कटौती करने के लिये संगठित बटालियन प्रथा लागू की गयी। प्रत्येक रेजीमेण्ट का स्थायी सेन्टर हो गया। जिस पर युद्ध के समय एक यूनिट रह सकती थी जो युद्ध में गई दूसरी यूनिटों की खबर रखती थी। रंगरूट पूरे ग्रुप के लिये भर्ती किये जाने के कारण उनमें आपसी सद्‌भावना पैदा होने लगी। वर्मा के लिये 18500 जवानों की वर्मा मिलिट्री पुलिस बनाई गयी। सेना के लिये रिजर्व रखने की पद्धति लागू की गयी जिसे दो भागों में बाँटा गया। (1) कर्मठ रिजर्व कम से कम पांच और अधिक से अधिक बारह वर्ष की सैनिक सेवा वाले जवानों को हर वर्ष एक माह प्रशिक्षण। (2) **गढसेना** 21 वर्ष सैनिक सेवा के पश्चात पेंशन पाने वाले जवानों को हर दूसरे वर्ष

एक माह का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। सन् 1891 ई0 में तीनो प्रेसीडेन्सी सेनाओं में काम करने वाले अंग्रेज अफसरों की एक सेना–सूची बनाई गयी और 1893 ई0 के कानून पास होने से तथा 1895 ई0 में उसे लागू होने पर तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त कर दिया गया और उन्हे चार प्रादेशिक कमाण्डों (बंगाल, मद्रास, बम्बई तथा पंजाब) में बांटा गया। सन् 1899 ई0 में लार्ड कर्जन भारत का वाइसराय बने और 1900 ई0 में भारतीय सेनाओं को 303 इंच की राइफलें दी गयीं। भारतीय सेना में पर्वतीय तथा मैदानी दो प्रकार की तोपखाने की यूनिटें स्थापित की गयी और तोपखाने का प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये एक प्रशिक्षण केन्द्र खोला गया। सन् 1901 ई0 में प्रशासकीय विभाग की आपूर्ति तथा परिवहन कोर के अन्तर्गत संगठित किया गया। लार्ड किचनर को 1904 में भारतीय सेना का पुनर्गठन तथा आधुनिकीकरण करने का दायित्व सौंपा गया उसने चार कमाण्डों के स्थान पर कोर स्तर पर उत्तरी पश्चिमी तथा पूर्वी सेना के अन्तर्गत विभाजित किया। प्रत्येक कोर का कमाण्डर एक लेफ्टीनेन्ट जनरल होता था। सैनिक टुकडियों का उच्चतम संगठन एक डिवीजन माना गया। एक डिवीजन में एक अश्वारोही तथा तीन पैदल विग्रेड के अतिरिक्त कुछ सहायक तथा प्रशासकीय टुकडियाँ होती थी। डिवीजन कमाण्डर का पद मेजर जनरल का होता था। कुल दस डिवीजन थे। प्रत्येक डिवीजन के पास आवस्यक अश्त्र शस्त्र तथा प्रथम प्रशासकीय सेना थी और वे युद्ध में स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकते थे। इस पद्धति के लाभ इस तथ्य में निहित है कि सेना के किसी टुकडी का जनरल युद्ध और शान्ति के समय एक ही रहता है। स्टाफ कोर को समाप्त कर दिया गया तथा सभी अफसर भारतीय सेना के अफसर कहलायें जाने लगे। वर्मा को एक प्रथक् स्वतंत्र कमाण्ड में संगठित किया गया। पंजाब फ्रण्टियर तथा हैदराबाद फ्रण्टियर को भंग करके इनके सैनिकों को विभिन्न सेनाओं में बाँट दिया गया। सेना की टुकड़ियों को फील्ड फोर्स डिवीजनों तथा भारतीय सुरक्षा ट्रुप्स के अन्तर्गत संगठित किया गया। कुछ गैर लडाकू प्रजाति की सैन्य टुकडियों को समाप्त करके बीस गोरखा बटालियनों का संगठन किया गया। सेना की प्रशासनिक व्यवस्था जो मुगलों के समय से चली आ रही थी पूर्णतः अप्रचलित हो चुकी थी। इस

पद्धति के अन्तर्गत सेना में प्रत्येक रेजीमेण्ट को भोजन, कपड़े और यातायात का स्वयं प्रबन्ध करना पड़ता था। इसलिये वे ठेकेदार नियुक्त करते थे। समय–समय पर नित नवीन आविष्कारों के कारण स्त्रातजी एवं सामरिकी पर प्रभाव पड़ते रहे है।[12] उच्च स्तरीय कमाण्ड संगठन में भी बुनियादी परिवर्तन हुये। गर्वनर जनरल की कार्यकारिणी समिति में एक फौजी अफसर सैनिक सदस्य के रूप में लिया जाता था वह तीनों सेनाओं के प्रशासन के लिये उत्तरदायी था। 1895 ई0 में सारी सेना के लिये एक सेनाध्यक्ष की व्यवस्था किये जाने से एक नई समस्या खड़ी हुयी। इस सैनिक सदस्य (जो सेनाध्यक्ष से पद में छोटा होता था) को सेनाध्यक्ष के सुझावों की आलोचना तथा परिवर्तन करने का अधिकार था। इसलिये किचनर ने सुझाव रखा कि सेनाध्यक्ष को ही कार्यकारिणी समिति का सदस्य भी बनाया जाना चाहिये और सेना के मामले में वही सरकार के मुख्य सलाहकार के रूप में कार्य करे। वाइसराय लार्ड कर्जन ने इस्तीफा दे दिया। इस प्रकार सेनाध्यक्ष सरकार में अपना एक स्वतंत्र अस्तित्व कायम करने में सफल हुआ और दुनिया के किसी भी देश के सेनाध्यक्ष से भारत का कमाण्डर इन चीफ अधिक शक्तिशाली और स्वतंत्र हो गया।

सन् 1905 ई0 में सम्राट एडवर्ड सप्तम ने भारतीय सैनिक अफसरों को विशेष भारतीय कमीशन प्रदान किया। इन भारतीय अफसरों को भारतीय सैनिकों की कम्पनी स्तर का टुकडियों का कमाण्ड करने का अधिकार दिया गया। इन अफसरों के प्रशिक्षण के लिये 'देवलाली' में एक स्टाफ कालेज खोला गया जिसे कुछ समय पश्चात क्वेटा में स्थानान्तरित कर दिया गया। सन् 1908 ई0 से ही प्रथम महायुद्ध की आशंका बढ गई जो 1914 ई0 में शुरू हो गया।

सन् 1918 से 1939 तक ब्रिटिश भारतीय सेना की व्यावसायिक दक्षता, प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात भारतीय सेना के संगठन एवं प्रशासन के अनेक दोष सामने आये। आधुनिक युद्ध केवल बहादुरी से नही जीता जाता बल्कि उसके जीतने के लिये अच्छे हथियारों का होना आवश्यक है। भारतीय सेना के पास अच्छे शस्त्रास्त्रों का अभाव था। नभ सेना और यांत्रिक परिवहन भी नही था। तकनीक सैनिकों की भर्ती

करने और प्रशिक्षण के लिये भी कोई उचित संगठन नही था। इस युग में पहले की अपेक्षा संवैधानिक सुधारों द्वारा भारतीयों को अधिक राजनीतिक अधिकार दिये गये लेकिन सेना पर पूर्ण नियंत्रण पहले की भांति ही ब्रिटिश सरकार का रहा। अतः भारतीय सेना की संख्या, साज, सामान व संगठन आदि निश्चित करना ब्रिटिश सरकार के अधिकार क्षेत्र में ही रहा है। "इस अधीनता का परिणाम यह हुआ कि भारतीय सेनाओं की संख्या एवं साज समान सम्बन्धी नीति ब्रिटेन द्वारा अनुमानित अन्तर्राष्ट्रीय सैनिक स्थिति तथा मुख्यतः ब्रिटेन के ही साम्राज्यवादी हितों पर निर्भर रहती थी।" भारतीय राजनीतिक नेता सशस्त्र सेनाओं के बढ़ाने के विरोध में थे, क्योकि उनकी बढ़ोत्तरी से अधिक व्यय होता था और दूसरे उन्हे देश की आजादी का शत्रु समझा जाता था। तीसरा यदि कोई राजनीतिक विरोध न भी होता तो भी सेना के लिये इतना कम रूपया दिया जाता था कि आधुनिक हथियार और युद्ध सामान नही जुटायें जा सकते थे। परिणाम यह हुआ कि "सन् 1939 तक भारतीय सेना द्वारा प्रयोग किये जाने वाले हथियार इतने पुराने ढंग के समझे जाने लगे कि ईराक, अफगानिस्तान जैसे छोटे राष्ट्रों की सेना भी कई दृष्टियों से भारतीय सेना की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ एंव सुसज्जित मानी जाती थी। चौथे युद्ध के उद्योग भारत में विकसित नही हुये थे, इसलिये भारत को हथियारों और युद्ध सामाग्री के लिये ब्रिटेन पर आश्रित रहना पड़ता था। इस आश्रित दशा के कारण सेना के आधुनिकीकरण तथा पुनर्गठन की प्रगति में रूकावट पड़ी। सन् 1921 में भारतीय सेना के दो कार्य निश्चित थे देश की सीमाओं की सुरक्षा और देश में आन्तरिक शान्ति और सुरक्षा बनायें रखना लेकिन यह दोनों कार्य भारतीय सेना की क्षमता से परे थे अतः 1935 ई0 इनके कार्यो का स्वरूप बदल दिया गया कि अब वह किसी भी द्वितीय श्रेणी के देश के द्वारा किये गये आक्रमण से देश की रक्षा करने के लिये जिम्मेदार थी और प्रथम श्रेणी के देश द्वारा आक्रमण करने पर तब तक उसके आक्रमण को रोके रखे जब तक ब्रिटेन से सहायता न मिले। देश में आन्तरिक शान्ति और सुरक्षा का कार्य यथावत रहा। सन् 1933 में ब्रिटिश साम्राज्य के पूर्व में स्थिति उपनिवेशों की रक्षा के लिये हर समय तैयार रहे। वह सेना *Imperial reserve* कहलाती थी। *External defence*

सिद्धान्त का निर्माण हुआ; इस सिद्धान्त के अनुसार भारतीय सेना को भारत के सीमा के बाहर के उपनिवेशों की रक्षा करे ताकि भारत की सुरक्षा और भी दृढ रहे। इस कार्य के लिये नियुक्त सेना *External defence trooks* कहलाती थी ।

यद्यपि सन् 1922 में ही भारत की सेना के तीन मुख्यतया ध्येय स्पष्ट हो चुके थे, किन्तु राजनीतिक संघर्ष तथा आर्थिक क्षेत्र में भारी गिरावट के कारण इन्हें कार्यान्वित करने में बिलम्ब हुआ और सन् 1939 में भारत अपनी प्रतिरक्षा का उत्तरदायित्व सम्भालने के लिये पूर्णतया तैयार नही था।

चेटफील्ड कमेटी ने स्पष्टतया स्वीकार किया कि भारत किसी बड़े युद्ध का सामना करने के लिये तैयार नही था। उस समय खच्चर, सेना का मुख्य परिवहन साधन था और यांत्रिक परिवहन का विकास नही हो पाया था क्योंकि उस समय गाडियाँ विदेशो से आयात करनी पड़ती थी। देश में मोटर उद्योग की स्थापना नही हो पायी थी। मरम्मत के लिये साधनों तथा वर्कशापों का तभी निर्माण प्रारम्भ हुआ था और पेट्रोल फारस की खाडी से आयात किया जाता था, क्योंकि असम और अटक की सप्लाई पर्याप्त नही थी।

आर्डिनेन्स फैक्ट्रियों की संख्या बहुत कम थी और उनकी मशीने भी पुराने प्रचलन की थी। यौद्धिक सामग्री के एकत्रीकरण अथवा सम्भरण तथा तकनीकी जानकारी प्राप्त करने के लिये प्राथमिकतायें निर्धारित नही की गयी थी। भारत की आवश्यकता पूर्ति के लिये भारतीय व्यापारी नाविक बेड़े का अभाव था। उस समय न तो पेट्रोल के परिवहन और भण्डारण रखने के लिये ही सुविधा उपलब्ध थी और न ही पर्याप्त संख्या में रेल के पेट्रोल वाही डिब्बे, जिससे कि उसे देश के दूसरे भागों में भेजा जा सके। प्रत्येक दिशा में पुरातन अभाव विद्यमान था, जिसे दूर करने के लिये कोई निश्चित योजना नही थी। उस समय लगभग समस्त 'केवलरी' घुडसवार ही थी। इन्फैन्ट्री का यन्त्रीकरण नही हो पाया था इसके पास केवल आधा दर्जन हवामार तोप थी जबकि टैंकमार तोपों का नितान्त अभाव था। भारतीय तोपखाना और सिग्नल यूनिटें विकास की प्रारम्भिक अवस्था में थी जबकि तकनीकी यूनिटों की स्थापना का

श्रीगणेश भी नही हुआ था, केवल अप्रैल 1939 में ही इण्डियन आर्मी आर्डिनेन्स कोर ने यान्त्रिक सैन्य सामग्री के अनुरक्षण का उत्तरदायित्व सम्भाल कर वर्कशापों का निर्माण तथा अतिरिक्त पुर्जो के एकत्र करने का कार्य अपने हाथ में लिया था। संक्षेप में उस समय समस्त सेना एक बदलती हुई दशा में थी ।

सन् 1922–23 में सेना का विस्तृत रूप से पुनर्गठन किया गया। इस पुनर्गठन के अन्तर्गत सिल्लेदारी प्रथा को समाप्त कर दिया गया। अश्वारोही सेना रेजीमेन्ट पद्धति के अनुसार संगठित की गयी। अश्वारोही सैनिकों को थोड़ा अन्य साज सामान सरकार की ओर से दिया जाने लगा।[13]

भारतीय पैदल सेना अंग्रेजी पैदल सेना के आदर्श पर आधुनिक ढंग से पुनर्गठित की गयी। इसमें गतिशीलता तथा प्रशिक्षित बटालियन रखी गयी। भारतीय राज्यों द्वारा रखे जाने वाले सैनिक तीन श्रेणियों में संगठित किये गये। प्रथम श्रेणी के सैनिकों को विदेशो में सेवा के लिये हर समय तैयार रहना पड़ता था। पूरक सेनायें (यूनिवर्सिटी ट्रेनिंग कोर तथा इण्डियन टेरिटोरियल फोर्स और आग्जिलियरी फोर्स (इण्डिया) का फिर से संगठन किया गया। सैनिक प्रशिक्षण के लिये संस्थायें सन् 1932 में देहरादून *Indian militory academy* की स्थापना की गयी। यह प्रशिक्षण संस्थायें जनरल हेडक्वाटर के अधीन थी, वही से इनका निर्देशन होता था ।

देहरादून के अतिरिक्त स्टाफ कालेज क्वेटा, आर्मी सिंगनलर स्कूल पूना, रायल टैंक कोर स्कूल अहमदनगर, मशीनगन स्कूल अहमदनगर, इण्डियन आर्मी स्कूल ऑफ एजूकेशनल वैलिंगटन आदि। सन् 1934 में पहला भारतीयों का बैच भारतीय सैन्य अकादमी देहरादून के लिये चुना गया था। इस प्रकार भारत में ही भारतीय अफसरों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध हो गया। इससे पूर्व भारतीय अफसरों का प्रशिक्षण इंग्लैण्ड में होता था ।

सन् 1930 से 33 तक सैन्य संगठन की रचना में अनेक परिवर्तन हुये *Regular forces* में *Covering troops* इसमें 40000 और 50000 के लगभग सैनिक रहते थे। यह

उत्तरी पश्चिमी सीमा की सुरक्षा के लिये सीमान्त पर तैयार रहते थे *The Field army* इसकी संस्था तीन घुड़सवार विग्रेड और कुछ सहायक सेना थी। चौथा डिवीजन और चौथा घुड़सवार विग्रेड रणक्षेत्र में तीन माह के अन्दर सहायता के लिये पहुँच सकता था। यह सेना उत्तरी पश्चिमी सीमान्त पर वाह्य आक्रमण के समय तथा आन्तरिक संकट के समय आसानी से कही भेजी जा सकती थी। यह आवश्यकतानुसार *Covering troops* के *Inforcement* के लिये भेजी जा सकती थी। *Internal security troops* यह आन्तरिक सुरक्षा के लिये नियुक्त रहती थी। *Irregular forces* कई प्रकार की थी जैसे (F.C., A.F.I., I.T.F., M.P., I.S.F.) आदि।

The stat forces भारतीय राज्यों की सेनाओं में दो प्रकार के सैनिक नियुक्त किये जाते थे A जो कि विदेशों के लिये होते थे और B वे सैनिक जो कि राज्य के अन्तर्गत सेवाओं के लिये रहते थे। यह सैनिक संस्था में अधिक होते थे किन्तु इसके पास अश्त्र–शस्त्र प्राचीन ढंग के ही होते थे। यातायात के साधनों का अभाव था। अतः इनमें गतिशीलता नही रहती थी। शस्त्राओं की दृष्टि से भारतीय सेना अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा दुर्बल थी। यद्यपि यांन्त्रिक शक्ति का प्रयोग अन्य राष्ट्रो में सेना के विकास के लिये बहुत किया गया था। स्वचालित गन, टैंक, तोपखाना और फायर शक्ति का विकास हो चुका था किन्तु भारतीय सेना में इसका अभाव ही था। *Indian Navy* भारत में नौसेना का जन्म कम्पनी के उदय के साथ ही हुआ था। सन् 1612 ई0 में *East India Company* के चार सैनिक जहाज सूरत में आये थे। उस समय कम्पनी का जहाजी बेडा "*The Haricuralse East India Company's Marine*" कहलाता था। इसका नाम क्रमशः बदलता रहा (*Indian Marine*) भी था। यद्यपि नौसेना बहुत छोटी थी किन्तु बहुत कार्य कुशल थी। इस नौसेना ने पुर्तगालियों से कई युद्ध किये तथा डचों को समुद्री युद्ध में परास्त किया। 1934 ई0 में *Royal Indian Navy* (रॉयल इण्डियन नेवी) कहलाने लगी। उस समय तक उसका बहुत विकास हो चुका था। भारतीय समुद्र की सुरक्षा का दायित्व *Indian Royal Navy* पर था। भारतवर्ष उसके बदले में *Government of hismejestry* को 100000 *pounds* वार्षिक देता था। सन् 1935

में रायल इण्डियन नेवी के पास सात जहाज थे जिनमें एक हिन्दूस्तान सर्वे का जहाज था और एक पेट्रोल का इस समय कुल 170 अफसर और 1100 नाविक थे। सन् 1938 में जहाजी बेड़ों को लडाकू जहाजों से सुसज्जित कर दिया गया। सन् 1939 ई0 में प्रशिक्षण के लिये संस्थाओं का भी विकास हुआ किन्तु अफसरों के प्रशिक्षण के लिये इंग्लैण्ड में ही भेजा जाता था। सन् 1933 ई0 से पूर्व भारतीय नभ सेना नाम मात्र को ही था। वायु सेना की ओर कोई ध्यान नही दिया गया। अतः वायु सेना की यौद्धिक शक्ति निम्न स्तर की रही। भारतीय वायु सेना "रायल इण्डियन फोर्स" का ही एक अंग थी। यौद्धिक कार्यो के लिये उसके पास साधनों का अभाव था। वायु सेना की प्रगति में आर्थिक संकट तो था ही इसके अतिरिक्त यह असहयोग का युग था। राजनैतिक परिस्थितियां भी वायुसेना की प्रगति में बाधक रही। अप्रैल 1933 में भारतीय वायु सेना का जन्म हुआ। इस वायु सेना के अफसर इंग्लैण्ड में प्रशिक्षण प्राप्त किये हुये थे। सन् 1939 ई0 तक भारतीय वायु सेना के अन्तर्गत पाँच फ्लाइट्स की स्थापना की जा चुकी थी। मद्रास, बम्बई, कलकत्ता, करॉंची और कोचीन में।[14] नैवीगेशन के उचित और पूर्ण विकास न हो पाने के कारण वायु सेना का कार्य बहुत भय युक्त था। अतः नवयुवकों को वायु सेना में कोई आर्कषण नही था। यह भी प्रगति में बाधक ही रही ।

प्रथम विश्व युद्ध में लगभग 10 लाख भारतीय समुद्र पार देशों में युद्ध के लिये गये और अनेकों युद्ध क्षेत्रों में उन्होंने दूसरे राष्ट्रो के सैनिकों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर युद्ध किया जिससे उन्हें अपनी सैनिक योग्यता पर आत्मविश्वास हो गया और युद्ध क्षेत्र के महान बलिदानों से उनमें सर्वोपरि सहयोगी भावनाओं की उत्पत्ति हुयी। भारत को मृतकों और घायलों की विशाल संख्या द्वारा इस युद्ध के लिये भारी मूल्य चुकाना पड़ा। फ्रांस की बर्फीली खाइयों से लेकर ईराक की धूल भरी खाइयों तक बेल्जियम के मैदानों से लेकर अफ्रीका के जंगल और अरब के रेगिस्तान तक विस्तृत क्षेत्र के समस्त भीषण युद्धों में भारतीय सैनिक ने अपनी दृढता और साहस का परिचय दिया। इससे 36669 सैनिकों ने वीरगति पाई और 70000 बन्दी बने।

भारतीय सेना के जवानों ने 16 विक्टोरिया क्रास तथा 19 मिलिट्री क्रास प्राप्त किये।[15] प्रथम विश्व युद्ध से जो सैनिक शिक्षा प्राप्त हुयी वह भविष्य में प्रत्येक सेना के लिये हितकर ही होगा। किसी यौद्धिक उत्तरदायित्व को लेने से पहले पूर्ण प्रबन्ध और पूर्व नियोजन की आवश्यकता है। शक्ति का उचित अंकन आवश्यक है। साधारण तथा हम शत्रु की शक्ति को कम तथा अपनी शक्ति को अधिक मापते रहे है। हमारे पास युद्ध सामग्री सदैव ही अपेक्षाकृत निम्न श्रेणी की रही और यद्यपि हम उच्च मनोबल के कारण हम सफलता प्राप्त करते रहे किन्तु इसके लिये हमे बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पडा। संकट के समय उच्च मनोबल बनाये रखने के लिये अच्छे कमाण्डरों की आवश्यकता रहती है। लम्बे तथा कठिन सैनिक प्रस्थानों के लिये शारीरिक स्वास्थ्य ठीक होना जरूरी है। सन् 1921 में भारत युद्ध स्मारक का शिलान्यास करते हुये (समय) डयूक आफ कन्नौर ने कहा :– ''सघन इतिहास में इधर उधर कुछ कमाण्डरों तथा कुछ बिखरी हुयी घटनाओं का उल्लेख, आज संसार का ध्यान आकृष्ट करने तथा भविष्य के विषय में निश्चित मत व्यक्त करने के लिये अपना निराला अस्तित्व बनाये हुये है। इस मानवीय सहयोग में भारतीय सेना को अपना निर्धारित स्थान प्राप्त है। मित्र राष्ट्रीय प्रभाव ग्रस्त क्षेत्र में दूर–दूर तक विखरी हुयी सेना ने विजय और पराजय के प्रत्येक अवसर पर बडे साहस के साथ अपना उत्तर दायित्व निभाया और अपनी परम्परा के अनुसार सैनिक अनुशासन तथा संयम के साथ अपना कर्तव्य पूरा किया।''[16] प्रथम विश्व युद्ध से स्पष्ट हो गया कि युद्ध में विजय पाने के लिये सेना के मनोबल का अब भी महत्त्वपूर्ण स्थान है जो सदैव रहना आवश्यक है किन्तु आधुनिक युद्ध में हंथियारों की उत्तमता के सामने सर्वोपरि वीरता का भी चारा नही चलता है। सन् 1919 ई0 में लार्ड एशर (कमेटी) ने जिन समस्याओं का अध्ययन किया, सेना के संगठन तथा उसके अंग्रेजी युद्ध कार्यालय से सम्बन्ध के विषय में जानकारी प्राप्त करना तथा उसकी रिपोर्ट देना इस विषय से सम्बन्धित सभी दूसरे पहलुओं अथवा विचारों का अध्ययन और उनके विषय में रिपोर्ट देना, सेना के प्रधान तथा वाइसराय की कार्यकारिणी परिषद के सदस्य होने के नाते कमाण्डर इन चीफ की दुहरी स्थिति का अध्ययन, सन् 1920 के अन्तिम दिनों में यह इस कमेटी ने अपने सुझाव दिये जो

निम्न है—कमाण्ड और सेना विभाजन की उन्नत प्रणाली, लडाकू और सहायक सेनाओं का उचित अनुपात, यूरोपियन प्रणाली के आधार पर भारतीय सेना का संगठन और युद्ध सामाग्री, युद्ध के समय कुमुक पहुंचाने तथा सेना विस्तार के लिये नये विभाग। सन् 1922 में भारतीय सेना के कमाण्डर इन चीफ जनरल रौलिसन थे। उन्होंने भारत को चार कमाण्डो में विभक्त किया और प्रत्येक कमाण्ड एक जनरल आफीसर कमाण्डिंग इन चीफ (जी0ओ0सी0इन0सी0)के अधीन रखी गयी जिसको अपने क्षेत्र की समस्त यूनिटों के प्रशिक्षण तथा प्रशासन का भार सौंपा गया।

उत्तरी कमाण्ड रावल पिण्डी में पेशावर डिस्ट्रिक्ट कोहाट वजीरस्तान डिस्ट्रिक्ट रजमक, रावल पिण्डी , डिस्ट्रिक्ट लाहौर । (2) पूर्वी कमाण्ड नैनीताल मेरठ डिस्ट्रिक्ट देहरादून, लखनऊ डिस्ट्रिक्ट, प्रेसीडेन्सी तथा आसाम कलकत्ता । (3) पश्चिमी इण्डिपेंडेट डिस्ट्रिक्ट क्वेटा बम्बई डिस्ट्रिक्ट बम्बई, दक्षिण डिस्ट्रिक्ट सिकन्दराबाद, मद्रास डिस्ट्रिक्ट बंगलौर। (4) पूना इण्डिपेडेंट विग्रेड एरिया पूना ।

घुड़सवार सेना में सिल्लेदारी प्रथा समाप्त कर दी गयी उस समय की 37 रेजीमेन्टों को जोड़ो में परिणित कर दिया गया तथा उनके इस परिणाम से एक नई रेजीमेन्ट का जन्म हुआ जबकि तीन रेजीमेन्ट 27वीं तथा 24वीं लाइट केवेलरी और गाइड्ज केवेलरी अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रही। इस प्रकार कुल मिलाकर 21 रेजीमेन्ट हो गयी जो जाति तथा धर्म के आधार पर तीन तीन ग्रुपों में बांट दी गयी। पैदल सेना को रेजीमेन्ट प्रथा के अनुसार संगठित की गयी। 1922 ई0 में एक ही वर्ग के सैनिकों की बटालियों को एक साथ संगठित कर एक रेजीमेन्टल सेन्टर से सम्बन्धित कर दिया गया। सेना का आधुनिकीकरण किया गया और रायल एयर फोर्स के फ्लाइट तथा रायल टैंक कोर के एस्क्वाड्रन भारत में तैनात किये गये। यान्त्रिक परिवहन तथा सिग्नल सर्विस चालू की गयी और तोपखाने स्टाफ तथा कमाण्डों का पुनर्गठन किया गया। युद्ध क्षेत्रीय सेना बडे पैमाने पर युद्ध के समय चार इन्फैन्ट्री डिवीजनों तथा पांच कैवेलरी बिग्रेडों को आक्रमण करने वाली सेना का भार सौपा गया। सहायक दस्ते शान्तिकाल में सीमान्त क्षेत्रों की सुरक्षा तथा युद्ध के समय इन्हे

प्रतिरक्षा का भार सौंपा गया आन्तरिक सुरक्षा सेना नागरिक प्रशासन की सहायता यौद्धिक महत्त्वपूर्ण रेलवे तथा महत्त्वपूर्ण स्थानों की सुरक्षा के लिये इन्हें उत्तरदायी बनाया गया। इण्डियन प्रादेशिक सेना में नियमित सेना की सहायता के लिये उन वर्गो की सैनिक भावनाओं की पूर्ति के लिये जो कि नियमित सेना में भर्ती नही हो सकते थे और उन नागरिकों के लिये जो अपने फालतू समय में देश की सेवा करना चाहते थे।

सन् 1920 में भारतीय प्रादेशिक सेना का संगठन किया गया। भारतीयों को इस प्रादेशिक सेना में कमीशन दिये गये। सन् 1924 में भारतीय प्रादेशिक सेना को देश की सुरक्षा के लिये द्वितीय रक्षा पंक्ति के रूप में संगठित करने का निर्णय किया गया। प्रत्येक इन्फैक्ट्री रेजीमेन्ट को प्रादेशिक सेना की एक बटालियन देना निश्चित हुआ जिसे ग्यारहवीं बटालियन की क्रम संख्या दी गयी। ए0एफ0आई0 सेना में हिल–मिल कर काम कर सकने वाले यूरोपियन रखे गये थे जो आपातकाल में अपने क्षेत्र में कार्य करने तथा घरेलू प्रतिरक्षा में सहायता पहुँचाने के लिये उपलब्ध हो सकते थे। ब्रिटिश सेना की नियमित यूनिटों की भांति ही इन बालिण्टयर यूनिटों को संगठित किया गया था और उनके सैनिकों को क्षेत्रीय सुरक्षा में विशेष उद्देश्य से प्रशिक्षण दिया गया था। शस्त्रास्त्र उत्पादन के लिये सन् 1921 की एशर कमेटी के पश्चात एक अलग उत्पादन तथा भरण विभाग खोलने का निश्चय किया गया। मिलिट्री कालेज सैण्डहर्ट में भारतीयों के लिये बीस स्थान सुरक्षित कर दिये गये और सन् 1922 में चुने हुये भारतीय युवकों को सैनिक जीवन में प्रवेश देने के लिये देहरादून में प्रिन्स आफ वेल्स कालेज खोला गया। सन् 1923 में लार्ड रौलिन्सन ने निम्नलिखित यूनिटों को भारतीयकरण के लिये चुना। कैवेलरी (1 वीं लाइट कैवेलरी, 16वीं लाइट कैवेलरी) इन्फैन्ट्री, (2/1 पंजाब रेजीमेण्ट 2/3 मद्रास पायनिर्यज, 5/5 मराठा लाइटइन्फैन्ट्री, 1/7वीं राजपूत रेजीमेण्ट, 1/14 पंजाब रेजीमेण्ट, 4/19 हैदराबाद रेजीमेण्ट)

आठ यूनिटों के भारतीयकरण की इस योजना का भारतीय राष्ट्रवादियों ने बड़ा विरोध किया, जिसके बाद सन् 1929 में लार्ड रीडिंग ने घोषणा की कि विधानसभा के भारतीय सदस्यों सहित एक कमेटी सेना के भारतीय करण के सब पहलुओं का अध्ययन करेगी। प्रिन्स ऑफ वेल्स मिलिट्री कालेज देहरादून (R.A.M.C), 12 मार्च 1922 को देहरादून में (R.A.M.C) का उद्घाटन हुआ जिसके लिए आयु सीमा 19 से बढाकर 20 वर्ष कर दी गयी। यह मिलिट्री कालेज सेना के लिए अधिकारी वर्ग प्रदान करने का मुख्य साधन बन गया। भारत में सेना का नियन्त्रण कमाण्डर इन चीफ के हाथ मे था जो वाइसराय की कार्यकारणी परिषद का सदस्य भी था। सन् 1924 में निर्णय हुआ कि भारत में कमाण्डर इन चीफ और चीफ जनरल की नियुक्ति भारतीय सरकार की सलाह से भारतीय मामलों के सचिव द्वारा नामित प्रत्याशियों में से ब्रिटिश मंत्रिमण्डल करेगा। इग्लैण्ड के युद्ध कार्यालय ने आज्ञा देने के स्थान पर समन्वय स्थापित करने का सिद्धान्त अपनाया। कमाण्डर इन चीफ दि इम्पीरियल जनरल स्टाफ के साथ सीधा पत्र व्यवहार कर सकता था, किन्तु वह भारतीय सरकार को किसी भी उस नीति के लिए उत्तरदायी नहीं बना सकता था, जिसके लिए उसने पहले से ही अपनी स्वीकृति न दे दी हो लार्ड इन्कशेप की छँटनी कमेटी, प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् अर्थ व्यवस्था बडी गम्भीर जिसमें भारत के लिए विशाल सेना का व्यय उठाना दुस्तर था। इस कमेटी ने छँटनी की सिफारिश करते समय मत व्यक्त किया कि आवश्यक सेवाओं को अनुचित रूप से दुर्बल न बनाया जाय और भारतीय सेना में युद्धकालीन विकास के लिए आधुनिक सेना के आवश्यक गुण बनाये रखे जायें।

सन् 1930 के भारी मन्दी के पश्चात् 40000 सैनिकों की छँटनी की गयी जिसमें अग्रेंज और भारतीय आधे-आधे थे। कुछ इन्फैन्ट्री बटालियनों का विघटन तथा तीसरे मद्रास रेजीमेण्ट की समाप्ति, चौथे और नवें ग्रुप का संयुक्तीकरण, पायर्निज का विघटन, कैवेलरी ग्रुपों में ट्रेंनिग रेजीमेण्ट का पुनर्गठन, बीस ब्रिटिश रेजीमेण्ट की ब्रिटिश सिब्बंदी के लिए बदली, भारतीयकरण में तीव्रता लायी गई। स्क्रीन कमेटी ने

पन्द्रह वर्ष में भारतीय सेना के आधे अफसरों के भारतीयकरण की सिफारिश की। तकनीकी सेवाओं से भारतीयों को कमीशन प्रदान करना सैण्डहर्स्ट में भारतीय के लिए स्थलों की संख्या दोगनी करना। आठ युनिटों के भारतीयकरण की योजना को कार्यान्वित न करना। मोण्टेज चेम्सफोर्ड बिल के पास होने के समय से चुने हुए भारतीय को कमीशन के लिए भारतीय सैण्डहर्स्ट की माँग जारी थी स्क्रीन कमेटी ने मिलिट्री कालेज की स्थापना तथा भारतीयकरण अफसरों को सेना के प्रत्येक विभाग में लेने की सिफारिश की।

सन् 1929 में सेना में केवल 9 किंग कमीशन प्राप्त भारतीयकरण अफसर थे जबकि सन् 1934 में जब इण्डियन मिलिट्री एकेडमी, देहरादून के लिए भारतीयों का पहला जत्था चुना गया, यह संख्या 200 तक पहुँच गयी थी। सन् 1932 की पतझड़ में इण्डियन मिलिट्री एकेडमी प्रारम्भ हुई और इसमे प्रतिवर्ष 60 कैडेटों के लिए ढाई वर्ष के प्रशिक्षण का स्थान रखा गया। द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारम्भ से पूर्व भारतीय सेना मे प्रतिवर्ष 70 भारतीय और 120 अग्रेंज अफसरों को कमीशन दिया जाता था। सन् 1933 से इंग्लैण्ड ने डेढ लाख पौंड वार्षिक धनराशि से आधुनीकरण के भारत को देना प्रारम्भ कर दिया। क्षितिज पर द्वितीय विश्व युद्ध के बादल मडराने लगे और भारत के युद्ध मंत्री भारतीय सेना के निम्न स्तर के कारण बुरी तरह परेशान थे। भारत के कमाण्डर इन चीफ ने सेना के आधुनीकरण के लिए एक कमेटी नियुक्ति की जिसमें की भारतीय सेना साम्राज्य के अन्य देशों की सेनाओं के साथ कन्धें से कन्धा भिडाकर अपना उत्तर दायित्व निभा सकें। भारत में सैनिक सामग्री की दशा बडी खतरनाक थी और देश से शस्त्रास्त्र गोलाबारूद तथा दूसरे सैनिक सामान के उत्पादन के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठायें गये थे। आधुनीकरण के लिए भारत को धन की आवश्यकता थी जो इंग्लैण्ड के खजाने से ही प्राप्त हो सकता था। इस समस्या के अध्ययन के लिए चैटफील्ड कमेटी का निर्माण हुआ। सन् 1935 में फील्ड आर्टिलरी का निर्माण किया गया। सन् 1937 में वर्मा को भारत से अलग कर दिया गया और कमान एक स्वतन्त्र डिस्ट्रिक्ट के रूप में सीधे भारत के कमाण्डर इन चीफ

के अधीन आ गई। भारतीय सैनिकों की कार्यविधि बदलकर पाँच वर्ष कर्मठ सेवा (*colour Service*) तथा सात से आठ वर्ष तक रिजर्व में रहना निश्चित हुयी।

देश में आर्डिनेन्स फैक्ट्रियों की संख्या बहुत कम थी और उसकी मशीनें भी पुराने प्रचलन की थी यौद्धिक सामग्री के एकत्रीकरण अथवा सम्भरण अथवा तकनीकी जानकारी प्राप्त करने के लिए प्राथमिकताएं निर्धारित नहीं की गयी थी। भारत की आवश्यकता पूर्ति के लिए भारतीय व्यापारी नाविक बेडे का अभाव था। उस समय न तो पेट्रोल के परिवहन भण्डार रखने के लिए सुविधा उपलब्ध थी और न तो पर्याप्त संख्या में रेल के पेट्रोल वाही डिब्बे, जिसमें कि उसे देश के दूसरे भागों में भेजा जा सके प्रत्येक दिशा में पुरातन अभाव विद्यमान था, जिसे दूर करनें के लिए कोई निश्चित योजना नहीं बनाई गई थी। उस समय लगभग समस्त कैवेलरी घुड़सवार थी इन्फैण्ट्री का यन्त्रीकरण नहीं हो पाया था, इसके पास केवल आधा दर्जन हवामार तोपें थी जबकि टैंक मार तोपों का नितान्त अभाव था। भारतीय तोप खाना और सिंगनल यूनिटे विकास की प्रारम्भिक अवस्था में थी जबकि तकनीकी यूनिटों की स्थापना का श्री गणेश भी नहीं हुआ था अप्रैल 1939 में इण्डियन आर्मी आर्डिनेन्स कोर ने यान्त्रिक सैन्य सामग्री के अनुरक्षण का उत्तरदायित्व सम्भाल कर वर्कशापों का निर्माण तथा अतिरिक्त पुर्जो को एकत्र करने का कार्य अपने हाथ में ले लिया था। नौसेना की दशा भी कोई अच्छी नहीं थी उस समय केवल छः स्लूप तथा एक शीघ्रगामी पोत (*fast boat*) था जबकि चार रक्षक पोत (*Escort Vessels*) और चार ट्रौलरों (*Traulers*) का निर्माण होना था। स्लूपों की तोंपों को समुन्नत करने की योजना बनाई हुयी थी किन्तु प्रशिक्षित नौसेनिकों की सबसे बडी कमी थी, जिसके लिए यद्यपि कई तरह के रिजर्व रखने की अनुमति प्राप्त हो चुकी थी किन्तु उन्हे कार्यान्वित नहीं किया जा सकता था। बम्बई के अतिरिक्त और किसी बन्दरगाह पर प्रतिरक्षा साधन उपलब्ध नहीं थे और बम्बई बन्दरगाह की तोपें भी अप्रचलित हो चुकी थी। वायुसेना अभी अपनी बाल्यावस्था में ही थी। इसमें केवल चार बाम्बर, तीन स्थल सेना के सहायक और एक परिवहन स्क्वाड्रन थे ।

सोलहवीं शताब्दी से अंग्रेजों ने अपना व्यापारिक सफर शुरू किया और अपने नैतिक साहस एवं व्यावसायिक दक्षता के बल पर अपने सारे प्रतिद्वन्द्वियों को पछाड़ता हुआ भारत सहित विश्व के अनेक देशों में व्यापारिक एवं राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित किया। भारत में अंग्रेजों का राजनीतिक एवं व्यापारिक सफलता का कारण भारतीय राजाओं एवं सेनाओं का नैतिक क्षरण एवं व्यावसायिक दक्षता की कमजोरी ही साबित हुई। अंग्रेजो ने भारत में अपने उद्देश्यों के अनुरूप ही भारतीय सेना का संगठन किया एवं उसकी व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि की ।

विश्वयुद्ध काल में ब्रिटिश नेतृत्त्व के अन्तर्गत विकास-

प्रथम विश्व युद्ध के प्रारम्भ में भारतीय सेना की संख्या 155423 थी जो कि 1918 ई0 तक बढकर 573484 हो गयी थी। विश्व युद्ध के समय भारतीय सेना का उत्तरदायित्व–उत्तरी पश्चिमी सीमान्त तथा आन्तरिक सुरक्षा की व्यवस्था करना था। परन्तु युद्ध की परिवर्तित परिस्थितियों में भारतीय सेना को विदेशों में लड़ने के लिए भेजा गया। अतः सेना में नई भर्ती की गयी। जो सेना विदेशों में भेजी गयी उसका उत्तरदायित्व ब्रिटेन सरकार पर था। लेकिन मैसोपोटिया के मुहिम पर जो सेना भेजी गयी वह ब्रिटिश भारतीय सरकार के अधीन थी। इस मुहिम का संचालन बहुत खराब रहा इसका कारण यह था कि कमाण्ड की एकता के सिद्धान्त की अवहेलना की गयी थी इस स्थित को ध्यान में रखते हुये फिर से कमाण्ड में परिवर्तन किया गया।

सन् 1917 ई0 से पूर्व, भारतीय वाइसराय कमीशन अफसर होते थे जिसमें रिसालदार मेजर या सूबेदार पद सर्वोच्च होता था परन्तु 1917 ई0 से भारतीयों को भी सेना में कमीशन दिया गया भारतीय सेना विदेशों मे लड़ने के लिए भेजी गयी लेकिन उनके संगठन, प्रशिक्षण तथा हथियारों में बहुत कमी थी। इनको कभी भी विदेशों में लड़ने के वास्ते संगठित नहीं किया गया था यद्यपि युद्ध के समय सेना की संख्या काफी बढ़ गयी थी और सेना भली भांति सुसज्जित न थी फिर भी जिन जिन संग्रामो में भारतीय सेना को भाग लेना पडा उन सभी क्षेत्रों में यह सेना बड़ी बहादुरी से लड़ी और शत्रु के छक्के छुड़ा दिये। और यह साबित कर दिया कि भारतीय सैनिको में युद्ध लड़ने की असीम क्षमता है। इसीलिए युद्ध में बहुत से रेजीमेण्टों के सैनिको को 21 विक्टोरिया क्रास प्रदान किए गये। युद्ध प्रारम्भ होने से कई वर्ष पूर्व, लार्ड किचनर के समय में सन् 1903 के एक एक्ट के अनुसार भारतीय सेना का उत्तरदायित्व बाह्य आक्रमण से पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त की प्रतिरक्षा तथा भारत की आन्तरिक सुरक्षा करने का निश्चित किया गया था। सन् 1908 में भारत की सशस्त्र सेना को दो–उत्तरी तथा दक्षिणी सेनाओं में संगठित किया गया। लन्दन की शाही

प्रतिरक्षा कमेटी ने मध्य पूर्वी देशों में सेना के एकत्रीकरण और अफ्रीका के युद्धों का भार भी भारतीय कमान को सौंप दिया गया भारत की प्रतिरक्षा के लिए मुख्य सेना पर होने वाला व्यय भारतीय खजाने से जाता था, जबकि समुद्र पार देशों में ब्रिटिश सम्राज्य के लिए लड़ने वाले दस्तों के लिए इंग्लैण्ड व्यय पूर्ति करता था। 1 अगस्त 1914 को भारतीय सेना की कुल संख्या 155423 लाख थी। जो युद्धक्षेत्रीय सेना और युद्ध के लिए सहायक सेना में इस प्रकार विभाजित थी, सहायक सेना पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में यौद्धिक महत्वर्पूण क्षेत्रों तथा संचार मार्गों की प्रतिरक्षा के लिए निम्न प्रकार सेनाओं का विवरण किया गया–लेन्दीकोटल ब्रिगेड, पेशावर ब्रिगेड, नौशेरा ब्रिगेड, कोहाट ब्रिगेड, थल ब्रिगेड ,बन्नू ब्रिगेड, रजमाक ब्रिगेड, वाना ब्रिगेड।

समुद्र पर युद्ध सेवा के लिए भर्ती के समय सैनिक संगठन के ढाँचे में प्रशासनिक संगठनात्मक एवं शस्त्रास्त्र सम्बन्धी अनेको दुर्बलतायें सामने आयी। समुद्रपार सेवा के लिए सेना प्रथकतया निर्धारित कर संगठित नहीं की गई थी। जिसमे उस समय इस कार्य के लिए कोई भी सज्जित, संगठित एवं प्रशिक्षित सेना नहीं थी। समुद्र पार युद्ध सेवा के लिए जाने पर प्रत्येक युनिट अपनी एक टुकड़ी पीछे डिपों में छोड़ जाती थी। जिस पर उसके पीछे रहने वाले रिकार्ड की देखभाल तथा नये भर्ती होने वाले सैनिकों के प्रशिक्षण का भार होता था। यह तरीका बड़ा खर्चीला और कठिन था क्योंकि समस्त देश में अनेक डिपों खोल दिये गये थे युद्ध क्षेत्र में डिवीजन सबसे बड़ा संगठन था, जिसके कारण आर्मी हेडक्वार्टज का विभिन्न युद्ध क्षेत्रों में लगे डिवीजनों से सीधा सम्पर्क रखना पडता था, जो कि बड़ा दुस्तर कार्य था और पूर्णतयाः कुशल नहीं कहा जा सकता था। स्वंय डिवीजनों पर भारी प्रशासनिक उत्तरदायित्व था और डिवीजन कमाण्डर के पास अधीनस्थ फार्मेशनों के निरीक्षण तथा प्रशिक्षण के बहुत थोड़ा समय था। भारतीय सेना के शस्त्रों की अपूर्णता और दुर्बलता सामने आयी जबकि इसे शत्रु की गोलाबारी का शिकार होना पड़ा। इससे भारतीय सेना को बहुत बडा मूल्य चुकाना पड़ा इस त्रुटि को दूर करना आवश्यक था। घुडसवार सेना की सिल्लेदारी प्रथा त्रुटि पूर्ण सिद्ध हुयी क्योंकि यह

नियमित रूप से नये जवान प्राप्त करने में असफल रही। भारत में आन्तरिक व्यवस्था के लिए रखी गई शाही सेवा सेना के डिवीजन समुद्रपार के युद्ध क्षेत्र में जाने पर अपनी कोई उच्चतर कमान यहां न छोड़ गये, जिस रिक्त स्थान की पूर्ति करनी थी। सहायक विभाग आवश्यकता की पूर्ति के लिए अपर्याप्त थे। डिविजन के साथ रहने वाला तोपखाना युद्ध क्षेत्र के लिये न तो पर्याप्त ही था और न ही उतना शक्तिशाली और भारी तोपखाना युद्ध के लिये पुराना और अप्रचलित हो चुका था। सब शस्त्रास्त्र और युद्ध सामग्री इंग्लैण्ड से निर्यात की जाती थी जिसका भारी मूल्य चुकाना पड़ता था। अंग्रजी शासन द्वारा दिये गये शस्त्रास्त्र और युद्ध सामाग्री केवल उस सीमित मात्रा में उपलब्ध थे जो न तो संख्या में पर्याप्त ही थे और न ही प्रयोग में उतने सफल थे। भारत के संसाधनों का विकास नही किया गया था और शक्तिशाली शत्रु से उलझे होने के कारण इंग्लैण्ड के लिये भारत की विकसित सेना के लिये पर्याप्त मात्रा में अच्छे हथियार देना असम्भव था। सेना के विस्तार के लिये कोई निश्चित योजना नही थी और यह कार्य आन्तरिक सुरक्षा के लिये नियुक्त युनिटों से जवान लेकर किया गया था। चुने हुये कर्मचारियों की तकनीकी और प्रशासनिक सेवाओं के लिये भी बदली की गई थी, जिनके लिये शान्ति काल में कोई व्यवस्था नही थी। इससे सेना की संख्या और युद्ध कुशलता पर बुरा प्रभाव पड़ा। 8 अगस्त 1914 को 3 लाहौर डिवीजन 7 मेरठ डिवीजन को संगठित कर युद्ध मोर्चे पर भेजा गया जो 26 सितम्बर 1914 को मोर्सेलज में जा उतरे। मेरठ डिवीजन का गठन किया जा रहा था, जनरल विलकोक्स की अधीनता में लाहौर डिवीजन, 4 सिकन्दराबाद कैवेलरी ब्रिगेड के साथ अक्टूबर 1914 में मोर्चे पर पहुँच गया। उस परिस्थिति में जिसमें जर्मनी की मार काट रोकने के लिये भारतीय सेना युद्ध में सम्मिलित हुयी, रौलिनसन ने रोचक वर्णन करते हुये लिखा है, "वे भारतीय सैनिक जिन्हें खाइयों के युद्ध का अभ्यास नही था, जो भारी विस्फोट तथा भीषण गोलाबारी के आदी नही थे, और जिन्हे हवाई जहाजों की उपस्थिति का ज्ञान नही था, तथा जिनके पास पूरी तरह गर्म कपड़े का अभाव था, बिना किसी पूर्व सूचना के ही अपने गर्म प्रदेश से एक दूसरे अंजान देश में शीत के भयंकर प्रकोप का खाइयों में सामना

करने के लिये भेज दिये गये, जहाँ उन्हें उस संघर्ष से जूझना था, जिससे उनका कोई सम्बन्ध नही था और उन मनुष्यों से लडना था जिन्हें न तो उन्होंने कभी देखा था और न कभी जिसका नाम सुना था। फ्रांस में भारतीय सैनिकों की सफलता का मूल्यांकन करते समय इन तथ्यों को ध्यान में रखना अत्यावश्यक है।''

प्रत्येक भारतीय रियासत अपने यहाँ शाही सेवा के लिये कुछ जत्थे अपनी सेना में रखती थी जो युद्ध प्रारम्भ होने पर इंग्लैण्ड को दे दिये गये। इस प्रकार के लगभग 20000 सैनिकों ने संसार के विभिन्न भागों में युद्ध में भाग लिया। केवेलरी की पन्द्रह रेजीमेण्टों, इन्फैक्ट्री की तेरह बटालियनों, तीन ऊँट सवार बटालियनों, दो तोपखानों की वैक्ट्रियों तथा बहुत सी ट्रान्सपोर्ट कम्पनियों ने भारतीय सेना के साथ युद्ध में अपना शौर्य प्रदर्शित किया। इन सेनाओं का खर्चा राजाओं द्वारा रियासती खजाने से दिया जाता था। इस भीषण नरसंहार में भारतीय सैनिकों ने **फ्रांस, मिश्र, तुर्की, फिलिस्तीन, फारस, इराक और यूनान** में अनेकों युद्धो में भाग लिया। जहाँ कही भी उन्होंने युद्ध में भाग लिया, उन्होंने अपनी परम्परागत बीरता और कर्तव्य परायणता का परिचय दिया जिससे कि उनकी गिनती विश्व के सर्वोत्तम सैनिकों में हो गयी। उन्होंने शत्रुओं से आदर प्राप्त किया और मित्रों से प्रशंसा पाई। बहुत से देशों के सैनिकों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर युद्ध करने से उनमें महान सैनिक तत्व भर गये जिसने उनके देश की प्रतिष्ठा को द्विगुणित कर दिया। प्लेण्डर के शीत एवं दलदले प्रदेश में, मेसोपोटामिया की तपन में और वास्तव में प्रत्येक देश में जहां कि ब्रिटिश साम्राज्य के सैनिक लड़े और रक्त बहाया, भारत माँ के लाडलों की सहनशीलता और वीरता की अमिट गाथा एक ऐसी धरोहर है जिसे उसकी आने वाली पीढियाँ संसार की अपार धनराशि से भी अधिक मूल्यवान खजाने के रूप में सम्भाल कर रखती रहेगी। भारतीय सैनिकों द्वारा जबरजस्त शौर्य प्रदर्शन की पृष्टभूमि में इनकी उच्च्य नैतिकता एवं व्यावसायिक कुशलता ही थी जिसके कारण आज सम्पूर्ण विश्व में एक कीर्तिस्तम्भ के रूप में उनका यश चमक रहा है।

सन् 1914 ई0 पैदल सेना युद्ध में लड़ने वाली सेना सबसे प्रधान अंग थी। राइफल और संगीने ही पैदल सेना के प्रधान अंग थे, परन्तु उन्होंने अभी तक स्वचालित हथियारों का महत्व नही समझा था। साथ ही साथ प्रत्येक बटालियन में दो मशीनगनें भी थी। इन हथियारों का उपयोग तो केवल सहायक फायर के रूप में किन्ही विशेष अवसरों पर किया जाता था। इस समय तक पैदल सेना पूर्ण रूपेण संगीनों और रायफलों पर भरोसा करती थी। उसकी इस प्रवृत्ति का प्रभाव अच्छा नही हुआ। शत्रु से प्रथम मुडभेड होने पर ही पैदल सेना को अपार हानि हो जाती थी और उसे कोई विशेष लाभ नही हो पाता था। पैदल सेना की इस क्षति को देखकर उनके शस्त्रास्त्रों को बढाने एवं युद्ध के नवीन तरीकों को अपनाने का प्रयत्न किया गया। स्वचालित शस्त्रास्त्रों की मात्रा बहुत अधिक बढ़ा दी गयी और हथगोलों, छोटी तोपों और रायफल से फेंके जाने वाले गोलो का प्रयोग किया जाने लगा, परन्तु ये सुधार उस अभाव को पूर्ण नही कर सके जो पहले था। साधनों में वृद्धि कर देने के अतिरिक्त और कोई विशेष परिवर्तन नही किया गया। यद्यपि प्रथम महायुद्ध में पैदल सेना को सेना की रीढ समझा जाता था और अन्त में भी उन्हें वही महत्त्व दिया गया।

डोनैल्डपोर्टट के विचारानुसार मित्र राष्ट्रो की बटालियनों की संरचना युद्ध के अन्तिम समय सन् 1918 ई0 में पलायन करती हुयी जर्मन सेनाओं का पीछा करते हुये भी वैसी ही थी जैसी 22 अगस्त 1914 को थी। पहले की ही तरह पैदल सेना के पास प्रत्येक बटालियन में 1000 संगीने थी और इनकी सहायता के लिये घोड़ों की एक बड़ी संख्या यातायात की सुविधा के लिये दी गयी थी। अन्त में होने वाला महत्त्वपूर्ण एक ही परिवर्तन था कि प्रत्येक बटालियन को उसकी फायर पावर बढाने के लिये बृहद संख्या में स्वचालित हथियार दे दिये गये। पैदल सेना की सहायता के लिये जिन साधनों में वृद्धि की गयी थी वह थी मोर्टर मशीनगने एवं अधिक और भारी तोपखाना पद्धतियों में सुधार। इन परिवर्तनों ने पैदल सेना को अपनी युद्ध पद्धति में परिवर्तन करने के लिये प्रेरणा दी अब पैदल सेना कांटेदार तारों द्वारा रूकावट कर

और उनके पीछे मोर्चा खोदकर प्रतिरक्षा स्थिति अपनाने लगी। ऐसी स्थितियों को तोड़ने के लिये तोपखाने का प्रयोग आवश्यक था। अतः तोपखाने का प्रयोग किया जाने लगा। पहले अनेक गोले बरसायें जाने पर पदादि सेना आगे बढती थी। अतः तोपो का आकार बढा परन्तु शत्रु की सुरक्षात्मक स्थितियों के सम्मुख आगे बढ़ना कठिन था। पैदल सेना पूर्ण रूप से तोपखाने पर आश्रित हो गयी थी।

सन् 1917 में पैदल सेना के साथ टैंको का भी प्रयोग होना प्रारम्भ हो गया किन्तु इन टैंको का प्रयोग युद्ध में पूर्ण कुशलता के साथ नही किया जा सका। परन्तु फिर टैंको के अविष्कार का इतना प्रभाव हुआ कि जर्मनी को अपनी सुरक्षात्मक स्थिति में परिवर्तन करने पड़े और सर्वप्रथम जर्मनी द्वारा 1915 ई0 में एक नवीन शस्त्र का प्रयोग किया गया जो कि विषैली गैस थी।[17] सेनाओं ने भी इस युद्ध में बहुत विकास किया। चिकित्सा के क्षेत्र में भी उन्नति हुयी। यातायात के तीव्रगामी साधनों का विकास हुआ। इंजीनियरिंग ने भी उन्नति की। अतः युद्ध क्षेत्र में विशाल सेनाओं का रखना कठिन था और अब उचित रूप से सैन्य संगठन और प्रशिक्षण की आवश्यकता का अनुभव किया जाने लगा। वायु सेना ने भी विकास प्रारम्भ कर दिया। रेडियों के आविष्कार ने पारस्परिक सहयोग को बढ़ाया। इस प्रकार पैदल सेना अन्य सेनाओं की सहायता टैंको और तोपखानों से अपना खोया हुआ महत्व फिर से प्राप्त करने लगी।

ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा जापान तेजी से भौतिक (औद्योगिक) सभ्यता के मार्ग पर प्रगति करते जा रहे थे। उनकी आर्थिक, व्यापारिक, औद्योगिक तथा साम्राज्यवादी उपनिवेशिक महत्त्वाकांक्षायें आपस में टकराने लगी थी। इस टकराव के फलस्वरूप यूरोप राजनीतिक रूप से दो सैन्य गुटों में बंट गया था। एक ओर थे मित्र राष्ट्र– ब्रिटेन, फ्रांस, रूस इत्यादि तथा दूसरी ओर केन्द्रीय शक्तियाँ–जर्मनी, इटली, तुर्की तथा आस्ट्रिया, हंगरी इत्यादि। भारत ब्रिटेन का उपनिवेशिक राज्य था। अतः भारतीय सेना ने प्रथम विश्वयुद्ध में खुलकर भाग लिया। लेकिन उस समय विश्व की सर्वश्रेष्ठ स्थल सेना, विशाल मात्रा में बढ़ी दौलत, उच्चकोटि के उत्पादनों को विश्व भर में ले जाने के लिये तेजी से बढ़ते व्यापारिक

जहाजी बेड़े के होते हुये भी जर्मनी का मूड (1870) की उपलब्धियों के भाग्य के प्रति चिन्ता तथा अपनी सुरक्षा के प्रति चिंतित था।[18] प्रथम विश्वयुद्ध में अनेकों प्रकार के नवीन अश्त्र शस्त्रों का निर्माण तथा प्रयोग हुआ जिससे स्त्रातजी एवं सामरिकी में विशेष परितर्वन हुये। मशीनगन, फील्ड तोपखाना, शक्तिशाली शस्त्र बन गये थे। यूरोपीय सेनाओं का संगठन व आक्रमण पद्धति राइफल पर ही आधारित थे। यदि युद्धरत राष्ट्रो में से एक ने भी इस तथ्य को समझ लिया होता और अपनी सेनाओं का संगठन व समरतंत्र, तोप तथा मशीनगन के गुणों के आधार पर संशोधित कर लिया होता तो शायद उनसे शत्रु को क्षत–विक्षत करने में सफलता प्राप्त कर ली होती। अगस्त 1914 का जर्मन आक्रमण तो निःसंदेह सफलता प्राप्त कर लेता।[19]

प्रथम विश्व युद्ध में विषाक्त गैसों का प्रयोग सर्वप्रथम जर्मनी ने 1915 में वाइप्रेस की लड़ाई में किया। जर्मनी ने यह कार्य परीक्षण के रूप में किया जब वायु की दिशा भिन्न राष्ट्रों की रक्षा रेखा की ओर थी, सिलिण्डरों द्वारा विषाक्त गैस मुक्त कर दी गयी। यह गैस आक्रमण इतना विस्मयकारी था कि उसने उनकी आशा से भी अधिक सफलता प्राप्त की, फलस्वरूप वे सफलता से लाभ नही उठा पाये क्योंकि वे ऐसा करने के लिये पहले से तैयार नही थे।[20] यदि यह आक्रमण पूरे मन से व पूरी तैयारी के साथ किया जाता तो मुमकिन है कि इससे युद्ध का रूख ही बदल जाता। मशीनगन तथा संगीन से सुसज्जित राइफल, पैदल सेना के प्रमुख शस्त्र थे। पैदल सेना का मूल शस्त्र राइफल थी परन्तु साधारणतया प्रत्येक बटालियन को दो–दो मशीनगन भी दी गयी थी। जैसे–जैसे आक्रमणों को विफल बनाने की दृष्टि से मशीनगन की उपयोगिता बढ़ती गई उसकी संख्या भी बढी। विभिन्न प्रकार की मशीनगन बनाई गई। भार की दृष्टि से हल्की मशीनगन मार की दूरी 500 गज, मध्यम मशीनगन मार की दूरी 1600 गज तक तथा भारी मशीनगनों का निर्माण किया गया। मशीनगन की उपयोगिता शक्ति प्रदान करने वाले शस्त्र के रूप में ही प्रकाशित हो सकी। आक्रमण विश्वयुद्ध के प्रारम्भ से अन्त तक राइफल पर ही आधारित रहे। राइफल मशीनगन के अतिरिक्त हथगोले, मशीन कारवाइन, पिस्टल इत्यादि भी पैदल

सैनिक द्वारा प्रयोग किये गये। तोपखाना की उपयोगिता दोनो पक्षों द्वारा भली प्रकार समझी गई। तोपखाना किलेबन्दी अथवा घेरेबन्दी की भूमिका से हटकर मैदानी युद्ध की महत्वपूर्ण भूमिकायें निभाने लगा था। तोपे अब साधारणतया पहियों पर स्थिति मोटरगाडी अथवा घोडो द्वारा खींची जाने वाली थी। 75 मिलीमीटर व्यास की नली वाली तोपें हल्की तथा उससे अधिक व्यास की तोपें मध्यम तथा भारी तोपें कहलाती थी फ्रांसीसियों के पास प्रसिद्ध 75 मिलीमीटर तोप थी जो गति, दूरी तथा परिशुद्धता की दृष्टि से उस समय की सबसे अच्छी तोप थी जिस पर अधिक निर्भर करने के लिये कारण उन्होंने मध्यम व भारी तोपों की अवहेलना की।

1914 की जर्मन सेना उस समय की सबसे अच्छी सुसज्जित व प्रशिक्षित सेना थी उसका सबसे बड़ा अतिरिक्त गुण उसकी मध्यम तथा भारी तोपें थी जो बडी मात्रा में उपलब्ध थी। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान तोपखाने का महत्त्व आक्रमण तथा रक्षा दोनो में बराबर बना रहा। तोप खाने की आवश्यकता इन दोनो समरतांत्रिक कार्यवाहियों को चलाये रखने की दृष्टि से इतनी अधिक थी कि अक्सर गोलाबारूद की कमी के कारण ही युद्ध में शिथिलता आ जाती थी।

पेशेन्डेल की लड़ाई में मित्र राष्ट्रो द्वारा प्रारम्भिक गोलाबारी में ही लगभग 45 लाख गोले प्रयोग किये गये, परन्तु केवल तोपखाने की फायर की मात्रा पर भरोसा करने से प्रारम्भिक सफलतायें तो अवश्य मिली क्योंकि उससे शत्रु के अग्रिम संचार साधन नष्ट हो जाते थे परन्तु ऐसा करने से भूमि इतनी ऊबड खाबड व गढढेदार हो जाती थी कि अपनी स्वयं की पैदल सेना तोपखाना व सप्लाई व्यवस्था को आगे ले जाने में गंभीर अड़चन पैदा होती थी। इस प्रकार तोपखाना युद्ध क्षेत्र पर दबदबा तो बनाये रहा परन्तु गतिशीलता के कमी के कारण निर्णायक भूमिका न निभा सका।

सन् 1914 ई0 में सबसे अच्छे तोपखाने फ्रांस, जर्मनी व ब्रिटेन के पास थे, प्रत्येक के पास (कम से कम) एक अच्छी मैदानी तोप थी। फ्रांसीसियों के पास फील्ड हाविटजरों की कमी थी जबकि अंग्रेजों ने इस युद्ध का प्रारम्भ भारी तोपखाने के बिना ही किया। शत्रु को तोपों की स्थिति ज्ञात करना एक महत्वपूर्ण आवश्यकता बन गई

थी। तोपों की स्थिति ज्ञात करने के लिये नये–नये तरीके निकाले गये जिनमें ध्वनि रेंजिंग, फ्लैश स्पार्टिंग इत्यादि उल्लेखनीय थे। तोपखाने व उसके गोला बारूद की सप्लाई को निरन्तर बनाये रखने में अधिक आर्थिक व्यय हुआ कि वह कुछ युद्धरत राष्ट्रो को अपेक्षाकृत अधिक आर्थिक दिवालियेपन की ओर ले गया। तोपखाने के प्रयोग व समरतांत्रिक सम्भावनायें लगभग शून्य हो गई थी। तोपखाने का किसी स्थान पर जमाव करना व किसी अन्य स्थान पर स्थान्तरित करना, शत्रु की निगाह से छुपाया नही जा सकता था। तोपखाना अपनी समरतांत्रिक गतिशीलता के अभाव में कमजोर था। प्रथम विश्व युद्ध की एक महत्वपूर्ण घटना विषाक्त गैस का प्रयोग था। विश्व युद्ध के दूसरे वर्ष में 1915 में जर्मनी ने वाइप्रेस के द्वितीय संग्राम में विषाक्त गैस (क्लोरीन) का प्रयोग किया।

अप्रैल 1915 में दोनो पक्षों ने गैस युद्ध को बड़े स्तर पर अपनाया। शत्रु मोर्चा तक विषाक्त गैस को पहुँचाने के लिये तोप के गोलो का प्रयोग किया गया। दो प्रकार की विषाक्त गैस का प्रयोग किया गया। (1) गैर टिकाऊ उन क्षेत्रों के लिये जिस पर शीघ्र ही मित्र सेनाओं द्वारा अधिकार करने की सम्भावना हो। (2) टिकाऊ गैस शेष सभी क्षेत्रों के लिये प्रयोग की गयी क्लोरीन, फॉस्जीन इत्यादि गैस फेफड़ों पर असर डालती थी जिससे दम घुटता था तथा सांस लेने में पीड़ा होती थी, खाँसी आने लगती थी। अधिक असर हो जाने से मृत्यु तक हो जाती थी। मस्टर्ड तथा ल्यूसाइड गैसों के प्रभाव से शरीर पर फफोले पड़ जाते थे इनका प्रभाव त्वचा पर पड़ता था इन गैसों से बचाव कठिन था। *D.A., D.C., Adamsite* इत्यादि गैस सर दर्द, शारीरिक निर्बलता जैसे प्रभाव पैदा करती थी। सांस के जरिये ये नाक, गले व आंखों में जलन पैदा करने वाली तथा पानी बहाने वाली अश्रु गैस भी प्रथम विश्व युद्ध में प्रयोग हुयी। प्रथम विश्व युद्ध में गैस का प्रयोग केवल पश्चिमी मोर्चे पर ही हुआ, गैस के प्रयोग वायु की दिशा, मौसम की अनुकूलता पर भी निर्भर करता था। अनेक सैनिक व राजनीतिक नेता इसे अमानवीय क्रूर व असभ्य मानते थे, परन्तु कुछ विचारकों के मतानुसार गोली, बम इत्यादि से अधिक गैस का प्रयोग मानवतापूर्वक

था। टैंक स्थल युद्ध के क्षेत्र में निःसन्देह सबसे विशिष्ट उपलब्ध थी, वास्तव में टैंक एक परीक्षण था। टैंक को एक स्ववाहित कवच युक्त तोप के रूप में प्रयोग किया गया था। यदि ये परीक्षण एक वर्ष तक और चलता तो यह बिल्कुल स्पष्ट हो जाता कि टैंक स्वयं में शस्त्र नही थे बल्कि एक वाहन थे जिनमें उनकी भार लादने की सीमा तक कुछ भी ले जाया जा सकता था। टैंक का प्रमुख गुण गतिशीलता के नवीन साधन के रूप में था जो पेट्रोल चालित था, उसको आधार मानकर एक पूर्णतया नवीन सैन्य संगठन बनाया जा सकता था। टैंक तब केवल स्ववाहित कवचयुक्त तोप न रह कर, स्ववाहित कवचयुक्त सेनाओं का आधार बनती।[21] प्रथम विश्वयुद्ध के प्रथम दो वर्षो में आक्रमण की प्रमुख समस्या थी कि मशीनगन के गोली के प्रभाव को कैसे निष्क्रिय किया जाये। शत्रु के मशीनगन, राइफल से सुसज्जित सैनिकों को धीरे–धीरे नही बल्कि अचानक कैसे निःशस्त्र किया जाये इसका सीधा उत्तर था बुलटप्रुफ कवच न कि गोली, गोले, बम्ब अथवा गैस की मात्रा में वृद्धि। ब्रिटेन में कर्नल स्वीन्टन तथा कुछ अन्य व्यक्ति यह उत्तर जान गये थे। वे यह भी समझ चुके थे कि सैनिक स्वयं बुलेटप्रुफ कवच ओढ़कर नही चल सकता बल्कि उसे ऐसी बुलेटप्रुफ कवचित गाडी में आगे ले जाया जा सकता है जो पहियों से चालित न होकर कैटरपिलर ट्रक द्वारा चालित हो जो क्षेत्र पार कर चल सके। इस प्रकार एक स्ववाहित बुलेटप्रुफ स्थलयान के रूप में टैंक की उत्पत्ति हुयी। ब्रिटिश नौसेना के तत्कालीन जो एक असैनिक व्यक्ति थे के प्रभाव एवं दृढसंकल्प के परिणाम स्वरूप ही टैंक के उत्पादन को युद्ध मंत्रि परिषद की स्वीकृत मिल सकी ये व्यक्ति थे श्री विस्टन चर्चिल जो द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री बने ।

इस प्रकार 1916 से 18 तक तीन वर्षो तक टैंक ने तीन बडी लड़ाइयों में भाग लिया। जर्मन सेना के चीफ स्टाफ ने 8 अगस्त 1918 को जर्मन सेना का काला दिन बताया। एक अन्य नायक के अनुसार विजय फ्रान्सीसी एवं ब्रिटिश सेना सुप्रीम कमाण्डर मार्शल कोच की प्रतिभा के फलस्वरूप नही मिली बल्कि जनरल टैंक ने शत्रु को पराजित किया। प्रथम विश्व युद्ध में वायुयान का प्रयोग भी टैंक के समान

था। परन्तु युद्ध की समाप्ति तक वायुयान एक महत्त्वपूर्ण युद्ध उपकरण बन चुका था। यद्यपि 1918 के विमान आधुनिक विमानों की तुलना में प्रभावहीन थे। वे मशीन की तुलना में काफी प्रभावशाली प्रतीत होते थे – विकास की दृष्टि से 1914 तथा 1918 के विमानों में भी काफी अन्तर था। प्रथम विश्वयुद्ध में वायुशक्ति की उपलब्धियों को निर्णायक तो नही कहा जा सकता फिर भी इस नवीन शस्त्र का प्रभाव हर वर्ष बढता ही गया। जर्मनी ने लन्दन पर युद्धनीतिक बमबारी करने के लिये विमानों तथा वायुपोतों दोनो का प्रयोग किया। दूसरी ओर जनरल ट्रेन्चार्ड की ब्रिटिश इण्डिपेन्डेन्ट एअरफोर्स ने दिन तथा रात दोनो में जर्मन राइनलैण्ड क्षेत्र के शहरों व कस्बों पर बार–बार बम गिरायें। यदि युद्ध एक सप्ताह और चलता तो शायद ट्रेन्चार्ड की एक टन के बमों द्वारा बर्लिन पर गोलाबारी करने की लालसा पूरी हो जाती। युद्ध नीति बमबारी अभियान के अतिरिक्त वायुयानों ने स्थल सेना के सहायतार्थ भी बमबारी की हवाई गस्त लगाई, तोपखाने के फायर को संशोधित करने में सहायता की तथा विरोधी सेनाओं पर सीधे आक्रमण भी किये। प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी का पहला लड़ाकू विमान एक सीट वाला फोक्कर विमान जिसकी मशीनगन सामने के पंखे के बीच से फायर करती थी। हवा से हल्के विमान समुद्री तथा तटीय रक्षा कार्यो में उपयोगी रहे परन्तु आक्रमण भूमिका में जर्मन जैपिलिन ने प्रसिद्ध प्राप्त की। इसने लन्दन को अच्छा नुकसान पहुंचाया ।

सन् 1914 में ब्रिटेन के पास 4 स्क्वाड्रन थे और 1916 में 28 स्क्वाड्रन फ्राँस में तैनात थे। 1 अप्रैल 1918 को सभी ब्रिटिश हवाई इकाईयों को मिलाकर तथा स्थल व जल सेनाओं से अलग स्वतंत्र अस्तित्व प्रदान कर रायल एअरफोर्स की स्थापना की गई। विश्वयुद्ध समाप्त होने पर रायल एअरफोर्स विश्व की सबसे बडी वायु शक्ति बन गई थी। सन् 1918 में रायल एअरफोर्स के पास चार इंजन वाला हैडलेन्पेज नामक शक्तिशाली बमवर्षक विमान था। 30000 पौंड वजन वाला यह विमान 1000 पौंड भार वाले गोले लंदन से जाकर बर्लिन पर गिरा सकता था। जर्मनी के गोथा बमवर्षक विभाग भी चार इंजन वाले थे तथा 80 मील प्रति घण्टे की गति से उड़ान भरते थे।

1918 के लड़ाकू विमानों में ऐसी मशीनगनें लग गई थी जो स्थल सेनाओं पर गोली की बौछार कर सकती थी। सन् 1890 में एक शक्तिशाली जहाजी बेड़े के निर्माण की घोषणा करने के पश्चात जर्मनी तेजी से जंगी जहाजों के निर्माण में लग गया। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक के अन्त तक वह इंग्लैण्ड की नौसैनिक शक्ति से मुकाबला करने लगा। सन् 1897 में नाविक मंत्रालय के सचिव तिरपिज ने सात वर्षीय निर्माण योजना बनाई जिसके अनुसार योजना की अवधि समाप्त होते–होते जर्मनी को 19 बैटलशिप बना लेने थे। तिरपिज एक महान संगठनकर्त्ता, नौसैनिक डिजाइनर तथा तारपीडो टेक्नीशियन था। उसने जहाजों को विश्व की सबसे शक्तिशाली बड़े व्यास वाली तोपों से सुसज्जित किया। जहाजों के कवच को सुधारा। उत्पादकता की दृष्टि से उसके जहाज लगभग विनाशहीन सिद्ध हुये। परन्तु नौसैनिक डिजाइन के क्षेत्र में सर्वाधिक विकास जर्मनी में न होकर इंग्लैण्ड में ही हुआ। यह था विशाल तोप वाला ड्रेडनाड जहाज, जिसे 1906 में समुद्र में उतारा गया। इसके टरेंटों पर 12 इंच नाल मुख्य व्यास वाली 10 तोपें लगाई थी जिनमें से 6 एक साथ समाने की ओर तथा शेष साइड में फायर कर सकती थी। इस जहाज की फायर शक्ति अपने से पिछले जहाज की तुलना में तीन गुना अधिक थी। 1908 में तिरपिज ने भी ऐसे जहाजों का निर्माण प्रारम्भ करवाया बल्कि उन्हें बाल्टिक सागर में ले जाने के लिये कील नहर को भी चौड़ा करवाया। 1914 में अंग्रेजी ग्रैंड फ्लीट में 24 ऐसे जहाज थे जबकि जर्मनी के पास 17, जर्मनी शीघ्र ही इस क्षेत्र में अंग्रेजों से पिछड़ गया। क्योंकि मई 1916 में यह संख्या क्रमशः 37 और 21 थी। जर्मनी ने पनडुब्बी बनाने में अधिक ध्यान केन्द्रित किया। जर्मन तारपीडो तथा समुद्री सुरंगे अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली थी। जर्मनी ने नई (U) बोट पर ज्यादा निर्भर था। 6 अप्रैल 1917 को अमरीका भी युद्ध भूमि में कूद पड़ा। जर्मनी के पास कुल (111 U- बोट) थी। फरवरी 1917 में टारपीडो द्वारा ब्रिटिश के 105 जहाज को जबरजस्त चुनौती दी थी लेकिन प्रभुत्व स्थापित न कर सका। युद्ध में अमरीका के सम्मिलित हो जाने से जर्मनी के विरूद्ध समुद्री नाकाबन्दी कड़ी हो गई। जिससे जर्मनी की सप्लाई व्यवस्था छिन्न–भिन्न हो गई। वहां 1918 में खाद्य पदार्थो की भारी कमी हो गयी रबर टायर

इत्यादि कितनी ही आवश्यक वस्तुयें पूर्णतया समाप्त हो गयी। इस प्रकार भूख से पीड़ित जर्मन राष्ट्र अपने सम्राट 'केसर' के विरूद्ध विद्रोह कर उठा विवश होकर जर्मनी को पराजय स्वीकार करनी पड़ी। प्रथम विश्वयुद्ध में भारतीय सेना इन नवीन आविष्कारों से पूर्णतः अनभिज्ञ थी। उनके पास केवल संगीन लगी राइफलें ही मुख्य हथियार थे बाद में इनको मशीनगन इत्यादि दिये गये। ये सैनिक केवल अपने नैतिक साहस तथा देश का नाम ऊँचा करने के लिये मूक बलिदान हो गये और विश्व के सर्वश्रेष्ठ 'सूरवीर' की उपाधि से नवाजे गये लेकिन अंग्रेजो ने अपने साम्राज्य की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुये ही भारतीय सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाई। आधुनिक युद्धों में विशाल सेनाओं की आवश्यकता के कारण प्रत्येक देश युद्धकाल में अपनी सेनाओं का विस्तार करता है। सारे देश के संसाधनों को शीघ्रता से जुटाया जाना अस्थाई सेनाओं का स्थाई सेना में परिवर्तन सैनिकों की भर्ती एवं प्रशिक्षण तथा उनकों हथियार युक्त करना वास्तव में कठिन कार्य होता है। उन देशों में यह समस्या विकट रूप धारण कर लेती है जिनमें शांति के समय अनिवार्य सैन्य सेवा पद्धति नही अपनायी जाती है। भारत जैसे देश में जो उन दिनों राजनीतिक रूप से परतंत्र था जिसमें राजनीतिक और सैनिक अधिकारियों के बीच विचित्र सम्बन्ध थे और ब्रिटिश सरकार के साथ भी उनके दूसरे प्रकार के सम्बन्ध भी विचित्र ही थे तथा स्थाई सेना में विभिन्न जातियों और धर्मो के लोगो का सम्मिश्रण था जहाँ युद्ध नही के बराबर थे जहाँ कि सेना ने पंजाब के गवर्नर के शब्दों में केवल धनलोलुप सैनिकों से निर्मित थी तथा जहाँ का राजनीतिक वातावरण अशांत था। युद्धकाल में किसी भी देश की सेना के विस्तार की गति और मात्रा दो तथ्यों पर (युद्ध उद्योगो का विकास एवं प्रशिक्षित जनशक्ति को बढाना) आधारित है।

1939 ई0 के पूर्व भारत में कोई भी युद्ध उद्योग स्थापित नही किया गया थ।। इसलिये उसे युद्ध के हथियारों एवं साज सामान के लिये ब्रिटेन पर आश्रित रहना पड़ता था। ब्रिटेन को स्वयं अपनी सेनाओं का विस्तार करना था, इसलिये वह भारत को युद्ध का सामान बड़ी मात्रा में नही दे सकता था। भारतीय सेनाओं के विस्तार में

यह एक बड़ी रूकावट हुयी। जहाँ तक जनशक्ति का सम्बन्ध है भारत के पास अपार जनशक्ति थी परन्तु शिक्षा व टेक्निकल अनुभव की कमी के कारण भारतीय जनशक्ति का केवल एक थोड़ा सा भाग आधुनिक युद्ध के लिये उपयुक्त था। भारतीय सैनिक अधिकांश गांवों से आते थे और इसलिये सेना की भर्ती कृषि से अधिक प्रभावित होती थी। अतः युद्ध काल में जब किसानों को सब वस्तुओं के दाम अच्छे मिलने लगते थे तब भर्ती कम होने लगती थी।

द्वितीय विश्व युद्ध से पहले सेना यन्त्रीकृत नही थी इसलिये यान्त्रिकों के लिये सेना में कोई स्थान नही था जिसके कारण सेना के यांत्रिक विकास में बहुत कठिनाई पैदा हो गयी। देश में भी इस प्रकार के व्यक्तियों का अभाव था। इसके अतिरिक्त सशस्त्र सेनाओं और नागरिक (सिविल) उद्योगो में जो थोड़े बहुत लोग प्राप्त हो सकते थे। उन्हें पाने के लिये प्रतिस्पर्धा थी। अंग्रेजों के अनुसार भारतीय नवयुवकों के अच्छे अफसर होने की योग्यता की कमी थी। यद्यपि यह बात बढा चढ़ा कर कही गयी है, परन्तु यह पूर्णतया तथ्यहीन नही है। नये ब्रिटिश अफसरों का आगमन भी सीमित हो चुका था। "यद्यपि देश में जनशक्ति बहुत अधिक थी, जिसमें बहुत बड़ी संख्या बहुत योग्य व्यक्तियों की थी परन्तु इसमें ऐसे व्यक्तियों का अनुपात कम था जो अच्छे अफसर सिद्ध हो सकते थे। आधुनिक ढंग के उलझन पूर्ण सैनिक साज समान के श्रेष्ठ यांत्रिक बन सकते थे। सैन्य विस्तार की कोई क्रमबद्ध योजना नही थी और जो भी थी वे वास्तविकता से दूर थी क्योंकि भारतीय सैनिक अधिकारियों की कल्पना से कहीं अधिक सैनिकों की मांग की गयी। जनरल हेडक्वाटर का विस्तार और गठन जो कि सभी सेनाओं के विस्तार को नियंत्रित करे उसका अच्छी प्रकार से नियोजित नही किया गया था। यह कार्य धीरे–धीरे किया गया परन्तु कठिनाइयाँ पूरी तरह से कभी भी हल नही हुयी। प्रशिक्षण केन्द्रो, सैनिक स्कूलों तथा रेजीमेन्टों में वी0 सी0 ओ0 तथा एन0 सी0 ओ0 की कमी ने एक कठिन समस्या उत्पन्न कर दी। इस समस्या का समाधान स्थाई यूनिटों से तथा प्रादेशिक रेजीमेन्टों से और पेन्शनरों तथा रिर्जव जाने वाले वी0 सी0 ओ0, एन0 सी0 ओ0 को (जो उत्तरी भारत के

निवासी थे) भेजने, भाषा समझने की समस्या खड़ी हुयी। युद्ध छिड़ने से पहले टेक्निशियनों की कोई भर्ती नही थी। जिन थोड़े यांत्रिकों की जरूरत पड़ती थी उन्हे सेना में ही यांत्रिक प्रशिक्षण दिया जाता था। केवल एक प्रारम्भिक यांत्रिक भर्ती का संगठन था जिसमें ऐसे प्रशिक्षित व्याक्तियों को सिविल उद्योग में अच्छे वेतन देकर ले लिया जाता था। विभिन्न लड़ाकू सेनाओं में यान्त्रिक भर्ती करने के लिये आपस में ही एक प्रतिस्पर्धा करनी होती थी जो कि सेनाओं के लिये अधिक घातक थी। शिक्षित टेक्निशियन शीघ्र ही मिलने बन्द हो गये। इसलिये शिक्षित व्यक्तियों की भर्ती करके उन्हें सेना में ही टेक्निकल ट्रेनिंग देने का प्रबन्ध करना पडा। अफसरों की सेना में अत्यधिक कमी थी। अखित भारतीय कांग्रेस का युद्ध के प्रति प्रतिकूल रवैया होने के कारण यह समस्या और जटिल हो गयी। इसके अलावा भारतीय शिक्षा प्रणाली में किताबीय ज्ञान को अधिक महत्व देकर शारीरिक, चारित्रिक और नेतृत्व शिक्षा की अवहेलना करने के कारण योग्य अफसरों का मिलना और भी कठिन हो गया। नौ सेना का प्रारम्भ कम्पनी के जन्म के साथ ही हुआ था। प्रारम्भ में कम्पनी का जहाजी बेडा *"The Honourable east Indian Company Mairine"* के नाम से पुकारा जाता था लेकिन यह नाम समय–समय पर बदलता गया। ये छोटी नौसेना बहुत अच्छा कार्य करती थी पूर्व में चीन पश्चिम में फारस की खाडी, अफ्रीका के किनारे या कभी–कभी यूरोप तक जाया करती थी ।

1920 से भारतीय जहाजी बेड़े का आधुनिक इतिहास शुरू होता है। छोटे से भारतीय बेडे को कमाण्ड करने के लिये एक ब्रिटिश नेबी के अफसर को नियुक्त किया गया परन्तु 1923 में आर्थिक संकट के कारण नौसेना को करीब–करीब खत्म कर दिया गया। फिर 1926 में एक कमेटी ने लड़ाकू जहाजी बेड़े के निर्माण की सिफारिश की जिसका गठन 1934 में हुआ परन्तु 1938 से ही जाकर जहाजी बेड़े को कुछ छोटे लड़ाकू जहाजों से सुसज्जित किया गया। भारतीयों को सेनाओं के प्रावैधिक अंगो में प्रवेश न होने देने की नीति के अलावा इस सेना का इतना कम विकास करने का यह भी कारण था कि हिन्द महासागर पर ब्रिटिश नौसेना का पूरा

नियंत्रण था। इसलिये भारत की सुरक्षा के लिये एक अलग नौसेना का विकास करना अनावश्यक समझा गया। सन् 1939 में भारतीय नौसेना में कुल आठ बहुत छोटे युद्धपोत थे। इसमें कुल 1846 व्यक्ति थे जिनमें 112 अंग्रेज तथा 40 भारतीय अफसर भी थे।

द्वितीय विश्व युद्ध में सेना का भी तेजी से विकास किया गया। इनको नये (परन्तु फिर भी छोटे) युद्धपोत दिये गये। युद्ध समाप्त होने तक इसमें लगभग 50 युद्धपोतें के अतिरिक्त अनेक छोटे जहाज और भी थे। नाविकों की कुल संख्या लगभग 30000 थी और भारतीय तथा अंग्रेज अफसरों की संख्या लगभग बराबर थी। सन् 1914–18 के महायुद्ध में सभी बडे देशों ने सामरिक वायुयानों का प्रयोग किया था परन्तु किसी थल और नौसेनाओं के वायु अंग के अन्तर्गत कार्य करते थे। उस युद्ध के बाद अंग्रेजों ने सबसे पहले अलग वायु सेना बनाई। ब्रिटिश वायु सेना की कुछ यूनिटें जिन्हें स्क्वाड्रन कहते है भारत में भी रखी जाती थी। सन् 1857 के बाद ब्रिटिश शासन की यह नीति रही कि भारतीयों को सेना में प्रावैधिक एवं शक्तिशाली शाखाओं में बिल्कुल प्रवेश न करने दिया जाये। अतः अंग्रेजों ने भारतीय वायु सेना स्थापित करने में कोई प्रयत्न नही किया परन्तु भारतीय जनमत को किसी सीमा तक सन्तुष्ट करने के लिये उन्होंने 1928 में वायु सेना के अफसर प्रशिक्षण स्कूल क्रेनवेल में प्रतिवर्ष 6 स्थान भारतीय नवयुवकों के लिये सुरक्षित कर दिये।

सन् 1932 में भारतीय वायुसेना अधिनियम पास किया गया और एक अप्रैल 1933 में एक फ्लाइट के साथ भारतीय वायुसेना का श्री गणेश हुआ। (एक फ्लाइट में तीन चार वायुयान होते है और एक स्क्वाड्रन की उप इकाई होती है) सन् 1939 तक तीन फ्लाइट बनी। स्क्वाड्रन कमाण्डर को छोडकर सब अफसर भारतीय थे। स्क्वाड्रन के वायुयान बिल्कुल पुराने प्रकार के थे। द्वितीय विश्व युद्ध में अन्य सेनाओं की भांति वायुसेना का भी तेजी से विकास हुआ और सन् 1944 तक इसमें 9 स्क्वाड्रन हो गये। जिनमें 1600 अफसर, 27000 अन्य सैनिक थे। 1939–45 के मध्य अफसरों की कमी को पूरा करने के लिये सरकार ने आपातकालीन कमीशन देना

शुरू किया तथा भारतीय अफसरों का अंग्रेजी अफसरों की तुलना का अनुपात 1:10 था और युद्ध के अन्त में 1:4 था। उनकी कुल संख्या 396 से लेकर 8340 हो गई। वायु और नौसेनाओं में बढोत्तरी हुयी। यद्यपि प्रथम महायुद्ध के पश्चात भारतीय थल सेना में अनेक सुधार हो चुके थे, फिर भी द्वितीय महायुद्ध के आरम्भ में सेना की दशा सोंचनीय ही थी। चेटफील्ड कमेटी ने साफ–साफ कह दिया था कि भारतीय सेना किसी भी बडी लड़ाई के वास्ते तैयार नही है। इसमें तनिक सन्देह नही कि भारतीय थल सेना के सैनिक दूसरे देशों के सैनिकों के अपेक्षाकृत अधिक कुशल लड़ाकू थे, परन्तु दूसरे देशों के आधुनिक सशस्त्र सेनाओं की अपेक्षा भारतीय सेना अत्यन्त तुच्छ थी। इस समय भारतीय सेना आधुनिक शस्त्र एवं सामग्रियों से सुसज्जित न थी। सेना में परिवहन के साधन खाली खच्चर थे यन्त्रीकरण नही था क्योंकि जितनी भी मोटरगाडियाँ थी सबको बाहर से मंगाना पडता था। यहां तक कि उनके ठीक करने का यहां पर कोई प्रबन्ध नही था। पेट्रोल भी विदेशों से मंगाना पडता था। द्वितीय महायुद्ध से पहले आर्डीनेन्स फैक्ट्री भी नही के बराबर थी और जो भी थी उनकी मशीन इस समय के मतलब की नही थी तथा न उनका कोई ठीक तरीका था। इस समय तक भारतीय जहाजरानी का विकास भी नही हुआ था। परिवहन के साधन भी उपलब्ध नही थे। इस समय अश्वारोही सेना, पैदल सेना और घुड़सवार तोपखाना था। भारतीय तोपखाना तथा सिगनल यूनिट अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी।

1939 ई0 में भारतीय आर्मी आंर्डीनेन्स कोर ने यान्त्रिकरण इक्यूपमैंट बनाने शुरू किये। वायुसेना भी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में थी। युद्ध आरम्भ होने के पहले सेना की सैनिक संख्या लगभग 352213 थी, जिसमें 205038 भारतीय सैनिक 83706 भारतीय राज्यों की सेना और बांकी ब्रिटिश सैनिक थे परन्तु युद्ध के दौरान इनकी शक्ति अधिक बढ़ गयी और युद्ध समाप्त होने पर सेना की शक्ति लगभग बीस गुनी हो गयी थी। 1939 में भारतीय सेना का भी यांत्रिकरण हुआ। भारत के पास जनशक्ति तो अपार थी लेकिन आधुनिक शस्त्रों एवं प्रशिक्षण की कमी थी। द्वितीय महायुद्ध के दौरान भारतीय सेना के सभी अंगों में आवश्यकतानुसार विस्तार एवं सुधार

हुये। युद्ध के दौरान वायु सेना का विकास हुआ वायु सेना के विकास ने युद्ध की दशा को बिल्कुल बदल दिया। इसके विकास के साथ–साथ पैराट्रुप्स का भी विकास हुआ। इण्डियन इलैक्ट्रिकल एण्ड मैकेनिकल इंजीनियर्स का भी संगठन मशीनों को ठीक करने के वास्ते किया गया। इसके साथ–साथ स्त्रियों को भी सेना के तीनों भागों में भर्ती किया गया। आर्डिनेन्स फैक्ट्रियों को आधुनिक मशीनों से सुसज्जित किया गया। अब हथियार ज्यादा संख्या में यहीं पर बनने लगे। सेना की संख्या में विकास के कारण तथा युद्ध के लिये सेना की आवश्यकता के कारण यह जरूरी हो गया कि सेना का एक प्रशिक्षण विभाग खोला जाये जिसमें उनकों एक अच्छे ढंग से प्रशिक्षित किया जा सके। इस महायुद्ध में भारतीय सेना की टुकड़ियों ने उत्तरी अफ्रीका, अबीसीनिया, सोमालीलैण्ड, सीरिया, ईराक वर्मा, अराकान, मलाया, जावा, जापान, इटली, और ग्रीस के मोर्चा पर युद्ध में भाग लिया।[22] टैंक प्रारम्भ से ही युद्ध स्थल पर गये। वे अपनी गतिशीलता, फायर शक्ति कवच व कार्य क्षेत्र की श्रेष्ठता के कारण स्थल युद्ध का सहज ही प्रधान शस्त्र बन गये। 1939 तथा 1940 में टैंक आक्रमणों पर आधारित जर्मन ब्लिटज क्रिंग दिया समरतंत्र युद्ध के हर रंग मंच पर एक के बाद सनसनी खेज सफलतायें प्राप्त करता था। 1940 की गर्मियों में जर्मनी के भीषण टैंक आक्रमण के तूफानी बेग के सम्मुख जब फ्रॉसीसी हाईकमान निष्क्रिय व स्तब्ध रह गया और एक माह से कुछ अधिक समय में ही घुटने टेकने के लिये विवश हो गया तो समस्त विश्व में सनसनी फैल गई। यह इतने अल्प समय में प्राप्त होने वाली उस समय तक की महानतम सैन्य विजय थी। जून 1940 तक ही नही बल्कि उसके बाद भी यन्त्रीकृत कवचयुक्त सेनाओं ने आशा से अधिक उस विश्वास को बनाये रखा जो उनके प्रयोग कर्ताओं ने उन पर रक्खा था। पोलैण्ड तीन सप्ताह में जीत लिया गया, हॉलैण्ड पांच दिन में, बेल्जियम 18 दिन तथा फ्रान्स 35 दिन में, यूगोस्लाविया 12 दिन में तथा ग्रीस 18 दिन में जीत लिया गया।[23]

चैम्बरलैन को हटाकर बनाये गये ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल जिन्हे प्रथम विश्वयुद्ध में टैंक के प्रथम निर्माण का श्रेय मिला था। विवश होकर ब्रिटिश संसद में

चीखे कि यदि जर्मन आक्रमणों के तूफान का मुकाबला करना है तो हमें तीन चीजें चाहिये टैंक, टैंक और टैंक चर्चिल के ये शब्द आक्रमण रक्षा तथा प्रत्याक्रमण स्थल युद्ध की प्रत्येक सैन्य कार्यवाही में टैंक के महत्व को स्पष्ट करते हैं। जून 1941 तक जब मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी की तुलना में पर्याप्त टैंक बना लिये तब जाकर निरन्तर आगे बढ़ती जर्मन यांत्रिक सेनाओं को विभिन्न मोर्चों पर रोका जा सका और युद्ध में सन्तुलन किया जा सका। अनेकों प्रकार के टैंक पैदल सेना के धीमी गति से चलने वाले भीमकाय तथा शक्तिशाली भारी टैंक बनाये गये। समरतांत्रिक कार्यवाहियों के लिये, ब्लिटजक्रिंग आक्रमण के लिये, भागते शत्रु का पीछा करने के लिये मध्यम टैंक सर्वाधिक उपयोगी सिद्ध हुये। दूरगामी गस्त के लिये तीव्रगति वाले छोटे आकार के हल्के टैंक बने। विशेष कार्यो के लिये विस्फोटक सुरंगे साफ करने वाले, पुल बिछाने वाले, आग की लपट फेंकने वाले, जल व थल दोनो पर कार्य करने वाले टैंक बनाये गये। मित्र राष्ट्रों तथा धुरी राष्ट्रों में युद्ध--यौद्धिक कारखानों तक पहुंचाया गया, दोनो में टैंक को सुधारने की दृष्टि से निरन्तर होड़ चलती रही। जर्मनी, इंग्लैण्ड से इस क्षेत्र में थोड़ा आगे ही बना रहा परन्तु 1941 के अन्त तक संयुक्त राष्ट्र अमरीका द्वारा युद्ध में कूद पड़ने से मित्र राष्ट्रो का पलड़ा भारी हो गया। अमरीका की औद्योगिक शक्ति आधुनिकतम टैंको के निर्माण में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुयी। अमरीका ने 32 टन भार के 76 मिलीमीटर गन से युक्त ''शरमन टैंको'' का भारी मात्रा में उत्पादन किया। अंग्रेजों की ''सेन्चुरियन टैंक'' भार 50 टन गन 83.3 मिलीमीटर तथा जर्मनी की (टाइगर टैंक) (भार 50 टन 88 मिमी0 गन) अत्यन्त शक्तिशाली तथा मुकाबले के टैंक थे। रूस की भारी टैंक (स्टालिन) (भार 55 टन 122 मिमी0 गन) तथा मीडियम टैंक T–34 भी काफी लोक प्रिय थे। टैंको का मुकाबला करने के लिये विरोधी शस्त्रों का विकास भी स्वाभाविक ही था। विश्व युद्ध के अन्तिम चरण में इन शस्त्रों ने पर्याप्त प्रगति कर ली थी जिससे न केवल आक्रमणों में अवरोध पैदा होने लगे बल्कि टैंको के विनाश की मात्रा में भी वृद्धि होती गयी। कई प्रकार के टैंक विरोधी शस्त्र प्रयोग में लाये गये। टैंक विरोधी सुरंगे जो भारी दबाव से फटने वाली सुरंगे थी, ये उसी अवस्था में फटती थी। जब टैंक ट्रैक उनके ऊपर से गुजरता था। टैंको पर

कवच भेदने के लिए नुकीले ठोस गोले फायर करने के लिये विशेष प्रकार के तोपखाने का विकास हुआ। इंग्लैण्ड ने पहले दो पाउण्ड तथा बाद में छः पाउण्ड तथा 10 पाउण्ड गन प्रयोग की। दस पाउण्ड गन स्वयं वाहित गाड़ी पर स्थिति थी तथा इसकी मार भी जबरजस्त थी इसका प्रभाव विश्व युद्ध के अन्त तक बना रहा। जर्मनी 37 मिमी0, 47 मिमी0, 57 मिमी0, 88 मिमी0, गन अत्यन्त घातक सिद्ध हुयी। यही 88 मिमी0 गन, जर्मनी ने अपनी टैंको पर भी लगा दी जिससे वे आक्रमण के साथ–साथ रक्षा में भी अत्यन्त प्रभावशाली सिद्ध हुयी। टैंक विरोधी राकेटों का विकास भी द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने से पूर्व अमरीका द्वारा कर लिया गया इन्हे वायु तथा भूमि दोनो से फायर किया जा सकता था। ब्रिटेन ने 0.55 इंच की टैंक विरोधी राइफल का प्रयोग किया परन्तु वह सफलता प्राप्त न कर सकी, थोड़ी दूर तक मार करने के लिये ब्रिटिश (PIAT- Projector Infantry anti tank) प्रक्षेपास्त्र प्रभावशाली सिद्ध हुआ। टैंक विरोधी हथगोले बाजूक अथवा राकेट संचार इत्यादि शस्त्रों का प्रयोग सभी युद्धरत राष्ट्रो ने किया। रूस ने मोलोतोव काकटेल का प्रयोग भी टैंक नष्ट करने के लिये किया। यह शस्त्र रासायनिक द्रवों से भरी बोतल सदृष्य था। मैदानी तोपो में भी प्रथम विश्व युद्ध में काफी सुधार हुये उनकी मार की दूरी फायर की गति तथा साध क्षमता सब में कई गुना सुधार हुआ। अधिकतर तोपें अब भी ट्रेक्टर व गाड़ियों से खीची जाने वाली थी परन्तु काफी बड़ा प्रतिशत स्ववाहित गनों का भी था। पैदल सेना के शस्त्रों में मध्यम व हल्की मशीनगनें, राइफल, हथगोले, मशीन कारबाइन, पिस्टल, टैंक तथा वायुयान विरोधी हल्के शस्त्र इत्यादि थे। प्रथम विश्वयुद्ध की अपेक्षा वायुयान कहीं अधिक शक्तिशाली सैन्य उपकरण बन चुका था। 1914 का ब्रिटिश वायुयान 70 H.P. के इंजन से युक्त 60 मील प्रति घण्टा की गति से उड़ान भरता था। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति पर कुछ वायुयान ही ऐसे थे जो 100 मील प्रति घण्टा से अधिक की उड़ान भरते थे। स्थल लक्ष्यों पर गिरायें जाने वाले बम इतने छोटे थे कि पायलेट उन्हें हाथ से उठाकर नीचे लुढ़का देते थे परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध के पांच वर्षो में ही विकास अधिक तीव्रगति से हुआ। 1930 में लड़ाकू

विमान 200 मील प्रतिघण्टा तक की गति से उड़ सकते थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बम वर्षक विमानों की बम ले जाने की क्षमता कई हजार पौण्ड तक पहुँच गयी थी।

डूहेट महोदय ने वायुशक्ति सेना से सम्बन्धित सिद्धान्त प्रस्तुत किये जिसमें शत्रु के औद्योगिक व जनसंख्या केन्द्रों पर बमबारी द्वारा युद्ध का शीघ्र अन्त करने के साधन के रूप में वायु शक्ति प्रयोग एक महंगी असफलता सिद्ध हुआ। इससे न केवल युद्ध लम्बा खिंच गया बल्कि शान्ति की बची–खुची सम्भावनायें भी धूमिल हो गई। यद्यपि 1939 से 1942 तक प्रत्येक बड़े आक्रमण में यह एक व्यवस्था थी जिससे विद्युत चुम्बकीय लहरें प्रसारित होती थी तथा वे विमान अथवा जहाज जैसे ठोस पदार्थ से टकराती थी, परावर्तित होकर वापस लौट आती थी तथा रेडार पर्दे पर उस पदार्थ का प्रतिबिम्ब बनाती थी। इस प्रकार अपनी ओर बढ़ रहे शत्रु विमान अथवा जहाज का प्रतिबिम्ब एक क्षण से भी कम समय में ही पूर्व चेतावनी दे देता था। 1940 में फ्रांस की पराजय के बाद जब जर्मनी ने वायु आक्रमण द्वारा लन्दन को बर्बाद करने के उद्देश्य से वैटल ऑफ ब्रिटेन आरम्भ की तो प्रतिदिन कई बार सैकडों बमवर्षक विमानों के आगमन की पूर्व चेतावनी देकर ही रेड़ार ने ब्रिटेन की रक्षा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। यदि समय से रेड़ार का समुचित विकास न होता तो बैटेल आफ ब्रिटेन में इंग्लैण्ड की पराजय लगभग निश्चित थी, जिससे विश्वयुद्ध का रंग ही बदल जाता। रेड़ार पर्दे पर बनने वाले न केवल शत्रु के विमानों के आगमन की पूर्व सूचना देते थे बल्कि उनसे यह भी ज्ञात हो जाता था कि शत्रु के कितने विमान किस दिशा में व ऊँचाई से तथा कितने वेग से आ रहे है। यह चेतावनी मिलते ही विमान भेदक तोपें सतर्क हो जाती थी तथा लड़ाकू विमान उन्हें आगे जाकर उनके लक्ष्य तक आने से पूर्व ही नष्ट करने के लिये उड़ जाते थे। रेडार सिगनल मिलते ही वायु आक्रमण की चेतावनी हेतु साइरन बजते थे, जिससे नागरिक रक्षा व्यवस्था भी सतर्क एवं क्रियाशील हो जाती थी। रात्रि के समय शत्रु के विमानों को खोजने के लिये लड़ाकू विमानों को भी छोटे रेड़ार सेटों से सुसज्जित किया गया जिसके कारण ये लड़ाकू विमान अंधेरे में शत्रु के विमान को ढूँढ लेते थे। पूर्व चेतावनी से विमान

भेदक तोपों को उड़ते हुये शत्रु विमानों पर निशाना साधने के लिये अधिक समय मिलने लगा वे अब पहले से दस गुना सही फायर करने लगी। ब्रिटेन तथा अमरीका द्वारा जर्मनी पर की गई कूट योजनात्मक बमबारी का प्रभाव प्रारम्भ में बहुत कम था जो कि अधिकांश बम सही लक्ष्य से हटकर गिरते थे विशेषकर रात्रि के समय वैसे जर्मनी के ऊपर बादल, कोहरे इत्यादि के कारण मौसमी हालत भी साधारण तथा सहायक नही होते थे। अगस्त 1941 में हवाई बमबारी के दौरान लिये गये फोटोग्राफों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला कि कुल बमवर्षक विमानों का केवल पांचवा भाग ही इच्छित लक्ष्य के पांच मील रेडियस के भीतर बम गिरा पाता था।[24] परन्तु रेडार ने यह स्पष्ट कर दिया था कि द्रुतिगामी विजय के लिये स्थल व वायु सेना का सहयोग आवश्यक है।

1942 के पश्चात अंग्रेज व अमरीकी मुख्य रूप से स्त्रातजिक बमबारी पर निर्भर रहे। उन्होंने 'डूहेट के सिद्धान्त' को इस हद तक स्वीकार कर लिया था कि 1944 में ब्रिटिश युद्धमंत्री ने सेना के खर्चे पर बोलते हुये कहा था कि– **''हम उस असाधारण स्थिति में पहुंच गये है जब भारी बमवर्षक विमानों के उत्पादन में लगाया गया श्रम, अकेले ही शेष सभी सैन्य उत्पादन पर लगे श्रम के बराबर समझा जाता है।''**[25] संयुक्त आक्रमण के स्थान पर दो प्रथम संग्राम लड़े गये एक स्थल पर अपर्याप्त वायु शक्ति के सहयोग से दूसरा शत्रु के शहरों के विरूद्ध वायु शक्ति की अधिक प्रचुरता के साथ इन दूसरे आक्रमणों में सांस्कृतिक व मानवीय क्षति इतनी अधिक हुयी कि उसको सही कर पाना असम्भव है। एक औद्योगिक सभ्यता वाले शत्रु के उद्योगो को लक्ष्य बनाना एक प्रकार से उसके अस्तित्व पर ही प्रत्यक्ष प्रहार था। अतः ऐसी बमबारी को स्त्रातजिक बमबारी कहना ही त्रुटिपूर्ण था। फुलर के अनुसार एक बार सेना की वायु आवश्यकतायें पूर्ण हो जाने पर शेष बमबारी को शत्रु के औद्योगिक केन्द्रो पर न करके उसके उर्जा के स्रोतों व संचार साधनों पर केन्द्रित किया जाना चाहिये था। यदि प्रारम्भ से जर्मनी के कोयला उत्पादक व कृत्रिम तेल उत्पादक क्षेत्रों पर बमबारी की जाती, व उन्हें निरन्तर दबाव में रखा जाता तो यह

निश्चित था, कि शीघ्र ही जर्मनी के भारी उद्योग बन्द हो जाते। परन्तु युद्ध के अन्तिम दौर में जाकर ही यह अनुभव किया गया तथा व्यवस्थित रूप से वायु आक्रमणों को शत्रु के ऊर्जा स्रोतों पर केन्द्रित किया गया। अन्त में तेल की कमी हो जाने से ही जर्मनी की पूर्ण तबाही आई।[26] आतंकवादी, औद्योगिक बमबारी, स्त्रातजिक बमबारी (शत्रु की संचार व्यवस्था, उर्जा के स्रोत, विभिन्न हैडक्वार्टर, सेनाओं के जमाव क्षेत्र, बन्दरगाह) समरतांत्रिक (स्थल व जल संग्रामों में स्थल व जल सेनाओं को वायु सहयोग प्रदाना करना) नभ प्रभुत्व स्थापित करना व बनायें रखना, हवाई देखभाल फोटोग्राफी व गस्त द्वारा शत्रु के सम्बन्ध में निरन्तर महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त करते रहना।

वायु परिवहन द्वारा अति आवश्यक पूर्ति समस्याओं का समाधान करना, हताहतों को रणक्षेत्र से बाहर ले जाना। वायु युद्ध के क्षेत्र में सबसे उल्लेखनीय विकास था। रेडियों स्थान निर्धारण में द्रुतिगामी सुधार, जिसे रेड़ार के नाम से ख्याति मिली कि सहायता वायुयान को सही पथ पर स्थिर रखना तथा मौसम की खराबी हालत में या फिर रात्रि में रेडार संकेतों की सहायता से लक्ष्य को पहचानना सम्भव हो गया जिससे आगे चलकर ऐसे स्त्रातजिक आक्रमणों की प्रभावशीलता एवं विश्वसनीयता बढ़ी। एटलांटिक की लड़ाई में ब्रिटिश वायुशक्ति ने रेड़ार की सहायता से जर्मन पनडुब्बियों का पता लगाने में सफलता प्राप्त कर ली। छोटे आकार की जर्मन पनडुब्बियों ने जो (U.BOAT) कहलाती थी उत्तरी पूर्वी एटलांटिक महासागर में इतना आतंक पैदा कर दिया था कि ब्रिटेन का समुद्री व्यापार अस्त व्यस्त हो गया था तथा उसकी पराजय लगभग निश्चित प्रतीत होने लगी थी। एक समय तो भूमध्य सागर तथा इंगलिश चैनल को व्यापारिक जहाजों के लिये बन्द करना पड़ा था। जून 1940 से दिसम्बर 1941 तक ब्रिटिश समुद्री व्यापार का एक तिहाई से अधिक जर्मन पनडुब्बियों द्वारा नष्ट कर दिया गया था परन्तु 1942 के मध्य से जब मित्र राष्ट्रो के पनडुब्बी तलाशने वाले विमानों ने एक नये माइक्रोवेब रेडार का प्रयोग प्रारम्भ किया, तो जर्मन पनडुब्बियों का छुपना मुश्किल हो गया। पुराने लागवेव रेडार मॉडलों के

विपरीत इन नये रेडार सेट से सुसज्जित विमान की जर्मन पनडुब्बियों को पूर्व चेतावनी भी नही मिलती थी।

मई 1942 में इस संग्राम ने अचानक पलटा खाया, जर्मनी की 41 पनडुब्बियाँ नष्ट हो गई जो उसकी कुल पनडुब्बियों का एक तिहाई थी। घबराकर जर्मन पनडुब्बी बेड़े के कमाण्डर डायनिट्ज ने उत्तरी एटलांटिक से पनडुब्बियों को हटाकर बन्दरगाहों पर वापस बुला लिया। कुछ माह पश्चात यद्यपि उसने पुनः एटलांटिक संग्राम प्रारम्भ करने का प्रयास किया परन्तु उसे अधिक सफलता नही मिली, क्योंकि तब तक मित्र राष्ट्र एटलांटिक महासागर पर स्पष्ट प्रभुत्व स्थापित कर चुके थे।[27] डायनिश के अनुसार शत्रु ने पनडुब्बी के मूलभूत गुण आश्चर्य को रेडार के प्रयोग से बिल्कुल समाप्त ही कर दिया। 1940 में रेडार ने अंग्रेजों की रक्षात्मक लड़ाई में सहायता करके उन्हें सम्भावित पराजय से बचाया था, अतः वे रेडार को स्वाभाविक सम्मान की दृष्टि से देखते थे। जबकि जर्मन लोगो को उससे कोई ऐसा भावात्मक सम्बन्ध नही था। धीरे–धीरे रेडार विकास के क्षेत्र में जर्मन अंग्रेजों से पिछड़ने लगे।

1942 के प्रारम्भ में स्थिति मित्र राष्ट्रो के पक्ष में होने लगी थी और वे सब अपना ध्यान रेडार के रक्षात्मक उपयोग से हटाकर उसके आक्रमण प्रयोग की ओर केन्द्रित करने लगे थे। अब उनके बमवर्षक विमान जर्मन आकाश की ओर केन्द्रित करने लगे थे। इसके पूर्व उनके बमवर्षक को जर्मन आकाश मे अनेक प्राकृतिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था जिसके कारण वे लक्ष्य को पहचानने तथा उससे भी अधिक प्रहार करने में असफल हो जाते थे। उन्हें ऐसे पथ प्रदर्शक उपकरणों की आवश्यकता थी जो अन्धकार व खराब मौसम में उनका मार्ग निर्देशन कर सके। जिनकी सहायता से वे अधिक निशाना लगा सकें तथा जर्मन रेडार व्यवस्था को धोखा दे सके। उन्होंने 1942 के प्रारम्भ में *GFF Navigational system* जिसमें तीन रेडियों पल्स ट्रान्समीटर लगे होते थे, को अपनाया इसका प्रथम प्रयोग मार्च 1942 में एस्सेन की बमबारी में हुआ। इस व्यवस्था का रेन्ज 300 मील था। परन्तु 6 महीने के अन्दर ही जर्मनी ने इसमें सफलता पूर्वक अनुरोध खड़ा करना

सीख लिया। बमबारी सहायक उपकरण OBOE दिसम्बर 1942 से प्रयोग की गयी। रेडार किरण प्रसारण स्टेशन बमवर्षक विमान को एक रेडियों किरण के मार्ग पथ पर आगे भेजते थे तथा निरन्तर विमान की स्थिति पर एक ऐसी युक्ति द्वारा नियंत्रण रखते थे जो उसकी गति को नापती रहती थी । जब विमान अदृश्य लक्ष्य के ऊपर पहुंचता था तो भूमि से भूमिगत स्टेशन एक विशेष सिग्नल द्वारा विमान चालक को खबर दे देता था और तुरन्त बम गिरा दिये जाते थे–इस प्रकार के आगमन से सदृश्य बम बारी का युग एक प्रकार से समाप्त हो गया।[28] OBOE का कार्य क्षेत्र भी 300 मील तक था। यद्यपि यह व्यवस्था विश्वयुद्ध के अन्त तक होती रही, जर्मन इसमें भी अवरोध पैदा कर देता था। इसका प्रयोग विमानों की सीमित संख्या तक ही सम्भव था तथा एक ही विमान को निर्देश देने के लिये दो स्टेशनों की आवश्यकता पड़ती थी। H_2S बमबारी तथा पथ प्रदर्शक युक्ति पुन्ज आक्रमणों के समय अदृश्य लक्ष्यों पर बमबारी करने के लिये एक और युक्ति निकाली जिसे H_2S व्यवस्था कहा गया। इसे सर्वप्रथम जर्मनी के विरूद्ध जनवरी 1943 में प्रयोग किया गया। विमान में ही एक नया माइक्रोवेव रेडार ट्रान्समीटर लगा होता था जिसकी सहायता से विमान सैनिक (CRCBU) बादल तथा अन्धकार के बीच से नीचे देख सकते थे। H_2S व्यवस्था ने ब्रिटेन के बाम्बर कमाण्ड को आश्चर्य जनक परिशुद्धता के साथ अन्धकार में कई प्रकार के लक्ष्यों को स्पष्ट किया। सर्वप्रथम जनवरी 1943 में हैमवर्ग पर इसने अत्यन्त विनाशकारी कार्य किया शीघ्र ही इसका प्रयोग पनडुब्बी विरोधी कार्यवाही में भी सफलता पूर्वक किया गया। विमान भेदी तोपों की परिशुद्धता बढ़ाने में प्रौक्सीमिटी फ्यूज ने क्रान्तिकारी योगदान दिया इन तोपों के गोलों के साथ फ्यूज के रूप में एक छोटा सा रेडार सेट लगा होता था जिससे रेडियों किरणें प्रसारित होती रहती थी, यदि इन किरणों के प्रसारण क्षेत्र में शत्रु का विमान आ जाता था तो ये किरणें उससे टकराकर वापस लौटती थी वापस लौटती किरणों की दिशा में गोला स्वयं मुड़ जाता था और विमान से टकराता था। एक प्रकार से यह गोले को लक्ष्य तक पहुंचाने की *Self Guidine system* थी।

द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारम्भ में बमवर्षक विमान सही निशाना लगाने के लिये पहले गोता लगाकर नीची उड़ान भरते और फिर लक्ष्य पर बम गिराते ऐसे विमानों से रक्षा करने के लिये बड़े–बड़े गैस के गुब्बारों को पतले तार बांध कर ऊँचा उड़ाया गया। तार का निचला सिरा भूमि पर बांध दिया जाता था या फिर किसी मोटर गाड़ी से। महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों को चारों ओर ऐसे तारों द्वारा घेर दिया जाता था आक्रमणकारी विमान जब इनसे टकराते थे तो स्वतः नष्ट हो जाते थे। 1940 में लन्दन की रक्षा हेतु बैलून बराज अत्यन्त उपयोगी भूमिका निभाई। स्थल व जल युद्ध की सफलता के लिये पहले विमान नभ प्रभुत्व स्थापित करे जिससे शत्रु के विमानों को स्थल व जल संग्रामों में दखल देने से रोका जा सके। शत्रु के विमानों को मार गिराने के लिये विमान भेदी तोपों का बड़ी तीव्रगति से विकास किया गया। गतिशील विमानों पर निशाना लगाने के लिये इन तोपों के गोलों को प्रोक्सीमिटी फ्यूज से युक्त किया गया। अंग्रेजों के प्रमुख विमान भेदी तोपे 40 मिमी0 बोर्कस तथा 3.7 इंच गन थी।

जर्मनी ने 88 मिमी0 जैसी भारी तोपों का प्रयोग किया। द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त होते–होते विमानों को मार गिराने वाले राकेटों का भी निर्माण हो चुका था। द्वितीय विश्व युद्ध में शीघ्र ही दोनो पक्षों ने रेडार पद्धति को अपना लिया था साथ ही वे विरोधी पक्ष के रेडार को निष्क्रिय बनाने के भी उपाय सोचनें लगे थे। सबसे अच्छा उपाय *Window* कहलाता था। बहुत सी धातु से मढ़ी कागज की पहियां आकाश में विखेर दी जाती थी रेडार किरणें इनसे टकराती थी तथा परिवर्तित होकर रेडार पर्दे पर प्रतिबिम्ब बनाती थी। इन प्रतिबिम्बों से शत्रु को धोखा हो जाता था कि भारी वायु आक्रमण आ रहा है परन्तु बाद में वैज्ञानिकों ने *Window* के भ्रम से बचने के तरीके निकाल लिये। द्वितीय विश्व युद्ध में टैंकों को फायर सहायता प्रदान करने वाले जर्मन गोताखोर बमवर्षक विमान स्टूका रणक्षेत्र पर छा गये। जर्मन लडाकू विमानों में मेसरमिट मुख्य थे, ब्रिटिश लड़ाकू विमान स्पिटफायर बैटल ऑफ ब्रिटेन में मेसरमिट में श्रेष्ठ सिद्ध हुआ हेरिकन अंग्रेजों का एक अन्य प्रसिद्ध लड़ाकू विमान था। 1942 में जर्मनी पर आक्रमण बोलने के लिये अंग्रेजों ने हेलीफेस्ट बैलिंगटन लेंकास्टर बमवर्षक

विमानों तथा *OBOE* पद्धति से युक्त मोस्कीटों लडाकू विमानों का प्रयोग किया। इन विमानों में लेकास्टर सर्वाधिक प्रभावशाली विमान था तथा एकबार में दस टन बम शत्रु पर गिरा सकता था।

अमरीका ने B-17 (*Fly fortress*) B-29 (*Super fortress*) बमवर्षक विमान तथा मुस्तंग लड़ाकू विमान प्रयोग किये। अमरीकी बमवर्षक विमानों की उड़ान 2000 मील तथा लड़ाकू विमान की उडान 650 मील थी। बड़ी–बड़ी इमारतों पर बमबारी के लिये अमरीकनों ने टालबॉय 120000 पौण्ड तथा ग्रैण्ड स्लैम नामक शक्तिशाली बम गिराये। B-29 *Super Fortress* बमवर्षक विमान से ही अमेरिका ने हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिराये। जर्मनी के V-1 को बजबम अथवा फ्लाइंग बम कहते थे। यह एक चालक रहित विमान था इसे नियंत्रित प्रक्षेपास्त्र की प्रारम्भिक सफलता भी कह सकते है। इसके अग्रिम भाग में एक प्रोपेलर (तथा उसके साथ काउण्टर) लगा होता था जिस पर लक्ष्य की दूरी के अनुसार चक्र भर दिये जाते थे फायर होने के पश्चात जैसे–जैसे यह प्रक्षेप पर आगे बढता जाता चक्र घूमते जाते थे। जब चक्र पूरे हो जाते थे तो ईंधन स्वतः बन्द हो जाता था और बजबम नीचे गिर जाता था। इसकी मार की दूरी 200 मील भार 6000 पौण्ड उड़ान की ऊँचाई 3020 फिट तथा विस्फोटक पदार्थ लगभग एक टन था। तीन महीनों में 9300 V-1 इंग्लैण्ड की ओर भेजे गये जिनमें से दो तिहाई ही इंग्लैण्ड के तट पर पहुंचे । उनकी धीमी गति, तीव्र ध्वनि अनेक ब्रिटिश काम चलाऊ रक्षा उक्तियों ने इनके प्रभाव को कम कर दिया था। ऊपर से ब्रिटिश लड़ाकू विमानों तथा प्राक्सीमिटी फ्यूज से युक्त विमान भेदी तोपों के गोलों ने इन्हें भारी क्षति पहुंचाई। 28 अगस्त 1944 को 94 V-1 इंग्लैण्ड के तट पर पहुंचे जिनमें से 65 विमान भेदक तोपों द्वारा 23 लडाकू विमानों द्वारा तथा दो बैलून बराज द्वारा नष्ट कर दिये गये। केवल 4-V-1 ही लन्दन पर पहुंचे। 13 जून से 6 सितम्बर 1944 तक केवल 2400 V-1 लन्दन तक पहुंचे लगभग 24000 व्यक्ति हताहत हुये तथा सात लाख इमारतों को क्षति पहुंची। 16 सितम्बर 1944 को ब्रिटिश संसद में लन्दन के संग्राम को विजय घोषित कर दी गयी। V-2

एक राकेट था जिसका भार 12.65 टन, विस्फोटक एक टन ईंधन कुल 9 टन, लम्बाई 47 फिट, मार की दूरी 200 मील, गति 3000 मील प्रतिघण्टा, उड़ान की ऊँचाई 75 मील अधिकतम थी। V-2 का आक्रमण 8 सितम्बर 1944 से प्रारम्भ होकर लगभग सात महीने तक रूक–रूक कर चलता रहा जब तक कि मित्र सेनायें नीदरलैण्ड नही पहुंच गई और जर्मन पीछे हटने पर V-2 स्थानों पर भी अधिकार कर लिया जहां से V-2 छोड़े जाते थे। इस काल में कुल मिलाकर 4300 V-2 फायर किये गये जिनमें 1500 इंग्लैण्ड की ओर तथा 2100 एन्टवर्य बन्दरगाह की ओर इनका प्रभाव कही अधिक विनाशकारी था। ब्रिटिश इस शस्त्र की काट भी नही खोज पाये थे इसके अतिरिक्त यह शस्त्र अत्यधिक तीव्रगति का तथा ध्वनि रहित था इसका न तो लड़ाकू विमान ही पीछा कर सकते थे और न ही तोपखाने का फायर इस तक पहुंच पाता था। यदि इस शस्त्र को एक या दो वर्ष पहले ही बना लिया जाता तो यह हिटलर की कल्पना का चमत्कारिक शस्त्र बन सकता था ऐसा शस्त्र जो युद्ध का निर्णय अपने पक्ष में कर सकता था परन्तु यदि जर्मन राकेट द्वितीय विश्वयुद्ध में निर्णायक भूमिका निभाने में असफल रहे तो भी उन्होंने भविष्य के सभी युद्धो को नया स्वरूप अवश्य प्रदान किया।[29] वैटलशिप, वारशिप जैसे विशाल आकार वाले जंगी जहाजों का युग अब समाप्त हो गया क्योंकि वे भीषण वायु बमबारी के सम्मुख असहाय प्रतीत होते थे न तो उन्हें छुपाया जा सकता था और न ही वे भाग सकते थे उनके निर्माण में अरबों पौण्ड की पूँजी लगती थी। अपेक्षाकृत छोटे जहाज क्रूजर अब भी महत्त्वपूर्ण थे परन्तु हल्के व छोटे जहाजों (डैस्ट्रायर, फ्रिगेट) का निरन्तर बढ़ता चला गया क्योंकि छोटे आकार व अधिक गति के कारण वे अपेक्षाकृत अधिक शीघ्रता से आक्रमण हेतु किसी स्थान पर केन्द्रित हो सकते थे तथा वायु आक्रमणों के सम्मुख शीघ्रता से तितर–बितर हो सकते थे। वायु आक्रमणों के विरूद्ध जहाजी बेडे की रक्षा द्वितीय विश्वयुद्ध की नौसैनिक समस्याओं में एक प्रमुख समस्या थी। जब भी कोई जहाजी बेडा बिना विमानों की छत्रछाया के कार्य करता तो उसे भारी क्षति उठानी पडती थी। अतः प्रत्येक जहाजी बेड़े में विमान वाहक पोतों की मौजूदगी अनिवार्य सी हो गई। ये जहाज समुद्र में तैरती हवाई पटरी जैसे होते थे जिन पर से लडाकू व

बमवर्षक विमान उड़ाये, उतारे व खड़े किये जा सकते थे। जहाजी बेड़े की ओर शत्रु के विमानों के आगमन की पूर्व चेतावनी देने के लिये उन पर रेडार की व्यवस्था भी होती थी। दिसम्बर 1941 में प्रिन्स आफ बेल्स तथा रिप्लस नामक प्रसिद्ध जहाजों को डुबाने, 1942 में कोरल सागर तथा मिडवे आइलैण्ड की लडाइयों तथा 1944 की फिलीपाइन्स की लड़ाइयों ने विमान वाहक पोतों व स्वतंत्र विमानों का पूरा प्रभाव देखने को मिला।[30] प्रथम विश्वयुद्ध के समान ही द्वितीय विश्वयुद्ध में भी जर्मनी ने अपना ध्यान पनडुब्बियों के विकास पर केन्द्रित किया। जर्मनी की पनडुब्बी *(E-Boat-5 Tarpedo tubes)* से सुसज्जित, मध्यम पनडुब्बी (*L-Clar Submarine* भार 1080 टन गति 17.5) भारी पनडुब्बी (*K-clar Submarine*) भार 2700 टन गति 24 किमी0 ।

जर्मनी की पनडुब्बियाँ *Smart* अथवा *Submarine* नामक यंत्रों से सुसज्जित थी। प्रथम विश्वयुद्ध की समुद्री सुरंगे उसी समय फटती थी जब जहाज उनके ऊपर से गुजरते समय उनसे टकरायें। ये *Concactmines* कहलाती थी । ये बहुत प्रभावशाली सिद्ध नही हुयी क्योंकि अपार जलराशि व विस्तार वाले समुद्रों में इनकी बड़ी से बड़ी संख्या अस्तित्वहीन सी प्रतीत होती थी। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी चुम्बकीय सुरंगों का प्रयोग किया ये सुरंगे समुद्र के नीचे छुपी रहती थी जिससे उन्हें हटाना सरल नही था। लोहे की चादरों से बनें जहाज उस क्षेत्र से गुजरते थे तो सुरंगे जहाजों की ओर आकर्षित होती थी। चुम्बकीय प्रतिक्रिया द्वारा ही उनमें विस्फोट हो जाता था। अंग्रेजों ने अपने जहाजों के चारों ओर तार लपेट कर तथा उनमें विद्युत प्रवाहित कर विपरीत चुम्बकीय शक्ति पैदा की, जिससे वे चुम्बकीय सुरंगों को और दूर धकेलने लगे। पोतों के अग्रभाग में शक्तिशाली चुम्बक लगाकर इनका विस्फोट भी कर दिया जाता था तथा पीछे से आने वाले जहाजों को हानि नही होती थी। तत्पश्चात जर्मनी ने *ACOUST MINES* प्रयोग की जो ध्वनि से फटती थी। जब जहाज सुरंग क्षेत्र से गुजरते थे तो उनसे पैदा होने वाली एक विशेष प्रकार की ध्वनि उन्हें नष्ट कर देती थी। शीघ्र ही इन सुरंगों को भी निष्क्रिय बनाया जाने लगा। जर्मनी ने सुरंगे भी बनाई जो जल दबाव के परिवर्तन से विस्फोटित होती थी। जिस स्थान से जहाज गुजरते

थे वहां दबाव कम हो जाता था जिससे वहां मौजूद सुरंग फट जाती थी। अंग्रेजों ने कृत्रिम दबाव उत्पन्न करके इन सुरंगों का बचाव भी ढूंढ लिया। प्रथम विश्वयुद्ध के टारपीडों गैस के दबाव के सिद्धान्त पर आधारित थे। फायर होने पर अत्यधिक दबाव के साथ एकत्रित की गई गैस जैसे–जैसे पीछे से निकलती जाती थी उसकी प्रतिक्रिया से टारपीडों आगे बढता जाता था परन्तु जल की सतह पर उभर कर गैस के बुलबुले टारपीडों की दिशा को संकेत देते थे परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी ने विद्युत टारपीडो बनाये तथा ध्वनि पर आधारित किसी जहाज की ध्वनि का सम्पर्क पाते ही ये उस ओर चल देते थे। ये जहाज द्वारा दिशा बदल देने पर भी उसके पीछे लगे रहते थे। अन्त में ब्रिटिश वैज्ञानिकों ने इन्हें भी भ्रमित कर दिया। हवाई तारपीडों विमानों द्वारा तैरते हुये बन्दरगाहों का निर्माण किया गया जिन्हें *Malberry Harburs* कहकर पुकारा गया, इंगलिश चैनल पर से खींचते हुये फ्रांस के नारमण्डी तट तक लाये गये। पेट्रोल की सप्लाई के लिये समुद्र के अन्दर प्लूटों नामक पाइप लाइन बिछायी गयी। DUKW नामक वाहनों का भी आविष्कार हुआ जो जल व थल दोनों पर चल सकते थे।

इतिहास के सर्वप्रथम परमाणु बम (प्लूटोनियम बम) का परीक्षण 16 जुलाई 1945 को अमरीका द्वारा न्यू मैक्सिकों रेगिस्तान में सफलता पूर्वक कर लिया। उसके ठीक तीन सप्ताह बाद अमरीका ने हिरोशिमा नगर पर 6 अगस्त 1945 को (U-235) परमाणु बम गिराया। इसी के साथ युद्ध का एक नवीन युग प्रारम्भ हो गया। दूसरा बम 9 अगस्त 1945 को गिराया गया ये दोनो परमाणु बम अमेरिकी सुपर फोर्टरस विमान से गिराये गये। इन परमाणु बमों का भार 10000 पौण्ड था। प्रथम विश्वयुद्ध की तुलना में द्वितीय विश्वयुद्ध समरतांत्रिक दृष्टि से बहुत भिन्न था। विनाश की मात्रा, विस्तार एवं क्षेत्रीय फैलाव, गतिशीलता वैज्ञानिक प्रगति, वायु शक्ति का स्थल व जल युद्ध पर प्रभाव, मनोवैज्ञानिक युद्ध इत्यादि की दृष्टि से अनेक समरतांत्रिक व कूटयोजनात्मक परिवर्तन हुये। इनमें प्रमुख समरतंत्र प्रविष्टीकरण तड़ित युद्ध समरतंत्र जर्मनी ने तोपखाने द्वारा आक्रमण को फायर सहायता करने वाली भूमिका के लिये

गोताखोर समरतांत्रिक बमवर्षक विमानों को चुना गया था। इस प्रकार वायुयान सहयोग उड़न तोपखाने की भूमिका निभाई तथा तीव्रतम टैंक के साथ तालमेल स्थापित किया।[31] जालीय तथा क्षेत्रीय रक्षा व्यवस्था अपनाई गई। एकबार प्रविष्टीकरण के सफल हो जाने पर आक्रमण सफल हो जाता था। मित्र राष्ट्रों का आपसी सहयोग एवं रेडार आदि का प्रयोग धुरी राष्ट्रों की पराजय एवं हिरोशिमा एवं नागासाकी में क्रमशः लिटिलब्याय एवं फैटमैन परमाणु बम गिराने के बाद ही द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति हो सका। तत्पश्चात विश्व के उपनिवेशी राष्ट्र स्वतंत्र होने लगे। भारत भी ब्रिटिश दासता से मुक्त हुआ और 14 अगस्त 1947 को पाकिस्तान के विभाजन के बाद भारत 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्र हो गया ।

अंग्रेजों द्वारा प्रसारित व्यापार नीति के फलस्वरूप उपनिवेश का प्रसार हुआ था। जिससे अंग्रेजो को अत्यधिक सैन्य शक्ति की आवश्यकता महसूस हुई। प्रथम विश्वयुद्ध में पराजित राष्ट्र जर्मनी, पुनः राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत होकर एवं हिटलर जैसा प्रभावशाली नेतृत्व को पाकर जर्मनी ने अपनी व्यावसायिक दक्षता इतनी अधिक बढ़ा लिया कि ब्रिटेन को भी चुनौती देने लगा। वायुयान, टैंक, जहरीली गैस, पनडुब्बियां तथा मशीनगनों का विकास हुआ जिससे सामरिक चालें परिवर्तित हो गई। ब्रिटेन ने रडार जैसे यंत्र का अविष्कार किया। द्वितीय विश्वयुद्ध में व्यावसायिक दक्षता ने मानवता का इतना ह्रास किया कि विजय पिपासा ने किसी भी क्षेत्र को नही छोड़ा जिसका उदाहरण अमेरिका द्वारा परमाणु बमों का प्रयोग जापान के हिरोशिमा एवं नागासाकी मे किया जाना था। जिसमें बच्चे, बूढे, महिलायें, पशु, पक्षियों, वनस्पतियों आदि किसी को भी नही छोड़ा। जिनका युद्ध से दूर तक भी सम्बन्ध नही था। नैतिकता के ह्रास का सबसे बड़ा उदाहरण है।

स्वतंत्रता के बाद क्रमश: परिवर्तन-

15 अगस्त 1947 को भारत स्वतंत्र राष्ट्र के अस्तित्व के रूप में विश्व रंगमंच पर उभर कर सामने आया।[32] भारतीय सशस्त्र सेनाओं का पुनर्गठन किया गया। स्वतंत्रता के पूर्व कमाण्डर इन चीफ ही सेना का प्रधान होता था तथा वही युद्धमंत्री का कार्य करता था।[33] किन्तु इस व्यवस्था को समाप्त कर प्रजातांत्रिक आधार पर इसका गठन किया गया। इतना ही नही सैन्य भर्ती में पूर्व प्रचलित जाति व धर्म का बन्धन समाप्त करके सैन्य संगठन में भारी परिवर्तन किये गये। 26 जनवरी 1950 को भारतीय गणतंत्र बनने पर भारतीय सेनाओं के साथ लगे रायल व हिजमैजेस्टी जैसे शब्दों को हटा तो दिया ही गया साथ ही सशस्त्र सेनाओं के ध्वजों व अधिकारियों के वैजों पर अंकित ताज के स्थान पर अशोक चक्र के चिन्ह के प्रयोग का शुभारम्भ किया गया।[34] सन् 1955 में तीनों सेनाओं के सेनाध्यक्षों को चीफ ऑफ दि आर्मी स्टाफ (थलसेनाध्यक्ष), चीफ ऑफ दि नैवल स्टाफ (नौसेनाध्यक्ष), चीफ आफ दि एअर स्टाफ (वायुसेनाध्यक्ष) का नाम दिया गया।[35]

सन् 1960 में भारतीय राष्ट्रपति को सम्पूर्ण सशस्त्र सेनाओं का प्रधान सेनापति घोषित किया गया। सशस्त्र सेनाओं पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित होने पर सैन्य संगठन भर्ती प्रशिक्षण आदि क्षेत्रों में जाति, धर्म व रंगभेद से मुक्त होकर सैन्य शक्ति को विकसित व सुदृढ़ करने हेतु व्यापक प्रयत्न प्रारम्भ किये गये। इसके साथ ही रक्षा मंत्रालय के नियंत्रण व निर्देशन में शस्त्रास्त्रों के आधुनिकीकरण हेतु रक्षा उद्योगों पर ध्यान केन्द्रित किया गया। रक्षा सैनिकों व अधिकारियों के प्रशिक्षण हेतु देहरादून, खड़गवासला, नईदिल्ली व पूना में संस्थानों के अतिरिक्त कोचीन, बम्बई, लोनवाला (नौसेना प्रशिक्षण हेतु) तथा वायु सैन्य प्रशिक्षण हेतु जोधपुर, कोयम्बटूर, व जलाहाली आदि स्थानों पर नवीन प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की गयी।

ब्रिटिश दासता से मुक्ति के पश्चात विश्व के गुटीय संघर्षो से बचकर स्वतंत्रता व प्रजातंत्र के रक्षार्थ भारत द्वारा निर्धारित गुटनिरपेक्षता की नीति के

बावजूद उसे भारत पाकिस्तान व चीन के सशस्त्र संघर्ष का सामना करना पड़ा है। भारत की विशालता तथा उदीनमान क्षमता से भयभीत होकर बड़ी शक्तियों के इशारों पर पाकिस्तान द्वारा बार–बार भारतीय अखण्डता को संकटापन करने की कोशिशे निःसन्देह रूप से भारतीय सुरक्षा के लिये चिंता का विषय है। रक्षाक्षेत्र में बढ़ रहे भारत के आसाधारण कदम परमाणु सामर्थ्य, मिसाइल क्षमता, विशाल जनशक्ति, सुदृढ़ औद्योगिक व तकनीकी आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्राप्त सम्मानीय दर्जे के कारण भारत के पड़ोसी देश चीन, पाकिस्तान व बांग्लादेश न केवल अनावश्यक रूप से भारत विरोधी गतिविधियों में संलिप्त है अपितु प्रत्येक कीमत पर वे भारतीय सुरक्षा को खतरे में डालने के षडयन्त्रों से बाज नही आते। यही कारण है कि उक्त खतरों के समुचित प्रतिकार तथा रक्षा व विकास की पारस्परिक निर्भरता के महत्त्व को समझते हुये भारत अपनी रक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ व कारगर बनाने के प्रयत्न करता रहा है।

सन् 1962 तक भारत रक्षा मामलों में आदर्शवाद, मानवीय मूल्यों व मान्यताओं के प्रति समर्पित रहने के कारण रक्षा तैयारियों के प्रति उदासीन रहा। सन् 1947 से 1962 की अवधि में रक्षा बजट 300 करोड़ वार्षिक के आसपास रहना तथा सम्पूर्ण राष्ट्रीय उत्पाद के दो प्रतिशत तथा केन्द्रीय सरकार के सम्पूर्ण व्यय के 12 से 14 प्रतिशत के आसपास सीमित रहने से यह स्पष्ट होता है कि रक्षा तैयारियों पर तत्कालीन भारतीय सरकार संवेदन शून्य रही। सन् 1962 में चीन से पराजित होने के पश्चात भारत ने रक्षा व विकास को एक सिक्के के दो पहलू के रूप में स्वीकारते हुये रक्षातंत्र के सुदृढ़ीकरण हेतु त्वरित कदम उठायें। फलतः भारत सरकार ने अपने रक्षा बजट में वृद्धि करके *G.N.P* का 3.5 प्रतिशत न केवल रक्षा तैयारियों हेतु रक्षा पंचवर्षीय योजनाओं का निर्धारण किया।[36] अपितु विदेशीनीति के पश्चात भारत में हुये सैन्य सुरक्षा विकास का ही परिणाम था कि तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के नेतृत्व में भारत सन् 1971 के भारत पाक युद्ध में बंगलादेश के स्वाधीनता संघर्ष में

आसाधारण विजय अर्जित करके सन् 1962 की पराजय की कालिमा को धोने में पूर्णतः सफल रहा ।

भारतीय स्थल सेना का इतिहास अत्यन्त गौरवपूर्ण रहा है। चन्द्रगुप्त मौर्य के शासनकाल में सन्तुलित स्थल सेना और राजपूत, मराठा व सिक्ख सैन्य पद्धति का क्रमिक विकास व इनके द्वारा विदेशी आक्रान्ताओं द्वारा लड़े गये विभिन्न संग्राम इसके साक्षी है कि वस्तुतः भारतीय सेना में लड़ाकू क्षमता शौर्य प्रदर्शन व सैन्य स्वाभिमान में कोई कमी नही थी। मेवाड़ के राजा संग्राम सिंह और महाराणा प्रताप, मराठा सरदार शिवाजी, सिक्ख के सेनापति रणजीत सिंह तथा दक्षिण भारत में टीपू सुल्तान आदि ऐसे भारतीय सेनानी थे जिनके शौर्य गरिमा व युद्धकला के अभिनव प्रयोगों से भारतीय सैन्य इतिहास की कीर्ति सदैव उज्जवल रही है। स्वाधीनता के पश्चात साम्प्रदायिकता के आधार पर विभाजित व लुंज–पुंज भारतीय स्थल सेना 1947–48 के कश्मीर युद्ध में पहले ब्रिटिश जी0 ओ0 सी0 इन0 सी0 जनरल डडले रसेल तत्पश्चात प्रथम भारतीय स्थल सेनाध्यक्ष जनरल के0 एम0 करिअप्पा के नेतृत्व में जिस अदभूत व प्रत्याशित युद्धकला का प्रदर्शन किया।[37] वह इस बात की पुष्टि करता है कि भारतीय सेना की गौरवशाली परम्परा का अभी आंशिक क्षरण भी नही हुआ है, जो उसकी नैतिक क्षमता एवं व्यावसायिक दक्षता का प्रमाण है। जनरल के0 एम0 करिअप्पा ने अपने कार्यकाल में पारम्परिकता एवं आधुनिकता के सुन्दर समन्वय द्वारा सेना में उत्कृष्ट अनुशासन कोर भावना, उच्च कार्य क्षमता एवं स्वस्थ नैतिक साहस का संचार करके एक संतुलित सैन्य ढांचा निर्मित करने का दूरदर्शी कार्य किया।

वर्तमान समय में भारतीय स्थल सेना 12 लाख 20 हजार है। जिसमें 10 कोर, 2 आर्मड डिवीजन, 21 इन्फेन्ट्री डिवीजन, 11 पर्वतीय डिवीजन, 19 स्वतंत्र ब्रिगेड, तीन मुक्त आर्टिलरी ब्रिगेड, 6 हवाई सुरक्षा ब्रिगेड, 4 इंजीनियर ब्रिगेड, प्रमुख युद्धक टैंक 3414, टी0–55 टैंक 800, टी0–22 टैंक 650, विजयन्तक टैंक, 1700, अर्जुन टैंक, (5 टैंको की पहली खेप 7 अगस्त 2004 को शामिल) इन्फैन्ट्री काम्बैट

व्हीकल–1100 एवं सैन्य तोपें 4175।[38] भारतीय थल सेना इस समय बोफोर्स तोपों बहुनाल राकेट लांचर, ओसा ए0के0 मिसाइलों, स्ट्रेसा हवाई सुरक्षा मिसाइलों, पुल बिछाने वाले तथा उपग्रह संचार प्रणालियों से तो सुसज्जित है ही साथ ही पाकिस्तान द्वारा एम0–11 मिसाइलों की भारतीय ठिकानों के विरूद्ध तैनाती को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार ने थल सेना को पृथ्वी मिसाइलों से सुसज्जित कर लिया है। इसके लिये थल सेना में एक मिसाइल संचालक टुकड़ी (333–मिसाइल ग्रुप) का गठन किया गया है जिसके अन्तर्गत संचालित होने वाली पृथ्वी मिसाइल की मारक क्षमता 150 किमी0 होगी और 1000 किग्रा0 तक विस्फोटक सामग्री शत्रु के ठिकानों पर गिराकर नष्ट करने में सक्षम होगी। पृथ्वी मिसाइल की रणनीतिक उपयोगिता में वृद्धि हेतु थल सेना को 8 पहियों को विशेष मोबाइल लांचर भी उपलब्ध कराये गये हैं। जिससे इन मिसाइलों को सीमा तक ले जाकर शत्रु के अन्दर तक महत्त्वपूर्ण ठिकानों का विध्वंस अपेक्षा कृत सरल हो गया हैं पाकिस्तान को अमेरिका से प्राप्त एम0–1 टैंक के फलस्वरूप उसकी समाघात क्षमता को मद्देनजर रखकर भारत ने भी अपनी कवचित सेना को आधुनिकीकृत करने की महत्वाकांक्षी योजना प्राप्त की है।

यद्यपि भारतीय रक्षा मंत्रालय ने 1996 तक थल सेना को अर्जुन टैंक के दो रेजीमेंट के गठन की घोषणा कि थी किन्तु विभिन्न तकनीकी बाधाओं के कारण ऐसा सम्भव होता न देखकर, अब टी0–72 टैंको का आधुनिकीकरण किया जा रहा है। भारत में मद्रास के निकट अवाड़ी में पूर्व सोवियत संघ की सहायता से बन रहे टी0–72 टैंको में सुधार लाकर स्लोवाक गणराज्य के मार्क–2 किस्म के टैंक की डिजाइन प्राप्त करने की कोशिश की जा रही है। युद्ध तकनीक में हो रहे क्रांतिकारी परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुये भारतीय थल सेना अधिक गतिशील डिवीजन तथा हवाई आक्रमण एवं जल व स्थल में कार्य करने वाले तोपखाना डिवीजनों को सम्मलित किया गया है। मुख्य युद्धक टेंको पर आधारित दो कवचधारी डिवीजनों के अतिरिक्त एक यंत्रीकृत डिवीजन तथा एक उड़ान भरने वाली कोर का भी गठन किया गया है। जो जैविक व रासायनिक युद्ध तकनीकों के विकास में सक्रिय

भागीदारी के अतिरिक्त उपग्रहों द्वारा प्राप्त सूचनाओं का उपयोग संचार व इलेक्ट्रानिक युद्ध के लिये करती है। सम्पूर्ण स्थल सेना का संचालन 6 कमानों पूर्वी कमान मुख्यालय कलकत्ता, पश्चिमी कमान शिमला, उत्तरी कमान–ऊधमपुर, दक्षिणी कमान–पूना, मध्य कमान–लखनऊ, प्रशिक्षण कमान–महू मध्यप्रदेश) से होता है।

आज भारतीय स्थल सेना की टुकड़ियाँ समुद्रतल कच्छ से लेकर 23 हजार फीट ऊँचे सियाचिन हिमनद तक फैली हुई है। उनके कार्य क्षेत्र में राजस्थान के रेतीला क्षेत्र अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड, मणिपुर, मिजोरम, व त्रिपुरा के जंगली क्षेत्र व सिक्किम, लद्दाख व कश्मीर आदि के हिमानी क्षेत्र के सम्मिलित होने से प्रत्येक मौसम व भौगोलिक विषमताओं के अन्तर्गत कार्य सम्पादन हेतु प्रशिक्षण प्राप्त करते रहना पड़ता है। उक्त विषमताओं में सैन्य बल की कार्य क्षमता कुशल परिवहन संचार व्यवस्था व आपूर्ति पर अवलम्बित होती है। 1984 में सियाचिन ग्लेशियर पर लगभग 1 बिग्रेड भारतीय सेना सीमा की रक्षा हेतु लगी हुई है। जिस पर प्रतिदिन लगभग 4 करोड़ रूपये व्यय हो रहे हैं। 1947 में हुये भारतीय विभाजन के फलस्वरूप नवगठित वायु सेना के भी विभाजन के कारण यह शक्ति घटकर मात्र सात स्पिटफायर एक परिवहन स्वाक्ड्रन तक सीमित हो गयी। स्वतंत्र भारत में 1948 में वैम्पायर डिमान्ड प्राप्त करके जेट विमान उड़ान वाली एशिया की प्रथम वायु सेना हो गयी। कानपुर में पड़े वेकार विमानों की मरम्मत करके भारत ने एक बमवर्षक स्क्वाड्रन का गठन करने के अतिरिक्त सन् 1949 में प्रशिक्षण कमान व 1956 में मेन्टीनेन्स कमान का गठन किया। सन् 1954 में सुब्रतो मुखर्जी के चीफ ऑफ एअर स्टाफ बनने पर भारतीय वायुसेना ने नये युग में प्रवेश किया। यहां पर उल्लेख प्रासंगिक होगा कि मार्सल ऐसे प्रथम भारतीय थे जिन्होने एक इस्वाक्ड्रन और एक कमान का सर्वप्रथम उत्तरदायित्व संभाला था। अप्रैल 1954 को राष्ट्रपति द्वारा वायुसेना को ध्वज प्रदान करने के परिणामस्वरूप वायु सेना पूर्णतः भारतीय हो गयी। यद्यपि भारतीय वायुसेना का विस्तार कार्य धीमी गति से चलता रहा। किन्तु 1962 में चीन से पराजित होने के पश्चात केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित प्रथम पंचवर्षीय के अंतर्गत वायुसेना के 45

इस्वाक्ड्रन करने, नये विमानों को शामिल करने तथा देश में ही इसके निर्माण करने जैसें ऐतिहासिक निर्णयों से विकास गति में तीव्रता आयी। फलतः 1965 के भारत–पाक युद्ध में हुयी भारतीय वायु सेना ने आकाश व जमीन में कुल मिलाकर 75 विमानों को नष्ट करके अपनी समाघात क्षमता स्पष्ट कर दी। इसी तरह 1971 के बांगला मुक्ति संघर्ष में भारतीय वायु सेना शत्रु को छिन्न–भिन्न करके इतिहास में गौरवशाली अध्याय जोड़ा।

1971 के पश्चात भारत में अपने पड़ोसियों विशेषकर पाकिस्तान व चीन पृथक एवं संयुक्त दबावों तथा उनकी बढ़ रही हवाई क्षमता को देखते हुये न केवल मिग व मिराज 2000 जैसे विश्व प्रसिद्ध वायुयानों को अपनी वायुसेना में सम्मिलित किया। अपितु रक्षा में आत्मनिर्भरता हेतु अपने देश में ही इनके निर्माण पर विशेष बल दिया। भारत के उक्तप्रयत्नों का सुफल था कि सन् 1980 में भारतीय वायु सेना ने सियाचीन, श्रीलंका, मालद्वीप में थल सेना को सम्भरण सहयोग उपलब्ध कराके यह स्पष्ट कर दिया है कि वह न केवल अपनी रक्षा में सक्षम व समर्थ है। वरन पडोंसियों की अपेक्षित सहायता की भी क्षमता रखती है। बाह्रय सुरक्षा के अतिरिक्त प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, भूकम्प, चक्रवात अकाल आदि के समय भी वायु सेना ने महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। अत्याधुनिक तकनीकी के साथ कदम से कदम मिलाते हुये आज भारतीय वायु सेना आधुनिकतम विमानों, शस्त्र प्रणाली व संचार यंत्रों से सुसज्जित है भारतीय वायुसेना की वर्तमान स्थिति 115000 सैन्य शक्ति, लड़ाकू विमान 738, हथियार बन्द हेलीकाप्टर, हल्की बाम्बर इस्वाक्ड्रन 25, फाइटर 13 इस्वाक्ड्रन, हेलीकाप्टर 22 इस्क्वाड्रन, लड़ाकू विमानों में केनबरा, मिग–21, मिग–23, मिग–25, मिग–27, मिग–29, जगुआर, मिराज–2000, तथा सुखोई–एस0यु0 30 प्रमुख है। न्यूक्लियर वारहेड–60, मिसाइल–पृथ्वी, त्रिशूल, आकाश, नाग, अग्नि शागरिका तथा धनुष (निर्माणाधीन सूर्य आदि मिसाइलें हैं)। वायुसेना 7 कमानों (पश्चिमी कमान–दिल्ली, दक्षिण पश्चिम एअर कमान–जोधपुर, दक्षिणी एअर कमान–त्रिवेन्द्रम, मध्य एअर कमान–इलाहाबाद, पूर्व एअर कमान शिलांग, प्रशिक्षण

एअर कमान बंगलौर तथा मेन्टीनेन्स एअर कमान–नागपुर) में नियंत्रित है। भारतीय वायुसेना में मिराज–2000 व मिग–29 जैसे विमानों के शामिल होने से इसकी समाघात क्षमता में अद्‌भुत वृद्धि हुई है। मिराज का भारतीय नाम बाज भी है। यह विमान 14.35 मीटर लम्बा है तथा ध्वनि की तीन गुनी गति से 65 सौ फीट 1480 किमी0 लक्ष्य भेद सकता है। इसमें 100 किमी0 क्षमता वाला रडार कम्प्यूटर व रडार वार्निंग सिस्टम के साथ 30 एम0एम0 की दो डैफा मिसाइलें, दो मेटा सुपर–530 इण्टर सेक्टर मिसाइलें तथा दो मेट्रा मैजिक मिसाइले भी लगाई जा सकती हैं, जो 6 दिसम्बर 1984 को मिग–29 को भी भारतीय वायुसेना के इस्क्वाड्रन नं0 28 व 47 में सम्मिलित किया गया। यह अमेरिका के 16 विमानो से बेहतर है। एक सौ पचास रूसी एस0यु0–30 एम0के0 आई लड़ाकू विमानों के उत्पादन हेतु सम्पन्न भारत–रूस समझौते के फलस्वरूप भारतीय वायुसेना में नयी ऊर्जा का संचार हुआ है। इस उत्कृष्ट विमान से हवा से हवा में मार करने वाली मिसाइलों (ए0ए0एम0) पार्किंग के लिये 12 हार्ड प्वाइंट बने हैं तथा इसके लचीले इंजन नाजल्स से विमान की उत्कृष्टता में पर्याप्त वृद्धि हो गयी है। पूर्व वायुसेना अध्यक्ष ए0आई0 टिपनिस का मत है कि "यह हमारे लिये लम्बी छलांग है इससे हमारी रणनीति और रक्षात्मक क्षमता में कई मामलों मे इजाफा होगा। एस0यु0–30 वायुसेना को भारतीय एटमी हथियार ढ़ोने के लिये मिराज 2000 के अलावा एक अन्य प्लेटफार्म प्रदान करेगा।" इतना ही नही ब्रिटेन से 66 आधुनिक जेटट्रेनर तथा इजराइल से हेरोन व हरमिन्स मानव रहित हवाई वाहन प्राप्त करके भारत ने अपनी वायु सेना को अत्याधुनिक बनाने का प्रयत्न किया है।[39]

भारत की नौ सेना के पास 1947 में मात्र 4 जलयान, 2 फिग्रेट, 12 माइन स्वीपर तथा एक लैडिंग क्राफ्ट से युक्त स्वतंत्र भारत की जर्जर नव सेना अपने लम्बे समुद्र तट (लगभग 5600 किमी0) की रक्षा हेतु सर्वथा अयोग्य थी। अतः इसे सन्तुलित एवं विकसित करने पर बल दिया गया। किन्तु स्थल व वायुसेना की तुलना में भारतीय नौ सेना की प्रगति पर्याप्त धीमी रही। लगभग 11 वर्षों के बाद वाइस

एडमिरल आर0डी0 कटारी प्रथम भारतीय नौसेनाध्यक्ष बन सके क्योंकि स्व0 जवाहर लाल नेहरू यह समझते थे कि तुलनात्मक रूप से नौसेना अत्यन्त तकनीकी है, और भारतवासी इतने सक्षम नही हुये कि नौसेना की बागडोर सम्भाल सकें। राष्ट्रीय कर्णधारों की नौ सेना के प्रति दर्शायी गयी उपेक्षा के कारण भारतीय नौसेना स्वाधीनता प्राप्ति के बाद के प्रथम दो दशकों में न तो अपना समुचित विकास ही कर सकी और न ही इस अवधि में भारत द्वारा लड़े जाने वाले युद्धों में कोई सक्रिय हिस्सा ले सकी। प्रथम दशक मे आई0एन0एस0 दिल्ली नामक क्रूजर (1948 में) तीन विध्वंसक पोत (राजपूत, रणजीत, राणा,) चार फ्रिगेट (जमुना, सतलज, कृष्णा, कावेरी) पनडुब्बी भेदी फ्रिगेट खुखरी (जो 1971 के भारत–पाक में जल समाधि को प्राप्त हुआ) तथा वायुयान भेदी ब्रम्हपुत्र आदि जलयान भरतीय नौसेना के लिये खरीदे गये। द्वितीय दशक में आई0एन0एस0 मैसूर नामक क्रूजर (दिसम्बर 1957 में) ब्रिटेन से प्राप्त विमान वाहक पोत आई0एन0एस0 व्रिकांत, (नवम्बर 1961 में) तथा 8 फ्रिगेट भारतीय नौ सेना में सम्मिलित किये गये। प्रथम पंचवर्षीय रक्षा योजना (1964–69) के अन्तर्गत कुछ प्राचीन जलयानों को नये जलयानों में बदलने पनडुब्बियां तथा आधुनिक युद्धपोत प्राप्त करने का निश्चय किया गया। परिणामस्वरूप 1967 में तेलवाही पोत आई0एन0एस0 दीपक और प्रथम रूसी पनडुब्बी आई0एन0एस0 कलवारी (8 दिसम्बर 1967) नौ सेना का अंग बनी 1970 तक रूस से अन्य तीन पनडुब्बियां प्राप्त कर प्रथम पनडुब्बी इस्क्वाड्रन तैयार किया और विशाखापट्टनम पर इनका वेस (आई0एन0एस0 वीरबाहू) भी कमीशन हो गया। दिसम्बर 1971 के भारत पाक युद्ध में भारतीय नौ सेना द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करने के बाद भारतीय जहाजी बेड़े में एवं उसकी कमियों को पूरा करने के लिये 1972–73 सत्र में ठोस योजना का निर्धारण किया गया। परिणामस्वरूप मार्डन रीचवर्क शाप कलकत्ता और मझगाँव डॉक बम्बई तथा राष्ट्र के अन्य जहाज निर्माण कारखानों में जलयान निर्माण को काफी प्रोत्साहन मिला लियेण्डर श्रेणी के फ्रिगेट (युद्धपोत) बनाने में सक्रिय मझगवां डाक द्वारा 3 जून 1972 का आई0 एन0एस0 नीलगिरी भारतीय नौसेना का अंग बन गया। बम्बई मझगाँव डॉकयार्ड आधुनिक साज सज्जा से युक्त लियेण्डर श्रेणी के छः फ्रिगेट

(हिमगिरि, उदयगिरि, इनागिरि, नीलगिरि, तारागिरि, तथा विंध्यागिरि) तैयार कर चुका है। 1980–90 के दशक में रूस से प्राप्त विध्वंसक तथा ब्रिटेन से प्राप्त सी0 हैरियर मार्क–2 नौ सैनिक लड़ाकू विमान एवं सीकिंग हेलीकाप्टर तथा रूस से प्राप्त पनडुब्बियों का दूसरा इस्क्वाड्रन (कुल 8 पनडुब्बियाँ) भारतीय नौसेना में सम्मिलित किया गया। 1986 में बिट्रेन से हरमीज नामक विमान वाहक पोत खरीदकर उसे 'विराट' नाम देकर परिमार्जित किया गया। आणविक पनडुब्बी भारतीय नौसेना में शामिल की गई। (निर्धारित अवधि एवं उद्देश्य) पूर्ण होने पर इसे 5 जनवरी 1991 को वापस किया जा चुका है। इसके साथ ही भारतीय वायुसेना के पुराने जहाजों को आधुनिक शस्त्र एवं साज सज्जा से युक्त आधुनिक जहाजों में परिवर्तित करने के प्रयास भी किये गये।

1991 में आई0एन0एस0 'रांजालि' 1992 के अंतिम चरण में मिसाइल वोट 'विभूति' तथा 4 जून 1993 को विध्वंसक श्रेणी के भारतीय युद्धपोत 'मैसूर' का जलावतरण भी भारतीय नौसेना की समाघात सक्षमता में मील का पत्थर प्रमाणित हुआ। यह युद्धपोत नवीनतम इलैक्ट्रानिक उपकरणों के साथ–साथ आधुनिक शस्त्र प्रणाली हेलकाप्टर तथा पूर्व चेतावनी देने वाले शक्तिशाली राडार आदि से भी सुसज्जित है। भारतीय नौसेना को सुदृढ़ बनाने के लिये सोवियत " किलाश्रेणी" की 8 तथा जर्मन एच0डी0डब्ल्यू श्रेणी की 4 पनडुब्बियाँ प्राप्त करने के साथ–साथ पनडुब्बी निर्माण एवं विकास पर विशेष बल दिया गया। 1991–92 में नौसेना ने मिसाइल कारवेट, पनडुब्बी विरोधी गस्ती पोत सीकिंग हेलीकाप्टर तथा एक पनडुब्बी को अपने साथ जोड़ा गया तथा पनडुब्बियों से सम्पर्क साधने हेतु तमिलनाडु से एक संचार स्टेशन को भी जोड़ा गया और विशाखापटटनम में पनडुब्बी मुख्यालय स्थापित किया गया। जर्मन शिपयार्ड के सहयोग से मझगांव डांकयार्ड 1500 टाइप की पनडुब्बी आई0एन0एस0 'सलकी' का निर्माण कर भारत आधुनिक पनडुब्बियाँ बनाने वाले प्रमुख देशों की सूची में आ गया। 7 फरवरी 1992 को इस आई0एन0एस0

'संकुल' समुद्र में उतारकर भारतीय नौसेना राष्ट्रीय सुरक्षा में प्रशंसनीय योगदान दिया है।

भारतीय नौसेना की शक्ति वर्तमान में नौसेना बल 53000 (जलपोती वायु बल सहित) पनडुब्बी–16 (एक अणुचालित और 13 अन्य निम्नवत्) सिन्धुघोष–03 (रूसी किलो) शिशुमार–02 *(F.R.G.T.209/1500)* खुरसुरा–08 (रूसी फाक्सद्राट) विमान वाहक–एक, गाइडेड मिसाइल डेस्टायर्स–8, फ्रिगेट–14 मिसाइल क्राप्ट–13, माइनवर फेयर वेसेल्स 18, कुल पेट्रोल एवं कोस्टेल कम्बेट 32, नौसेनिक लड़ाकू विमान 28, नौसैनिक सशस्त्र हेलीकाप्टर–53, पनडुब्बी रोधी युद्धक–10 एलीडोविमान, 20 सीकिंग, 10 चेतक हेलीकाप्टर हैं।[40]

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में अपनी सैन्य सामर्थ्य आश्चर्यजनक गति से वृद्धि की है, एवं पूर्व के सभी आक्रमणकारियों का सेना द्वारा जिस नैतिक साहस एवं व्यवसायिक दक्षता के साथ मुह तोड़ उत्तर दिया है। वह इतिहास के स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। सुदृढ़ रक्षा तंत्र के निर्माण एवं राष्ट्रीय सुरक्षा को अक्षुण्य बनाये रखने में पर्याप्त रक्षा बजट का महत्वपूर्ण स्थान होता है। पर्याप्त धन के आभाव में न तो सेनाओं को आधुनिक संहारक हथियारों से सुसज्जित किया जा सकता है और न ही रक्षा अनुसंधान कार्य को ही संचालित किये रखा जा सकता है। यही कारण है कि धन को रक्षा की चौथी भुजा के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। प्राकृतिक रूप से युद्ध के लिये आवश्यक चार एम0 (*4M- men, material, money, munition*) में धन की भूमिका महत्वपूर्ण है। द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात जो शीतकाल में शस्त्रीकरण की दौड़ प्रारम्भ हुयी। वह निरस्त्रीकरण के विभिन्न वार्ताओं के बावजूद आज भी चल रही है। असुरक्षा की भावना से संतृस्त विश्व के सभी कमजोर व शक्तिशाली राष्ट्र अपनी रक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने हेतु अपने राष्ट्रीय आय के अधिकांश भाग को रक्षा तैयारियों पर व्यय करने हेतु विवश हैं। भारत एशिया की चौथी सैन्य शक्ति है। सैन्य तैयारियों के लिये पाकिस्तान किस हद तक जा सकता है। कम से कम समय में वह कोई भी रक्षा सौदा कर सकता है। वजह स्पष्ट है कि पाकिस्तान में सैन्य

शासन है, लोकतंत्र की चुनी हुयी सरकार नही। जबकि चीन का सपना दुनिया में अपना एकाधिकार बनाना है। चीन वही स्थिति पाना चाहता है जो आज अमेरिका का है। इसके लिये उसके पास समृद्ध हो चुकी अर्थव्यवस्था और देश हित में शसक्त निर्णय लेने वाली सरकार है। इसके लिये वह सैन्य खर्च को 10 साल में दुगने से अधिक बढ़ा चुका हैं इस साल भी रक्षा बजट में कुल 17 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी की है। वहीं भारत के पास उम्दा किस्म के सैन्य अफसर, बेहतरीन फौज और सेनाओं की स्तरीय आधुनिकीकरण की परियोजनायें हैं। लेकिन हमारी चाल सुस्त है, हमारी रक्षा तैयारियाँ कभी नौकर शाही के शिकंजे में दम तोड़ देती हैं। कभी सरकार के लचीले रवैया का शिकार हो जाती हैं।

1987 के बाद से अब तक हम बोफोर्स जैसी कोई तोप नही ले सके। रूस की क्रासनोपोल को छोड़कर अन्य कोई विशेष रक्षा सौदा नही हुआ। क्रास नोपोल के नतीजे भी इतने खराब निकले कि सेना उसके इस्तेमाल से परहेज करने की सोंच रही है। पूरी आर्टीलरी इससे प्रभावित हो रही है। कारगिल संघर्ष के बाद पिछले आठ साल से 155–MM तोप लेने की सेना अनवरत कोशिश कर रही है। पर अब तक उसे सफलता नही मिल पायी है। आज भी हमारे जवान पुराने तंत्र पर दुश्मन से मुकाबले के गुर सीख रहे हैं। वायु सेना पिछले 9 साल से बहुउद्देशीय लड़ाकू विमान का सपना संजोये है अब उसकी जरूरत 250 से भी अधिक उन्नत और बहुउद्देशीय लड़ाकू विमानों की है। पिछले दो–तीन वर्षों में इसके लिये तीन बार आर0एफ0पी0 तैयार हुयी, पर अब तक वह जारी न हो पायी है। लड़ाकू विमानो की जब तक तकनीकी काष्ठ तय न हो जायेगी इस सौदे में ग्रहण लगा रहेगा। इसका असर वायु सेना के प्रशिक्षण, उसकी दक्षता व क्षमता पर पड़ रहा है। कहां उसने 39 इस्क्वाड्रन लक्ष्य (एक इस्क्वाड्रन में सोलह लड़ाकू और दो प्रशिक्षण विमान होते हैं।) रखा है और कहां उसकी ताकत 29 इस्क्वाड्रन पर सिमट गयी है। जबकि तमाम ऐसे हेलीकाप्टर ले लिये जाते हैं। जिनकी उसे जरूरत नही होती है। सरकार ने बेस्टलैण्ड हेलीकाप्टर बिना सेना की इजाजत के लिये थे। आज नतीजा सामने है

सारे बेस्टलैण्ड हेलीकाप्टर अपने उड़ान के अवसर के लिये तरस रहे हैं। नौसेना की कहानी भी इससे अलग नही है। तीनों सेनाओं के पास भविष्य की तैयारियों के मद्देनजर 20 बड़ी परियोजनाएं हैं। यदि इन सब पर समय रहते अमल हो जाये तो पाकिस्तान हमें आंखे दिखाने का साहस नही कर सकता। चीन को भी कुछ करने से पहले कई बार सोचना पड़ेगा। भारत में नौसेना के लिये फ्रांस से 6 स्कोर्पीन पनडुब्बी का सौदा किया। एअर डिफेंस के लिये एअर क्राफ्ट कैरियर लेने की योजना है। माना जा रहा है कि 3262 करोड़ रूपये लागत वाला यह एअर क्राफ्ट कैरियर 2012 तक नौसेना का हिस्सा बन जायेगा। इसके अतिरिक्त रूस से आई0एन0एस0 विक्रमादित्य (एडमिरल गोर्शकोव) लेने की योजना है शिवालिक क्लास की गाइडैड मिसाइल फ्रिगेट, 12 आधुनिक कैरियर बार्न, मिग–29 फाइटर, बंगलौर क्लास की गाइडेड मिसाइल डिस्ट्रायर आदि के लिये नौसेना ने अपनी योजना बनायी है। नौ सेना की तरह वायुसेना को 237 सुखोई लड़ाकू विमान चाहिए। 250 से अधिक चौथी पीढ़ी के बहुउद्देशीय लड़ाकू विमान चाहिये। आई0एल0–78 टैंकर फ्लीट, मिराज, ग्रीन पाइन रडार, मानव रहित टोही विमान सेना को जरूरत है। इसके अतिरिक्त एअर डिफेन्स के लिये बराक मिसाइल, ऐरोस्टेट रडार, सिन्थेटिक अपरचर रडार, लेजर गाइडेड बम की पूरी श्रंखला होनी चाहिये भारतीय सेना को दो सौ के करीब हेलीकाप्टर और दो हजार के ऊपर मुख्य बैटल टैंक की जरूरत है। भारतीय सेना एक अच्छी सशस्त्र सेना है नाटों के कमांडो भी हमारी सेना का लोहा मानते हैं। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि सेना का मानव प्रबंधन लड़खड़ाया हुआ है। इसके चलते सैनिक आत्महत्या कर रहे हैं और अपने अधिकारियों पर निशाना साध रहे हैं। इसका सबसे बड़ा कारण नैतिक क्षरण है। जिसके कारण सेना में भ्रष्टाचार बढा है। जिससे प्रबंधन व्यवस्था कमजोर पड़ रही है। पिछले कुछ दशकों से रक्षा सौदों घोटाला एवं आपूर्ति में बाधा पडने से व्यावसायिक दक्षता में कमी आ रही है। अतः सेना के मानसिक शारीरिक एवं व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के लिये नैतिक स्तर के क्षरण को रोकना चाहिए।

सन्दर्भ

1. ब्रिगेडियर राजेन्द्र सिंह, "भारतीय सेना का इतिहास" सरदार अतर सिंह आर्मी एजुकेशनल स्टोर नई दिल्ली 1965 पृ0 –73

2- *David chandler.. The army of British India Oxford New yark O.U. Press 1994/P.. 379*

3- *Ibid – David, P. 379*

4- *Ibid - David P. 380*

5- *Ibid - David P. 380*

6. अजय मोहन, 'प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 का सैनिक मूल्यांकन (अवध के विशेष सन्दर्भ) में" शोध प्रबन्ध पृ.–112

7- *Sir Henari Lawrance.. Indian Army and oudh/Suampere friend of India press-1859 P.-175*

8- *Ibid Sir Henari 2/ P. -176*

9- *H.D. Napies.. Field marshal lord Napies, londan 1927/ P.- 167*

10- *Ibid - P.P. -26,192*

11- *Ibid - P.- 209*

12- *S.T.Dash.. Indian military history its history and development, New delhi shagar publication 1969/P.-9*

13- *David Op-cit, page-396*

14- *Janak singh.. The role of armed of forces in Indias defens in 1971 thesis/ P.P-36 ,38*

15- *Bri. Rajendra Op-cit - page -156*

16- *Ibid - page -160*

17- Cyal fals.. Hundred years of war 1961 Londan, - page -179

18- Ibid - page -163

19- J.F.C. Fuller.. Armament and history, page -136

20- Dupuy and dupuy.. Military Heritage of America, Mc graw hill 1956 page -337

21- fuller Op-cit page -141

22- C.R. goal.. Tactics and weapons/ Chandra prakash and brothers hapud, –page -85

23- fuller Op-cit page -147

24- Gorden wright.. The orderd of total war harper and row landan 1968, page -177

25- fuller Op-cit page -131

26- Ibid - page-131

27- Garden Op-cit page-173

28- Ibid - page-186

29- Ibid - page-98

30- Fuller Op-cit page-157

31- Palit D.K. .. Essentials of Military Knowledge Gale and Polden 1951 Page-34

32- Janak singh, Op-cit- 151

33- H.S. Bhatia.. Mmilitary of british India (1602-1947) new delhi deep and publication – 1977, Page- 61

34- Indian armed forces year book- 1974-75 fourth year of pub. P.-452

35- Ibid p-452

36- Nevilee Maxwell.. Indias china war. Jaico pulilishing house Bombay, 1971 p-293

37- K.M. panikkar.. Problems of Indian difference, Bombay asia pub house, 1960 p-55

38- Hindustan times 24 may 2002

39- Hindustan times 25 may 2002

40- Hindustan times 24 may 2002

तृतीय अध्याय

राजनैतिक नेतृत्व का सैनिक नेतृत्व पर प्रभाव, लोकतंत्र का विकास एवं समाजवादी समाज की उपलब्धियाँ-

ब्रिटिश शासन में सशस्त्र सेनोओं का स्तर-

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना के पश्चात कम्पनी कारोबार की सुरक्षा हेतु सुरक्षा गार्डों की भर्ती कम्पनी अधिकारियों ने की थी। इन गार्डों को ब्रिटिश सरकार की सेना की सहायता से प्रशिक्षित किया गया। आगे चलकर यही गार्ड कम्पनी की सेना के रूप में परिवर्तित हो गये। इन सैनिकों को ही ब्रिटिश सेना में परिवर्तित किया गया। इन सैनिकों के स्तर का आधार भारतीय उपमहाद्वीप में ब्रिटिश शासन की सुरक्षा आवश्यकताएं थीं। इस सन्दर्भ में अंग्रजों द्वारा समय–समय पर जो प्रयास किए गये उन्ही प्रयासों के अन्तर्गत–मुंगलों की शक्ति को अंग्रेजों ने खण्डित किया, मराठों की शक्ति अफगानों ने खत्म की और जब सब एक दूसरे से लड़ रहे थे तब अंग्रेज सबको समाप्त करने में सफलता प्राप्त की।[1] देश पहले से ही हिन्दू और मुसलमान, जनजातियों एवं जातियों में विभक्त था। यह समाज ऐसे संन्तुलन पर आश्रित था जिसका आधार था सदस्यों का पारस्परिक विकर्षण और वैधानिक पार्थक्य ऐसा देश और ऐसा समाज तो मानो विजय का पूर्व निश्चित लक्ष्य था। पूंजीवाद राष्ट्र में देशभक्ति और राष्ट्रवाद का बड़ा गहन भाव होता है। सामंती जनसमुदाय भौतिक रूप से असंतृप्त होता है। इसमें रंच मात्र भी आश्चर्य नही पूंजीवादी ब्रिटेन ने असंयुक्त सामंती भारत पर आसानी से विजय हासिल कर ली।

अंग्रेजों की सेना में देशी राजाओं की सेनाओं से आये हुये सैनिक तथा साधारण जनता के लोग भर्ती हुये। अंग्रजों ने इन सैनिको का वेतन शुरूआत में नियमित दिया किन्तु बाद में वेतन अनियमित हो गया। अंग्रेज सेना का उद्‌देश्य मात्र देशी राजाओं की सेनाओं को परास्त करना था। भारतीय शासकों द्वारा लड़ा गया 1857 का स्वतंत्रता संग्राम जिसमें किसानों एवं सिपाहियों ने भी ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया के विरूद्ध लड़ाई लड़ी जिसमें अंग्रेजों की भारतीय सेना विद्रोहियों से मुकाबला करने में नाकाम रही, परिणाम स्वरूप ईस्ट इण्डिया कम्पनी को इंग्लैण्ड से सेना मंगानी पड़ी। अंग्रेजो ने आधुनिक सैन्य बल एवं संगठन के द्वारा स्थनीय राजाओं को परास्त किया। यह ब्रिटिश शासन की आयातित सेना से ही सम्भव हो सका। फलतः ब्रिटिश

शासन ने कम्पनी के हांथ से सत्ता खींच कर भारतीय शासन को अपने नियंत्रण में ले लिया। सन् 1859 तक विद्रोही सैनिक लगभग या तो मारे गये, कैद कर लिये गये, या भाग गये। दिल्ली अंग्रेजों के अधीन पुनः आ जाने के बाद विद्रोही हताश हो गये। नये नेतृत्व की कोई आशा नही बची। भारतीयों की स्थिति काफी बिगड़ गयी। उनकी कृषि, शिल्पकारी एवं उद्योग धन्धे शनैःशनैः नष्ट हो रहे थे। इस भयावह स्थिति से निकल पाने का कोई मार्ग न पाकर वे इसे सहज रूप से स्वीकार कर चुके थे। इस विषम आर्थिक स्थितियों के बीच अगर कोई उनको यह बताने वाला होता कि उनकी आर्थिक विपन्नता का कारण उनका निष्क्रिय नियतिवाद है तो सम्भवतः 1857 के स्वर्ण अवसर को वे न चूकते। अंग्रेजों को सम्बोधित करते हुये लार्ड क्रोमर ने लिखा था–"मैं चाहता हूं कि अंग्रेजों की नवयुवक पीढ़ी भारतीय गदर के इतिहास को पढ़े, ध्यान से देखे–सीखे और मन में पचाये यह शिक्षाओं और चेतावनी से भरा है।"[2]

अंग्रेजों का ख्याल था कि भारतीय हर हाल में गुलाम बनाये जा सकते हैं। 1830–55 के बीच के कई प्रमाण मिलते हैं जिनसे यह पता चलता है कि अंग्रेज भारतीयों से किसी प्रकार के सक्रिय प्रतिरोध की आशा नही करते थे। जिन स्थितियों में भारतीय सिपाहियों को उन्होने अपनी छावनियों में रखा था उनसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे भारतीयों को जन्मजात गुलामों के अतिरिक्त और कुछ नही समझते थे जो भेदभाव अंग्रेज अफसर, अंग्रेज सिपाहियों तथा भारतीय सिपाहियों के बीच करते थे उससे भी स्पष्ट होता है कि भारतीयों को हिकारत की नजर से देखते थे। जिस भेदभाव पूर्ण व्यवहार का अनुशरण अंग्रेजों ने किया उससे स्पष्ट है कि वे 1857 जैसे विद्रोह की कल्पना भी नही कर रहे थें। विद्रोह के कारण तो सब मौजूद थे और अंग्रेजों को भी इन कारणों का अहसास था। किन्तु वे यह नही समझते थे कि सात रूपया माहवार पाने वाले सिपाही उनके विरूद्ध उठ खड़े होंगे। 1857 की प्रवृत्ति ने जैसे उनको नींद से जगा दिया। पहली दफा उनको अहसास होने लगा कि भारत की आत्मा में विद्रोह की सम्भावनायें मौजूद हैं।

1857 में महारानी विक्टोरिया का शासन स्थापित होने के पश्चात सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के लिये रक्षा कारखानों का शुभारम्भ किया गया इसके पूर्व ईस्ट इण्डिया कम्पनी द्वारा 1801 में कलकत्ता के निकट काशीपुर में पहली 'गनएण्डशेल' फैक्ट्री स्थापित की गयी। 1859 में किरकी में रक्षा कारखाना खोला गया। सेना की बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये 1901 में ईशापुर में रक्षा कारखाना का निर्माण किया गया। एवं 1904 में जबलपुर में "गनकैरेजफैक्ट्री" स्थापित की गयी थी।[3] द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान ब्रिटिश शासकों ने हिन्दमहासागरीय क्षेत्र में उत्पन्न सम्भावित खतरों को ध्यान में रखते हुये, ब्रिटिश भारतीय सेना का स्तर उठाने हेतु रक्षा उद्योगों के विकास पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। इस अवधि में ही बंगलौर में बालचन्दएअरक्राप्ट फैक्ट्री तथा बम्बई व कलकत्ता में क्रमशः मजगाँव व गार्डनरिच डांकयार्ड की स्थापना की गई जिनमें हवाई जहाज व जलपोतों की मरम्मत का कार्य प्रारम्भ किया गया। 1947 ई0 तक 16 आर्डीनेन्स फैक्ट्रियों का निर्माण हो चुका था। जो रक्षा उद्योग क्षमता का प्रमुख स्रोत थी, जिनमें उच्च तकनीक के शस्त्र राइफलें, बन्दूकों, गोला बारूद, सुरंगो व अन्य विस्फोटकों का उत्पादन होता था। इनका सम्पूर्ण उत्पादन पन्द्रह करोड़ का था।[4]

अंग्रेज ने भारतीय सिपाहियों को कभी यह अहसास नही होने दिया कि वे अंग्रेजी साम्राज्य के लिये महत्वपूर्ण हैं एवं उनके प्रति हमेशा सौतेला व्यवहार ही किया। अंग्रेज इस बात को भूल ही गये जिस भारतीय जनता का वो शोषण कर रहे हैं। उन्ही गरीब किसानों एवं मजदूरों के बीच से ही निकलकर नवयुवक सेना में भर्ती हुयें है। उन्होने भारतीयों को सेना में सिपाही और हवलदार से ऊपर के पदों पर नियुक्तियां ही नही दी। सन् 1787 में प्लासी की लड़ाई के बाद 1857 के स्वाधीनता संग्राम तक अंग्रेज भारतीय सैनिकों की उपेक्षा करते रहे लेकिन 1857 के बाद सेनाओं के स्तर में सुधार का प्रयास किया।

प्रथम विश्वयुद्ध एवं द्वितीय विश्व युद्ध में जिस प्रकार भारतीय सेना ने युद्ध मोर्चों पर अपनी वीरता का प्रदर्शन किया, उससे स्पष्ट होता है। कि अंग्रेजी नेतृत्व ने

युद्ध के समय उनका सम्मान किया, उनके स्वाभिमान को प्रतिस्थापित किया तथा उनके प्रति अपनी आस्था प्रदर्शित की, जिससे भारतीय सैनिको ने विपरीत मौसम में तथा प्रतिकूल संभरण के बावजूद तथा पुराने अस्त्र–शस्त्रों से ही अत्याधुनिक हथियारों से युक्त धुरी राष्ट्रों के आक्रमणकारी सैनिकों से मुकाबला किया। अत्याधुनिक मशीनगनों के सामने भारतीय जवानों की टुकड़ी सिंगल फायर राइफल लेकर किस प्रकार सामूहिक मौत के शिकार होते थे जिसे देखकर किसी की भी रूह काँप सकती थी। भारतीय सेना के जवानों तथा जनता की स्थिति को देखकर ब्रिटिश लेखक वायरन ने लिखा है। "कि इंग्लैण्ड कि मिनरवा नाम की देवी इंग्लैण्ड के निवासियों को शाप देती है। अंग्रेजों को स्वधीनता प्राप्त हुई है। लेकिन वे अपनी स्वाधीनता का दुरुपयोग कर रहे हैं। ये दूसरों को गुलाम बना रहे हैं जिन्हे वे गुलाम बना रहें हैं वे एक दिन अवश्य विद्रोह करेंगे और उन्हे अपने देश से निकाल बाहर करेंगे। मिनरवां अंग्रेजों से कहती है कि पूरब की तरफ देखो गंगा के किनारे ये जो काले आदमी है, वे तुम्हारे अत्याचारी साम्राज्य को उसकी जड़ सहित उखाड़ देंगे। देखो वह विद्रोह अपना भयावना सिर उठा रहा है और देशी जनों की मृत्यु का प्रतिशोध दहक रहा है। सिंधु नदी लालरक्त की धारा जैसी बह रही है वह बहुत पुरानी मांग अब पूरी हो रही है इसी तरह तुम्हारा नाश हो रहा है। कैलाश देवी ने जब तुम्हें स्वाधीन नागरिकों के अधिकार दिये थे, तब उसने निषेध किया था कि दूसरों को दास मत बनाना।"[5] वायरन एक सफल भविष्य दृष्टा साबित हुये। अंग्रेज नेतृत्व अंग्रेजी सैनिकों को ज्यादा तनख्वाह, देशी सिपाहियों को कम तनख्वाह कम भत्ता देते थे। समान कार्य के लिये समान वेतन लागू नही था। यदि देशी सैनिक अपनी शांतिपूर्ण मांग भी रखते तो उनको कड़ी सजा मिलती थी। जहां विद्रोह की झलक भी दिखाई दी तुरंत तोप से बांध कर उनको उड़ा देते थे।

इस तरह आतंक के द्वारा वे देशी सिपाहियों को अपने नियंत्रण में रखते थे। कैम्पबेल ने एक बहुत अच्छा शब्द इस्तेमाल किया "मिलिट्री ट्रेड यूनियनिज्म" देशी फौज के अन्दर एक तरह का फौजी मजदूर पन जाग रहा है।[6] दूसरी ओर अंग्रेजों ने

अपनी राष्ट्रीय सेनाओं इंग्लैण्ड की इतनी ज्यादा व्यावसायिक दक्षता बढ़ा दी थी कि विश्व में एक शक्ति का साम्राज्य छा गया था। जानहर्ज व अन्र्स्टहॉस जैसे विद्वानों ने 18वीं शताब्दी को शक्ति संन्तुलन की दृष्टि से सर्वाधिक सफल माना है। वहीं हेनरी किसिंजर ने उन्नीसवीं शताब्दी को शक्ति को इस दृष्टि से महत्वपूर्ण माना है।[7] बिट्रिश प्रधानमंत्री हेराल्ड मैकमिलन ने सन् 1958 में कहा था "सन् 1815 से 1914 तक प्रायः निरंतर शांति बनी रही।"[8]

डॉ0 महेन्द्र कुमार का दृढ़ मत है कि सन् 1815 से 1914 की अवधि में शांति शक्ति सन्तुलन के कारण नही बल्कि ब्रिटिश शक्ति की अति प्रबलता के कारण स्थापित थी। अतः स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय सिपाहियों की व्यावसायिक दक्षता मात्र आन्तरिक सुरक्षा तक ही सीमित थी। भारत में ब्रिटिश सत्ता स्थापित होने के पूर्व विदेशी आक्रान्ताओं का शिकार होता रहा है। सिकन्दर, गजनबी, गौरी, बाबर जैसे आक्रान्ताओं के आक्रमण से भारत का सामाजिक, राजनैतिक व सैनिक स्वरूप छिन्न–भिन्न होता रहा किन्तु सन् 1857 के प्रथम स्वधीनता संग्राम के बाद सन् 1947 तक के ब्रिटिश शासन काल में भारत विदेशी आक्रमणों तथा आन्तरिक उथल–पुथल से मुक्त रहा।[9] 14 अगस्त 1947 को भारत का पूर्वी एवं पश्चिमी भाग काट कर पाकिस्तान बना दिया एवं सशस्त्र सेनाओं का बंटवारा भी जाति एवं धर्म के आधार पर किया जिसमें भारत को पैदल सेना की 15 युनिट कवचित सेना 12 युनिट तोपखानें की 18 यूनिट तथा 61 रेजीमेन्ट मिले। नौसेना के 18 युद्धपोत 14 अन्य जलयान तथा नभ सेना के 7 लड़ाकू इस्कवाड्रन मिले। जिस प्रकार ब्रिटिश सेना के नीति निर्धारण ब्रिटिश पार्लियामेन्ट करती थी एवं संचालन का कार्य वाइसराय के द्वारा नियुक्त रक्षा सदस्य करता था। स्वतंत्रता के पश्चात भारतीय सशस्त्र सेनाओं का नीति निर्धारण आदि की व्यवस्था का उत्तरदायित्व रक्षामंत्रालय को है जो सेना से संम्बंधित मामलों के लिये संसद में उत्तरदायी है। ब्रिटिश काल से लेकर वर्तमान समय तक भारतीय सशस्त्र सेनाओं में अनेकों पडाव आये विगत तीन शताब्दी तक अंग्रेजों के अधीन एवं पिछले छः दशकों से स्वतंत्र भारत की सेना की व्यावसायिक दक्षता किसी भी बाह्रय आक्रमण से सुरक्षा के लिये पर्याप्त है एवं निरंतर विकास की ओर अग्रसर है।

सशस्त्र सेनाओं के स्तर में अवमूल्यन (प्रेसीडेन्सी आदेश का पुनरावलोकन)

राष्ट्रीय अखण्डता एवं सार्वभौमिकता बनाये रखने तथा राष्ट्रीय हितों की अभिवृद्धि हेतु राष्ट्रीय सुरक्षा के आन्तरिक व बाह्य मूल्यों की पहचान व उनका विश्लेषण करके सुरक्षा नीति का निर्धारण दिन प्रतिदिन जटिल होता जा रहा है। जहाँ एक ओर युद्ध विज्ञान व तकनीक में हुये क्रान्तिकारी परिवर्तनों से सैन्य स्वरूप पूर्णतः परिवर्तित हो गया वहीं वास्तविक युद्ध से पूर्व ही एक दूसरे के मार्मिक लक्ष्यों पर किये जा रहे आर्थिक कूटनीति, मनोविज्ञान हमलों से विश्व के सभी राष्ट्र अपने को असुरक्षित महसूस करने लगे है। यही कारण है कि रक्षा तैयारियों पर पर्याप्त ध्यान देने के साथ–साथ सभी राष्ट्र अपनी आन्तरिक सुरक्षा के प्रति गम्भीर दिखाई देते हैं। सशस्त्र सेना के निर्माण में जहाँ एक ओर सुदृढ़ अर्थतंत्र एवं सुदृढ़ सांगठनिक ढाँचा जैसे कारक प्रमुख भूमिका का निर्वाह करते हैं। वहीं आधुनिकीकरण की अस्तव्यस्तता जातीय विभाजन भ्रष्टाचार व चापलूसी जैसे तत्त्व सम्मिलित रूप से सेना को कमजोर करके बाह्य आक्रमणों की सम्भावना को बढ़ा देते हैं।

भारत में स्वतंत्रता के पूर्व तथा उसके बाद भी बाह्य आक्रमणों के अतिरिक्त आन्तरिक सुरक्षा समस्याओं से संतृस्त रहा है। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत पर हुये विदेशी हमले आंतरिक राजनैतिक उथल–पुथल व अस्थिरता की ही उपज थे। सिकन्दर, गोरी व बाबर आदि के भारत पर हुये आक्रमण इसके उदाहरण हैं। इतना ही नही ईस्ट इण्डिया कम्पनी के बाद अंग्रेजों द्वारा सम्पूर्ण भारत पर शासन स्थापित करना भी भारत की तत्कालीन आंतरिक अस्थिरता एवं राजाओं की पारस्परिक फूट का ही परिणाम था।[10] स्वाधीनता के बाद भी जहां एक ओर भारत को अपने पड़ोसियों (चीन व पाकिस्तान) के आक्रमण का शिकार होना पड़ा है। वहीं विभिन्न सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक व धार्मिक कारणों ने सम्मिलित रूप से समय–समय पर भारतीय सुरक्षा के आंतरिक ढांचे को संकटापन्न करने की कोशिश की है।

शिक्षा व संचार माध्यमों के हो रहे विस्तार के परिणामस्वरूप विकास की दौड़ में शामिल भारतीयों की बढ़ती महत्त्वाकांक्षायें तथा इनकी प्राप्ति में नैतिक मूल्यों को भुलाकर अनैतिक साधनों के प्रयोग से सेना का आन्तरिक ढांचा जर्जर होता गया। सैन्य अधिकारी एवं सैनिक दोनों ही भौतिकता की दौड़ में आ गये। उनमें राष्ट्रभक्ति एवं राष्ट्रप्रेम में कमी आयी है। वे अपने उत्तरदायित्वों से मुंहमोड़ रहे हैं एवं पैसों के लिये कुछ भी कर जाने के लिये तत्पर हो जाते हैं, जो एक बहुत बड़ी चिंता का विषय है।

स्वाधीनता प्राप्त के पश्चात अधिसंख्य भारतीय राजनीतिज्ञों द्वारा सत्ता प्राप्त हेतु की गई मूल्य विहीन व अवसरवादी व राष्ट्रविरोधी राजनीति ने देश के सभी पहलुओं को नितान्त खोखला व संवेदनशील बना दिया है। बोफोर्स घोटाला जिसमें सेना के लिये तोपें खरीदी गई थी इस खरीद फरोख्त में करोंड़ों रूपये का घोटाला कर डाला जो सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने में अपूर्ण क्षति पहुँचाई गई थी ताबूत घोटाला कारगिल युद्ध के दौरान सेना के लिये खरीदे गये ताबूतों में घोटाला हुआ। आदि अनेकों रक्षा सौंदो में घोटाले जैसे बड़े काण्ड आज भारतीय राजनैतिक तंत्र के लिये आये दिन की सामान्य घटनायें बनती जा रही हैं। देश के शीर्ष पर बैठे राजनेताओं में इन घोटाला काण्डों की नैतिक जिम्मेदारी लेने का न तो साहस रह गया है और न ही उत्तरदायित्व पूर्ण दृष्टिकोण उल्टे इन घोटाले में संलिप्त व्यक्तियों की यत्र–तत्र सहायता करते देखे जाते हैं राष्ट्रीयता व राष्ट्रीय हितों से मुँह चुराते देश के लगभग सभी राजनैतिक दल अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति हेतु देश की सुरक्षा व गौरव की सौदेबाजी करने में जरा सा भी संकोच नही करते हैं। रक्षा मामलों में उदासीनता राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की निष्क्रियता रक्षा उपकरणों की खरीद फरोक्त में दलाली, राष्ट्रीय सम्पत्ति का दुरुपयोग तथा विदेश नीति के संचालन में प्रदर्शित राजनैतिक बौनेपन से यह पुष्ट होता जा रहा है कि वस्तुतः देश का मौजूदा राजनैतिक तंत्र लक्ष्य विमुख हो गया है। भारतीय राजनीति का हो रहा अपराधीकरण एक ऐसी चुनौती है जिसकी चिंता अब सभी राजनैतिक दल करने लगे हैं अगस्त

1995 लोकसभा में प्रस्तुत बोहरा समिति की रिपोर्ट में यह साफ–साफ कहा गया कि "राजनीतिज्ञ, नौकरशाह अपराधियों के त्रिकोण ने सम्पूर्ण देश को अपना बन्धक बना लिया है।" राजनैतिक हस्तक्षेप का ही परिणाम है कि देश के बड़े–बड़े अपराधी ससम्मान अपराधों से मुक्त होते जा रहे हैं। टाडा जैसे महत्त्वपूर्ण विधेयक की समाप्ति तथा लोकपाल की अक्षमता राजनैतिक जीवन में बढ़ रहे माफियाओं के हस्तक्षेप तथा राजनीतिक निरंकुशता का ही परिणाम है।

आज भारतीय जनता का विश्वास न केवल देश के राजनेताओं अपितु लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप से शनैःशनैः हटता जा रहा है। देश मे उत्पन्न हो रही यह राजनैतिक रिक्कता एक ऐसी चुनौती है जो राष्ट्रीय सशस्त्र सेनाओं को प्रभावित करती है। सशस्त्र सेनाओं का नियंत्रण एवं निर्देशन जिस प्रकार राजनेताओं के पास है और वतर्मान परिस्थिति में राजनेताओ का नैतिक क्षरण हुआ है जिससे सेना की व्यावसायिक दक्षता प्रभावित हुई है।

सेना को अत्याधुनिक प्रचलित सुरक्षात्मक हथियारों से सुसज्जित करने में नैतिक क्षरण के चलते विलम्ब होता जा रहा है। जबकि भारत पांच विदेशी आक्रमण झेल चुका है जिसमें भारतीय सशस्त्र सेनाओं की क्षमता का आकलन करने से पता चलता है कि हमेशा भारतीय सशस्त्र सेना आक्रमणकारी राष्ट्र के अत्याधुनिक हथियारों की तुलना में पीछे ही रहा है। कारगिल युद्ध के दौरान भारत की अत्याधुनिक मानी जाने वाली 'इन्सास राइफल' अनुपयोगी सिद्ध हुई। युद्ध के दौरान ही इसकी पूर्ति के लिये विदेशी राइफल 'ए0के0–47' एक लाख बीस हजार मंगवाई गई एवं सेना के लिये जो आपूर्ति भारतीय रक्षा कारखानों से आनी थी। वह भी मात्र एक तिहाई ही आपूर्ति कर पाये। शेष गोलाबारूद एवं अन्य सामग्री आयात पर निर्भर रही। लेकिन वर्तमान युद्ध नाभिकीय जैविक, रासायनिक, साइबर वार हैं एवं दुष्ट राष्ट्रों द्वारा आतंकवाद का प्रसार कर अघोषित आक्रमण कर रहा है। आंतरिक समस्याओं से भी सेना को ही जूझना पड़ रहा है। ऐसी विकट परिस्थितियों में सशस्त्र सेनाओं के नैतिक स्तर में गिरावट आना निश्चित रूप से देश की सम्प्रभुता को खतरा

है। सशस्त्र सेनाओं के अन्दर जो आज विषमता फैल रही है। वह किसी से भी छुपी नही है। सैन्य अधिकारी आपस में दोषारोपण कर रहे हैं। भारतीय सशस्त्र सेनाओं का जो स्तर गिर रहा है उसका मात्र एक ही कारण नैतिकता का क्षरण होना है।

भारत ने पिछले युद्धों में यह अनुभव किया कि विशिष्ट समय पर कभी–कभी तीनों सेनाओं का योगदान एक साथ नही हो पाता जबकि उस समय उसकी नितान्त आवश्यकता होती है। पिछले 53 वर्षों से ही इस पर विचार चल रहा है कि तीनों सेनाओं का नियंत्रण एक ही हांथ में हो इसलिये (C.D.S) का पद सृजित किये जाने का सुझाव दिया गया लेकिन राजनीतिक अड़चन एवं सशस्त्र सेनाओं के अधिकारियों के मतैक्य न होने से आज भी यह समस्या हल नही हुयी है।[11] ब्रिटिश शासन काल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की तीनों प्रेसीडेन्सी प्रथक सेनाओं (बम्बई, मद्रास, बंगाल) का केन्द्रीकरण का पहला कदम सन् 1748 में किया था। मेजर जनरल लारेन्स को तीनों प्रान्तीय (प्रेसीडेन्सी) सेनाओं का कमाण्डर इन चीफ नियुक्त किया गया था। [(12)] 1824 में इसमें आवश्यक सुधार भी किये गये। अस्थाई सेना *Ternitoril Army* का भी प्रचलन हुआ जिसका प्रयोग आवश्यकता पड़ने पर किया जाता था। वर्तमान में भी NCC (*Naitional Cadit* cor) की स्थापना की गई जो अस्थाई सेना का ही प्रतिरूप है।

प्रेसीडेन्सी सेनाओं में भेदभाव अंग्रेज और भारतीय सिपाहियों के साथ किये जाते थे।[13] आज भी भारतीय सशस्त्र सेनाओं के सिपाहियों एवं अधिकारियों के बीच पाये जा रहे हैं। जिसकी वजह से सैनिक अपने अधिकारियों पर आक्रमण करने लगे हैं स्वयं भी गोलीमार कर आत्महत्या करने लगे हैं। यह दृश्य प्रेसीडेन्सी सेनाओं की यादों को ताजा कर देता है। क्योंकि बिट्रिश कालीन प्रेसीडेन्सी सेनाओं में भारतीय जवानों को सम्मान न मिलने से 1857 जैसी विद्रोह (स्वाधीनता संग्राम) जैसी घटना को अन्जाम मिला था। भारतीय सशस्त्र सेना में भी पिछले दो दशकों से जिस प्रकार सैनिकों के आत्महत्याओं का दौर चला है जो रूकने का नाम नही ले रहा है और अधिकारियों की हत्यायें की जा रही हैं।

महिला सैन्य अधिकारी अपने वरिष्ठ अधिकारियों के खिलाफ शिकायत दर्ज करवा रही हैं। जिसका निवारण नही हो पा रहा है। यदि समय रहते इन सारी कमियों को सुधारा नही गया, तो 1857 जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति से इन्कार नही किया सकता है। अतः सेना की नैतिक एवं व्यावसायिक दक्षता बढाने एवं बनाये रखने के लिये आवश्यक है। सेना में समत्व भाव लाया जाय एवं उनको क्षेत्रवाद, भाषावाद, साम्प्रादायिकता, जातीयता, आदि विभेदकारी नीतियों से दूर रखा जाय। सशस्त्र सेना के चारित्रिक स्तर को ऊँचा उठाया जाय जिससे सेना के नैतिक एवं व्यावसायिक स्तर के अवमूल्यन को रोंक कर एक ससक्त सशस्त्र सेना का स्वरूप दिया जाना चाहिए।

एक नये भारत के उत्थान में सैन्य बलों के सहयोग से समूचा राष्ट्र कृतज्ञ हैं। भारतीय सैन्य बलों को साम्प्रदायिकता के पथ पर झोंकने से बचाना होगा भारतीय सैन्य बल राष्ट्र के प्रमुख आधार स्तम्भ हैं। जिस प्रकार 1748 में तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं का एक कमाण्डर इन चीफ लारेन्स की नियुक्ति हुयी थी। उसी प्रकार स्वतंत्र भारत में तीनों सेनाओं को एक ही कमाण्ड में रखने के लिये 11 जनवरी 2000 को सरकार ने आवश्यकता व्यक्त की थी।[14] भारत को इस सन्दर्भ में आस्ट्रेलिया का उद्धरण सामने रखना चाहिए कि किस प्रकार सैन्य बलों को देखा जाता है। सन् 2000 के आस्ट्रेलियन ह्वाहट पेपर ऑफ डिफेंस में वर्णित है। सैन्य बल सरकार द्वारा दी जा रही कोई सेवा नही बल्कि वे आस्ट्रेलिया के राष्ट्रीय गर्व के अहम हिस्सा है। भारतीय सैन्य बलों ने भी अपने महत्त्वपूर्ण पराक्रमों से सिद्ध किया है कि वे भी राष्ट्रीय गर्व के अहम हिस्सा हैं।

नागरिक महत्ता-

राष्ट्र के जीवन में उसके नागरिक सबसे महत्त्वपूर्ण होते हैं क्योंकि वे राष्ट्र के चेतन तत्व हैं। राष्ट्र के निवासियों के चरित्र मनोबल नेतृत्व तथा प्रतिभा का मानदण्ड स्थिर करता है। "न प्राकृतिक साधन न तकनीक और न अन्य कोई तत्त्व केवल जनसाधारण ही किसी राष्ट्र की शक्ति के प्रमुख व निर्णायक स्रोत हैं।"[15] लोकतंत्रात्मक शासन में नागरिकों का प्रमुख स्थान होता है। इस शासन तंत्र में जनता का शासन, जनता द्वारा जनता के ऊपर होता है। भारतीय लोकतंत्र में दो प्रकार के नागरिक है प्रथम अवयस्क नागरिक जिनकी उम्र 18 वर्ष से कम तथा द्वितीय वयस्क नागरिक जिनकी उम्र अट्ठारह वर्ष से अधिक है जो सरकार के निर्वाचन में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं। विश्व में भारत की जनसंख्या चीन के बाद दूसरे नम्बर पर है। वर्तमान भारत की जनसंख्या एक अरब बीस करोड़ लगभग हो गयी है जो आजादी से अब तक चार गुना की वृद्धि हुई है।[16]

जब नागरिक शक्ति को गुणात्मक रूप से देखा जाता है तो उसमें राष्ट्रीय चरित्र, राष्ट्रीय साहस, नेतृत्व, कूटनीति की गुणावस्था तथा सरकार के साधारण गुणों से सम्बंधित है। जबकि मात्रा की दृष्टि में आबादी के मापदण्ड हैं।[17] "जब तक उत्पादन एवं युद्ध के लिये मनुष्यों की आवश्यकता होगी तब तक यदि अन्य तत्त्व समान रहें तो जिस राज्य के पास इन दो कार्यों के लिये बड़ी संख्या में नागरिक होंगे। वह सबसे अधिक सामर्थ्य वान होगा।[18] मुसोलनी ने इटली वासियों से कहा था "बात साफ–साफ सोंचना ही ठीक होगा, नौ करोड़ जर्मनों और बीस करोड़ स्लावों के सामने चार करोड़ इटालियनों की क्या हस्ती है।"[19] इतिहास इस बात का साक्षी है बढ़ती हुयी जनसंख्या से उत्थान और पतन दोनों ही हो सकते हैं। रोम साम्राज्य की शक्ति का मुख्य कारण उसकी विशाल जनसंख्या थी। आगस्टक से दो पीढ़ियों बाद रोम के पतन का एक बड़ा कारण उसकी बढती जनसंख्या थी। यूनान के पतन का मुख्य कारण जनसंख्या में नियमित ह्रास था। यह कहना तो सही नही होगा कि जितनी अधिक किसी देश की आबादी होती है, उतना ही शक्तिशाली वह देश हो

जाता है। क्योकि यदि आबादी के आंकड़ों व राष्ट्रीय शक्ति में ऐसा कोई सम्बंध होता तो चीन विश्व में सबसे शक्तिशाली देश होता और भारत दूसरे नम्बर पर होता। संयुक्त राज्य अमरीका तीसरा तथा रूस चौथे नम्बर पर होता। किन्तु यह सोचना विल्कुल सही नही होगा कि यदि एक देश की आबादी अन्य तमाम देशों की तुलना में अधिक है, तो वह देश उनकी तुलना में शक्तिशाली होगा ही। परन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि कोई भी ऐसा देश न तो प्रथम श्रेणी का शक्तिशाली देश बन ही सकता हैं और न बनने पर रह ही सकता है जो संसार की घनी आबादी वाले देशों में से एक नही है। किसी राष्ट्र की शक्ति का परिचय उसके नागरिकों द्वारा प्राप्त हो जाता है जिसका उदाहरण 1940 का ग्रेटब्रिटेन है। उस समय हिटलर ने अपने विद्युत युद्ध की नवीन रणनीति से समूचे पश्चिमी यूरोप को पदाक्रान्त करके उस पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। एक मात्र ब्रिटेन पर वह इंगलिश चैनल में ब्रिटिश नौसेना की प्रबलता के कारण अपनी सेना नही उतार सका था। किन्तु दिन–रात उसके शक्तिशाली बमवर्षक वायुयान इंग्लैण्ड पर बमबारी करते रहते थे उसे कहीं से भी कोई सहायता मिलने की आशा नही थी। फिर भी वहां के नागरिकों का हौसला पस्त नही हुआ और बढ़ता ही गया। अंग्रेजों ने दृढ़ संकल्प के साथ अपना संघर्ष जारी रखा और अन्ततः ब्रिटेन को युद्ध में सफलता मिली। इससे सिद्ध हो जाता है कि यदि राष्ट्र के नागरिक राष्ट्रभक्त हैं, तो वह सेना में तथा अन्य क्षेत्रों में जाकर अपनी पूर्ण क्षमता से अधिक कार्य करके अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बना लेते हैं यदि इसके विपरीत नागरिक है, तो राष्ट्र की क्या दुर्दशा होगी इसी कल्पना भी नही की जा सकती। नैपोलियन ने तो सम्पूर्ण फ्रान्स के लोगों को सैनिक बना डाला जो एक आदेश से स्पष्ट है **"इस क्षण से उस समय तक कि हमारे शत्रु हमारे गणतंत्र से बाहर न खदेड़ दिये जायें सभी फ्रान्स निवासी अनिवार्य रूप से स्थाई सैनिक सेवा में रत होगें। इस आदेश के अन्तर्गत युवक रणक्षेत्र में जायेंगे, विवाहित पुरूष शस्त्र निर्माण तथा गोलाबारूद की आपूर्ति करेंगे, स्त्रियां शिविर निर्माण, सैनिक वस्त्रों की सिलाई तथा अस्पतालों में घायल सैनिकों की मरहम पट्टी करेगी, बच्चे पुराने कपड़ों**

की पट्टियां बनायेंगे और वृद्ध पुरूष सार्वजनिक स्थलों पर जाकर सैनिकों को साहसिक कार्य के लिये प्रेरित करेंगे।"[20]

नैपोलियन ने अपने नागरिकों को राष्ट्रभक्ति की भावना से प्रेरित किया था। बड़ी जनसंख्या सैनिकों और आर्थिक दृष्टि से राष्ट्र की शक्ति में वृद्धि कर सकती है। जनसंख्या से बड़ी फौजे, अधिक श्रमिक और श्रेष्ठ व्यक्तियों की चयन की सुविधा होती है। द्वितीय विश्व युद्ध में हिटलर की सेनाओं को हराने में रूस की विशाल जनसंख्या का बड़ा महत्व था। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में जब केवल ब्रिटिश साम्राज्य ही विश्व शक्ति था तो उसकी आबादी प्रायः चालीस करोड़ थी। यह विश्व जनसंख्या की प्रायः एक चौथाई थी।[21] भारत की जनशक्ति का प्रदर्शन स्वतंत्रता संग्राम में देखने का मिलता है। भारतीयों की राष्ट्रभक्ति एवं एकता को देखकर अंग्रेजों को मजबूर होकर भारत को स्वतंत्र करना पड़ा था। भारतीय जनता समय–समय पर अपने राष्ट्र के लिये सर्वस्व न्योछावर करती रही है। स्वतंत्रता के बाद से अब तक भारत अनेकों विदेशी आक्रमणों का सामना किया जिससे भारी जन–धन की हानि हुयी तथा अनगिनत लोग शहीद हुये जिसको भारतीयों ने सहज ही स्वीकार किया तथा और अधिक उत्साह के साथ सेना में भर्ती होकर अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए सतत तत्पर हैं। आज वैश्वीकरण का दौर चल रहा है। महाशक्ति किसी भी विकासशील देश को अपनी श्रेणी में नही आने देना चाहती, जिसके लिये नित नवीन योजनायें अपनाई जाती हैं। भारत जब परमाणु शक्ति अर्जित करता तो उस पर आर्थिक प्रतिबन्ध लगा दिये जाते हैं। लेकिन भारतीय जनमानस हजार कठिनाइयों के बावजूद भी प्रतिबन्ध झेल जाता है, तब उस पर आतंकवाद के काले बादल बरसने लगे जो आज जम्मू–कश्मीर और पूर्वांचल प्रान्तों में विद्यमान है। जिसने हमारी सम्पूर्ण सुरक्षा तंत्र को संवेदनशील बना दिया है। इसके अतिरिक्त नशीले पदार्थों की तश्करी, हथियारों का व्यापार, नकली मुद्रा आदि ऐसे अनेकों हथकंडे अपनाये जा रहे हैं तांकि भारत का ध्यान विकास की ओर न लग पाये केवल वह हमारी प्रदत्त समस्याओं को ही सुलझाता रहे। 1971 के भारत–पाक युद्ध में ब्रिटिश

नीति के तहत अमेरिका अपना सातवां जहाजी बेड़ा लेकर हिन्द महासागर पर आ धमका एवं भारत को चेतावनी देने लगा, लेकिन भारत अपने नागरिकों एवं सेना के दम पर चेतावनी की चिंता नही की। चीन भी भारत को धमकी देता रहा। वर्तमान युद्ध केवल सैनिक क्षेत्र में ही नही होते बल्कि देश का कोना-कोना रणभूमि में परिवर्तित हो जाता है इसका प्रत्यक्ष उदाहरण द्वितीय विश्व युद्ध में जर्मनी द्वारा ब्रिटेन पर बमबारी आदि तत्कालिक युद्ध में अमेरिका द्वारा वियतनाम पर बमबारी है। नवीन परिस्थितियों में सेना से कम महत्त्वपूर्ण भूमिका नागरिकों की नही होती।

नागरिकों की भूमिका हर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण है सेना में सैनिकों व अधिकारियों का चयन भी इन्ही में से होता है। वयस्क नागरिक ही जनप्रतिनिधियों का चुनाव कर संसद में भेजती है जो देश की शासन व्यवस्था को संचालित करता है। सेना भी इसके (रक्षामंत्रालय) के अधीन है। यदि राष्ट्र के नागरिक चरित्रवान, राष्ट्रभक्त तथा अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बनाना चाहते होंगें तो वे चरित्रवान जनप्रतिनिधियों का ही चुनाव करेंगे। चरित्रवान जनप्रतिनिधियों से बनी सरकार राष्ट्र का समग्र विकास कर विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा कर सकता है।

व्यावसायिक चुनाव की सामान्य जागरूकता-

15 अगस्त 1947 के दिन सदियों की गुलामी समाप्त कर भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में उभर कर विश्व रंगमंच पर आया एवं 26 जनवरी 1950 को संविधान लागू हुआ। संविधान ने प्रत्येक नागरिक को व्यवसाय अपनाने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की थी। भौतिकवादी युग में धन की महत्ता सर्वाधिक है आज देश की सेना में योग्य सेनाधिकारियों एंव सैनिकों का चयन जिस समाज से होता है। वह समाज तीन भागों में बंटा हुआ है निम्नवर्ग, मध्यमवर्ग एवं उच्चवर्ग। इन तीनों वर्गों की विभाजक रेखा 'धन' है। निम्नस्तर समाज से मात्र सिपाही स्तर पर ही भर्ती हो पाती है क्योंकि आर्थिक संशाधनों के अभाव में अधिकारी स्तर की योग्यता अर्जित नही कर पाते हैं अतः वह सेना में सैनिक बनकर धन अर्जित करके अपने परिवार का भरण पोषण करते हैं। जबकि मध्यम वर्ग से नवयुवक सेना में अधिकारी संवर्ग में भर्ती होता है लेकिन जब उसे अहसास होता है कि उससे कम योग्य व्यक्ति निजी क्षेत्र में उससे अच्छा वेतन पाता है तथा उससे कार्य करने की स्थिति भी सेना से बेहतर है, तो वह स्वयं भी सेना से सेवानिवृत की तलाश में रहता है। इसी कारण लगभग चार हजार सेना के अधिकारी स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के लिये आवेदन किया है।

वर्तमान समय में थलसेना में लगभग बारह हजार सैन्य अधिकारियों की कमी है तथा वायुसेना एवं नौसेना में भी सैन्य अधिकारियों की कमी महसूस की जा रही है। इसका सबसे प्रमुख कारण भूमण्डलीकरण है। भूमण्डलीकरण के दौर में विश्व के विकसित राष्ट्रों की कम्पनियाँ विकासशील एवं अविकसित राष्ट्रों में अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही हैं तथा इन राष्ट्रों के योग्य एवं प्रतिभासम्पन्न छात्रों को अच्छा वेतन और बेहतर सुविधायें तथा कम जोखिमपूर्ण कार्य एवं कार्य की अवधि भी कम आदि जिससे नवयुवा वर्ग प्रभावित है। पिछले कुछ सालों मे वैश्विक अर्थव्यवस्था में कुछ ज्यादा ही तेजी के दर्शन हो रहे हैं। आज हर कारोबार को जड़ से मापा जाता है। इससे वित्त एवं लेखा जोखा के जानकारों की मांग अधिक बढ गई है और वित्तीय सेवाओं से जुड़े कैरियर के क्षेत्र में जबरजस्त तेजी आई है।

इस लिहाज से युवाओं के सामने एक बेहतरीन विकल्प है। वित्तीय सेवाओं को योजानाबद्ध तरीके से अपनाकर आकर्षक कैरियर के रूप में अंजाम दिया जा रहा है जिनमें मुख्य–बैंकिग, चार्टड एकांउटेंसी, कम्पनी सिक्रेटरी और स्टाक व सिक्योरिटी एवं कास्ट एण्ड वर्क्स एकाउंटेसी चार्टड, वित्तीय विश्लेषण वित्तीय योजनाएं, बनाना निवेश योजना, कारोबारी वित्त योजन, मर्चेन्ट बैंकिग और विदेशी मुद्रा सम्बंधी योजनायें हैं। इसके अतिरिक्त बहुत से ऐसे विकल्प है जो सेना की अपेक्षा अच्छे हैं जैसे डॉक्टर, इंजीनियर, प्रशासनिक अधिकारी तथा न्यायक्षेत्र मे प्रतिभा संपन्न छात्र ज्यादा जुड़ रहे हैं। अमेरिका ने दूसरे देश की प्रतिभाओं को अपने देश में स्थापित करने का तो एक कानून ही बना रखा है जिसमें आज अमेरिका में भारतीय इन्जीनियर्स एवं डॉक्टरों की भरमार है। ब्रिटेन में भारतीय डॉक्टरों की धाक है। तेल निर्यातक देशों में भी भारतीय इंजीनियर कम नही है। निश्चित रूप से सेना की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों में वेतन ओर सुविधाये अधिक है। जिससे नवयुवक सेना की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों को ज्यादा महत्व देते हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी देशी राजाओं की सेनाओं की अपेक्षा अधिक वेतन एवं सुविधा दी थी। जिसके कारण ही कम्पनी की सेना में देशी राजाओं के सैनिक अधिक मात्रा में भर्ती हो गये फलतः कम्पनी की सेना में योग्य एवं अनुभवी सिपाहियों की वृद्धि हुई जो कम्पनी के साम्राज्य को बढ़ाने में मद्‌दगार साबित हुई।

वैश्विक दौर में भारतीय सेना के अधिकारी इस ओर अग्रसर है और वे सेना के जीवन को छोड़कर शांतिपूर्वक अधिक धन कमाने की हसरत को पाल रखा है। सेना की कार्यशैली में एक से लेकर चौबीस बजे तक अर्थात चौबीस घन्टे कार्य रहता है, जबकि निजी कम्पनियों में मात्र एक से बारह बजे अर्थात बारह घण्टे ही कार्य रहता है। सेना के जीवन में हर पल अन्जाना भयंकर जोखिम है जबकि निजी कम्पनियों में नाम मात्र का ही जोखिम हो सकता है। वायुसेना के पायलेट तो सेना के विमानों को छोड़कर निजी कम्पनियों के विमान उडाने के लिये तत्पर है। लेकिन सेना ने इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। पहले सेना में देशभक्ति की भावना से

नवयुवक सेना में भर्ती होते थे। थल सेनाध्यक्ष जनरल जे0जे0 सिंह के अनुसार **"आर्थिक युग में देशभक्ति के जज्बे का कोई महत्त्व नही है।"** सेना में भी आज धन कमाने की होड़ लगी हुई है सेनाधिकारी अपने जवानों के रसद में ही भ्रष्टाचार करते हैं तथा अपने भ्रष्टाचार को छिपाने के लिये अपने अधिकारों का दुरुपयोग करते हैं। जिसके नित्य नये अनेकों उदाहरण सामने आ रहे हैं। फलतः आज जिस प्रकार सेना में आत्महत्याओं का जो दौर चला है वह रूकने का नाम नही ले रहा है। जिसके कारण सेना में आपसी भावनात्मक प्रेम एवं पारिवारिक भावना समाप्त हो गयी है। सैनिकों एवं अधिकारियों के बीच टकराव की स्थिति बन रही है जो कभी–कभी विस्फोटक रूप धारण कर लेती है जिसके चलते अब तक सैकड़ों सैन्य अधिकारी सैनिक की राइफलों से निकलने वाली गोलियों के शिकार हो गये हैं। इन घटनाओं के पीछे कहीं न कहीं मनपसंद व्यवसाय न मिल पाने की खीझ छिपी हुयी है।

सेना का संचालन एवं नीति निर्माण असैनिक क्षेत्र 'रक्षा मंत्रालय ' द्वारा होता है जो सैनिक जीवन की कठिनाइयों से अनभिज्ञ होते हैं जिसके कारण वे सेना के साथ पूर्ण न्याय नही कर पाते हैं, क्योंकि सैनिकों तथा सैन्यअधिकारों के वेतन से ही स्पष्ट हो जाता है कि वे अपनी बढ़ी हुई पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति में असमर्थ हो जाते हैं। जिसके चलते वे अन्य क्षेत्रों में जाने के लिये लालायित रहते हैं। जब उनकी यह अभिलाषा पूर्ण नही होती तब वे अनैतिक कार्य की ओर उन्मुख हो जाते है और यदि इस राह में एक कदम भी चल लिये तो फिर वापस आना कठिन हो जाता है। एक न एक दिन इसका खुलासा होकर समाज में पहुंचता ही है तो सेना के प्रति आम लोगों के दृष्टिकोण परिवर्तित हो जाते हैं। जिसके चलते प्रतिभा सम्पन्न नवयुवक सेना में अफसर बनने की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों में जाना पसंद करते हैं। इसी कारण आज सेना में सैन्य अधिकारियों की संख्या घट रही है।

भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण बेरोजगारी के चलते लोग कम पैसो में ही सेना में भर्ती होकर जोखिमपूर्ण कार्य करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। आज सेना में इसी दौर के चलते सैनिकों की कमी नही है लेकिन ये सैनिक भी अपनी

भावी पीढ़ी को सेना में जाने की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों के बेहतर विकल्पों पर विचार करते हैं। जिसके चलते सेना, आज गंभीर संकट के दौर से गुजर रही है। सेना को इस संकट से उबारने के लिये पूर्व राष्ट्रपति डॉ0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम के अनुसार ''घर–घर जाकर राष्ट्रभक्ति की भावना जगाकर ही भ्रष्टाचार से मुक्ति प्राप्त हो सकती है जिससे सेना में योग्य सैन्य अधिकारियों की पूर्ति हो सकेगी क्योंकि राष्ट्रभक्ति के कारण योग्य नवयुवक पलायन की अपेक्षा कम आर्थिक संसाधन में भी देश की सेवा के लिये तत्पर हो जायेंगे। उनको तब यह अहसास हो जायेगा कि हम नौकरी नही बल्कि अपने राष्ट्र की रक्षा का पुनीत कार्य कर रहें हैं।

सैनिक कार्य एक अस्वीकृत व्यवसाय-

प्रत्येक व्यवसाय का अपना एक लक्ष्य होता है सैन्य व्यवसाय का लक्ष्य देश की सम्प्रभुता की रक्षा करना एंव शांति बनाये रखना है। मध्य युग में दैवी सिद्धान्त को राज्य की उत्पत्ति का आधार माना जाता था।[22] अतः दैवी दायित्वों के निर्वाह तथा धर्म की रक्षा के लिये ही राज्य के अस्तित्व की मान्यता थी। इस युग में राजकीय शूरमा अपने शौर्य के द्वारा ईश्वर के लिये युद्ध करके निर्बलों एवं असहायों की रक्षा करते थे। इस युग में आवश्यकतानुसार निश्चित देवी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये ही सेना का संगठन किया जाता था और युद्ध समाप्ति पर सेना भंग कर दी जाती थी। तेरहवीं शताब्दी में रोजर वेंकन के द्वारा की बारूद की खोज के[23] पश्चात राजकीय शूरमाओं के शौर्य का महत्त्व घटने लगा। शीघ्र की मुद्रा का जन्म हो जाने के कारण अब राजकीय शूरमा धन के बल पर व्यवसायी सैनिक हो गये थे और राजा लोग भी धन के बल पर योद्धाओं को अपनी सेवा में निरंतर बनाये रखने में रूचि लेने लगे थे। इस व्यवस्था का लाभ उठाकर सेना में दुष्ट प्रवृत्ति के पराक्रमी मनुष्य केवल धन कमाने एवं लूट–मार के लिए भर्ती होने लगे थे। कुछ लोग तो सैनिक व्यवसाय का ठेका लेने लगे थे। यह लोग युद्धाभियान के समय राज्य के लिये सैनिकों की आपूर्ति करते थे और धन कमाते थे।[24]

ऐसे सैनिक युद्ध को अधिक समय तक खींचते थे एवं एक दूसरे की हत्या नही करते थे। समाज में इन सैनिकों का कोई विशेष महत्त्व नही था। विभिन्न देशों के शासक अपनी प्रतिष्ठा की वृद्धि के लिये अपनी महत्त्वाकांक्षा पूर्ण करने के लिये आपस में युद्ध करते थे। सैनिक इन युद्धों को धन कमाने का एक व्यवसाय तथा शौर्य प्रदर्शन का एक अवसर मात्र मानते थे। उनमें देश प्रेम स्वामिभक्त तथा बलिदान की भावना नही रहती थी। इस समय सैन्य व्यवसाय का कोई महत्त्व नही था। जबकि कृषि व्यवसाय उन्नति पर था तथा कृषकों का महत्त्वपूर्ण स्थान था। युद्धकाल में भी ग्रामीण जीवन को यथावत रखा जाता था। फलतः सैन्य अधिकारियों का चयन

कुलीन घरानों से तथा सैनिकों की भर्ती समाज के नितान्त निम्नवर्ग में से की जाती थी।

सैनिकों पर शासक व समाज का विश्वास न था और सैनिक व्यवसाय को निम्न स्तर पर देखा जाता था। होटल आदि सार्वजनिक स्थानों पर लिखा रहता था **"श्वानों, वेश्याओं तथा सैनिकों का प्रवेश निषिद्ध है।"**[25] इस कारण सेना में आत्माभिमान समूह भावना तथा एकता और स्वामिभक्ति, राष्ट्रप्रेम जैसे गुणों का आभाव रहता था। उपनिवेश काल में प्रत्येक देश में अपनी सैन्य शक्तियों में प्रचुर वृद्धि करने के उद्देश्य से विदेशियों को भी अपनी सेना में भर्ती करना प्रारम्भ कर दिया। यह सेना व्यवसायी होती थी और सैनिक लालच में आकर शत्रु पक्ष में मिल जाते थे। उन सैनिकों के द्वारा अपने ही नागरिकों की लूट लेने की सम्भावना बनी रहती थी। इन आशंकाओं के कारण सैनिकों को कठोर अनुशासन में रखा जाता था जिससे की कोई सैनिक अथवा सैन्य दल शत्रु पक्ष में न मिल जाय एवं अवसर पाकर नागरिकों की लूटपाट न कर ले। सैनिक शत्रु की अपेक्षा अपने अधिकारियों से बहुत डरता रहता था। सैनिकों में व्याप्त विरक्ति तथा भाग जाने की प्रवृत्ति के कारण युद्ध काल में इनके निवास तथा भोजन आदि से सम्बंधित अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था भी समीप के क्षेत्रों में ही की जाती थी।

इस युग में सीमित साधनों तथा लक्ष्यों के आधार पर सीमित युद्ध लड़े जाते थे। उनकी समयावधि लम्बी होते हुये भी प्रायः उनकी प्रवृत्ति भयंकर विनाश से बचने की होती थी। सर्वनाशक निर्णायक संग्राम के स्थान पर विजय प्राप्त करने के लिये छोटी–छोटी भिड़न्तों पर बल दिया जाता था। समय परिवर्तन के साथ–साथ सेना से सम्बंधित विचारों में भी परिवर्तन हुआ। टैमिल्टन ने कहा "यह अतिमूर्खतापूर्ण होगा कि राज्य अपनी समस्त सेना भंग कर दे, अपना नौसैनिक बेड़ा नष्ट कर दे तथा अपने दुर्ग ध्वस्त कर दे।"[26] जिसकी वजह से राज्य स्थाई सेना रखने के लिये प्रेरित हुये। उसी समय अर्थव्यवस्था को व्यवस्थित करने के उद्देश्य से लिष्ट ने अपने विचार प्रस्तुत किये "आर्थिक नीति का निर्माण विश्व शांति तथा विश्व बन्धुत्व पर

करना भी भारी मूर्खता है।"[27] किसी देश की यौद्धिक क्षमता उसकी सम्पत्ति तथा उत्पादन शक्ति पर निर्भर करती है। जिस देश की जितनी उत्पादन क्षमता होगी उसी अनुपात में वह देश युद्धकाल में स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने में समर्थ होता है अतः राष्ट्रीय नीति के निर्धारण में आर्थिक नियमों की अवहेलना नही की जा सकती। नवोदित विचारों ने बड़ा ही क्रांतिकारी परिवर्तन लाया जिसके फलस्वरूप औद्योगिकीकरण प्रारम्भ हो गया।

कृषि व्यवसाय के अतिरिक्त नवीन व्यवसायों का विकास हुआ फलस्वरूप कृषि व्यवसाय के स्थान पर औद्योगिकीकरण को प्राथमिकता दी जाने लगी और कृषि व्यवसाय दूसरे स्थान पर चला गया। नैपोलियन के उदय के साथ लगभग प्रत्येक देश में अनिवार्य सैनिक सेवा प्रारम्भ हो गयी थी। परन्तु इसके लिये मुख्य रूप से निर्धन वर्ग को ही विवश किया जाता। तीस वर्षीय युद्ध की समाप्ति के पश्चात यूरोप तथा अन्य देशों में जनभावना शांति के पक्ष में थी। अतः ब्रिटेन में जनमत सैन्यीकरण के विरूद्ध था। सैन्यीकरण स्वतंत्रता के प्रति खतरा है। जिससे सेना में सीमित आधार पर अपराधियों एवं नकारा लोंगो को रोजगार देने के लिये भर्ती की जाती थी। 700–800 सैनिक, रेजीमेन्टों का आधार था। इन रेजीमेन्टों के प्रशासन में सैनिकों के साथ बड़ी धोखाधड़ी होती थी और उन्हे पूरा वेतन भत्ता तथा आपूर्ति प्राप्त नही होती थी। जिस कारण सैनिक भी वफादार नही रहते थे।

प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध में महाविनाश में करोड़ो लोगों की जाने गयी एवं उस युद्ध का प्रभाव आज भी हिरोशिमा एवं नागासाकी में देखा जा सकता है। भारतीय जवानों को भी इन महासंग्रामों में बलि का बकरा बनना पड़ा। जिसमें लाखों हिन्दुस्तानी सिपाही यूरोपीय युद्धस्थलों में ही दफन हो गये। इंग्लैण्ड ने अपने मन मुताबिक भारतीय सिपाहियों को युद्ध रूपी भार में झोंक दिया था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद 15 अगस्त 1947 को भारत उपनिवेशी जंजीरों से मुक्त हुआ एवं लोकतंत्र की स्थापना हुई। प्रजातांत्रिक देशों में राष्ट्रीय सरकार सर्वोच्च होती है युद्ध एवं शांति विषयक नीति का निर्धारण करती है क्योंकि समझती है कि राष्ट्रीय क्षमता क्या है

तथा विभिन्न पड़ोसियों से किस प्रकार राजनायिक संबंध रखने चाहिये। राष्ट्रीय नीति सैनिक क्षेत्र में सीधा हस्तक्षेप नही करती परन्तु परिस्थितियों के अनुरूप अपने सैनिक कमाण्डर बदल सकती है। युद्ध की शुरूआत या समाप्त की घोषणा कर सकती है या किसी अन्य लाभप्रद उपाय से प्रतिद्वन्द्वी को अपना पक्ष स्वीकार करने के लिये विवश कर सकती है। इस प्रकार राष्ट्रीय नीति ही वह आधार शिला है जिसके ऊपर सैनिक स्त्रातजी का निर्माण होता है।

नूतन विश्व व्यवस्था के वर्तमान परिदृश्य में भारतीय सुरक्षा की आंतरिक व बाह्रय चुनौतियों से उसके रक्षा परिवेश व रक्षा चिन्तन के समक्ष नये आयाम उत्पन्न हो गये। एक ओर जहां आतंकवाद गरीबी भ्रष्टाचार क्षेत्रीयता व स्वार्थ परता जैसी आंतरिक समस्यायें भारतीय सुरक्षा को विषाक्त कर रही है।[28] प्रजातांत्रिक देश घोषित होने पर सभी को अपने व्यवसाय के चुनाव करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो गयी। स्वतंत्रता के प्रारम्भिक दिनों में राष्ट्रभक्ति की भावना आदि के कारण सैन्य व्यवसाय को अपनाने में किसी को कोई विशेष मानसिक मंथन नही करना पड़ा। लेकिन सैन्य जीवन की कठोरता एवं जोखिम भरा हर पल तथा पारितोषिक में कमी एवं युद्ध में वीरगति तथा घायल होकर विकलांग बनना तथा युद्धबन्दी बनकर अनेंको प्रकार की यातनायें सहना एवं जीवन गुमनामी में दफन हो जाना ये सैनिक जीवन की साधारण घटनायें होती हैं। इसके अतिरिक्त अवकाश में अनियमितता के कारण पारिवारिक एवं सामाजिक जिम्मेदारी को निभा पाने में असमर्थ हो जाता है। जिसके कारण सैनिक व्यवस्था को अपनाने के लिये लोग उदासीन होते जा रहें हैं।

भारत में बढ़ रही आबादी (एक मिनट में 45 बच्चे पैदा होते हैं)[29] के कारण आज प्रत्येक क्षेत्र में बेरोजगारी की बाढ़ सी आ गई है। जिस प्रकार प्रारम्भिक काल में निर्धन व्यक्ति ही सेना में सिपाही बनाये जाते थे। उसी प्रकार आज भी कमजोर वर्ग के लोग ही सैनिक बन रहे हैं। पहले कुलीन वर्ग के लोग ही अधिकारी बनते थे आज भी मध्यम वर्ग के लोग ही सेना में अधिकारी परीक्षा पास कर सेना में अधिकारी बनते हैं। लेकिन उच्च वर्ग के लोग सेना के व्यवसाय को अपनाना पसन्द नही करते

हैं। लोकतांत्रिक देश होने के कारण व्यवसाय अपनाने की स्वतंत्रता है। प्रारम्भ में जिस प्रकार कृषि व्यवसाय को श्रेष्ठ माना जाता था। लेकिन औपनिवेशिक काल में औधोगिकीकरण को बढ़ावा दिया गया। वर्तमान में वैश्वीकरण का दौर चल रहा है जिससे सम्पूर्ण विश्व एक ही परिधि में आ गया है।[30] जिससे असंख्य व्यवसायों के मार्ग प्रशस्त हुये हैं जिस कारण लोग सैन्य व्यवसाय अपनाने की अपेक्षा डॉक्टरी, इंजीनियरिंग एवं निजी क्षेत्रों के व्यवसायों को अपनाना पसन्द करने लगे हैं जिसमें अत्यधिक पैसा भी है, समय भी है, सम्मान भी है, एवं सुरक्षा भी है। जिसके चलते सैनिकों की भीड़ तो बढ़ती है क्योंकि निर्धन वर्ग से सम्बंधित होने के कारण सेना में भर्ती होना अच्छा रोजगार मानकर चलते हैं लेकिन बाद में कुछ महत्त्वाकांक्षी सैनिक अवसाद के शिकार होकर आत्महत्यायें कर लेते हैं एवं मध्यम वर्ग के लोग तो सैन्य व्यवस्था की अपेक्षा दूसरे व्यवसायो को अपना रहें हैं, जिससे सेना, सैन्य अधिकारियों की कमी से जूझ रही है और जो सेना में शामिल हो गये हैं, वह भी इससे त्याग पत्र देकर अन्य व्यवसाय को अपनाना चाहते हैं। ऐसे सैन्य अधिकारियों के सैकड़ों प्रार्थना–पत्र रक्षामंत्रालय में पड़े हुये हैं।

आज तीव्र आर्थिक दौड़ ने नैतिकता का जो क्षरण किया है उससे सेना भी अछूती नही है। जिसके कारण सेना में भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिला है जिसमें सेना के कुछ अधिकारी एवं सिपाही भी संलग्न पाये गये हैं। व्यक्तिगत लाभ के लिये राष्ट्र की सम्प्रभुता से घात लगाने से भी नही चूक रहे हैं। जिस प्रकार सेना के प्रारम्भिक चरण में सैनिक मौका पाते ही अपने नागरिकों को लूट लेते थे एवं दुश्मन से जा मिलते थे उसी का आज नवीन रूप सेना में सामने आ रहा है जिसमें सेनाधिकारी अपने ही सैनिकों के साज–सामान एंव खाद्यसामग्री अश्त्र–शस्त्र एवं गोला बारूद बेंचकर अपनी जेब भर रहें हैं इतना ही नही देश की प्रतिरक्षा योजनाओं को भी बेचने में जरा सा भी हृदय में पश्चाताप नही होता। सेना ऐसी परिस्थितियों के दौर से गुजर रही है जो राष्ट्र की सम्प्रभुता के लिये किसी भी समय समस्या उत्पन्न हो सकती है। अतः सैन्य व्यवसाय को एक सामाजिक व्यवसाय न माना जाय। राष्ट्र की सुरक्षा के लिये कुछ

समय के लिये प्रत्येक नागरिक के लिये सैन्य सेवा अनिवार्य बनाया जाय एवं उनमें नैतिक संचेतना पैदा की जाय जिससे सेना की व्यवसायिक दक्षता बढ़ाने के साथ भ्रष्टाचार को समाप्त किया जा सकता है। एवं सैन्य व्यवसाय की प्रतिष्ठा में वृद्धि की जा सकती है।

सन्दर्भ

1. डॉ0 एम0सी0 जोसी, 'स्वतंत्रता आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास' अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद–1999 पृ0–9

2- *Ibid –Joshi-P-26*

3- *Kavic L.J. Indias quest for security defence polcies. (1947-1965)-P-29*

4- *Ministry of Defence Annul report 1985-86, P-30*

5. सामयिक सामाजिक चिन्तन, 'अंक 1–2, वर्ष 1991 अक्टूबर–दिसम्बर भारतीय सामाजिक विज्ञान अकादमी' पृष्ठ–54

6- *Ibid –P. -62-63*

7- *H. Kissinge.. Nucliar weapons and foreign policy. (New yeark -1951) P. -142*

8- *I.L.claud.. power and International relations. (New yark-1959) P-7071*

9- *Kavic – op-cit, P-30*

10- *David chandalar.. the army of Batish India. Oxford New yark om press 1994, P.No-380*

11- *Rakshartha, vol-3 N, 3,4 Allahabad university 2001. P.-67*

12- *David op-cit P.-379*

13. अजय मोहन, 'प्रथम स्वतंत्रता संग्राम 1857 का सैनिक मूल्यांकन (अवध के विशेष सन्दर्भ) में'' शोध प्रबन्ध पृ–110

14- *Rakshartha op-cit, P.No-61*

15- *Hans J. Morgenthew.. poltics Among nations. (third edition) P.-192*

16. कुरूक्षेत्र, वर्ष–53, अंक–9, जुलाई–2007, पृ–2

17. डा० बी०एल० फड़िया, 'अंतर्राष्ट्रीय राजनीति' साहित्य भवन आगरा, पृ—127

18- *Charles P. Schlicher.. International relations. (New yark) P-241*

19- *Quoted David. V. vital struggle for population (Oxford -1935) P.-34*

20. डॉ० योगेन्द्र कुमार शर्मा, 'सैन्य विचारक अलका प्रकाशन कानपुर' 1938 पृ० —94

21- कुरूक्षेत्र —*OP-cit.. P.-3*

22. डॉ० शर्मा *OP-cit..P.No-1*

23- *Ibid.. P. -1.*

24- *Ibid.. P. -2.*

25- *Ibid.. P. -19.*

26- *Ibid - P. No -31*

27- *Ibid ..P. 31.*

28. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय 'भारत सरकार' आंतरिक सुरक्षा की चुनौतियां' 11 दिसम्बर 2006 पृ सं०—2—3—4

29- कुरूक्षेत्र *OP-cit.. P.-2.*

30- *Strategic analyisis, vol XII, NX, January-1990, P.-996.*

चतुर्थ अध्याय

सामाजिक, आर्थिक व्यवस्था द्वारा लाया गया परिवर्तन

विज्ञान व तकनीकी का विकास व प्रभाव-

विज्ञान विकास का एक माध्यम है। उसमें भिन्न–भिन्न प्रकार के परिवर्तन होते रहते हैं जिससे निरन्तर प्रगति होती रहती है। इससे ज्ञान का क्षेत्र बढ़ता है। इस अर्थ में विज्ञान एक सत्ता है। लोकतंत्र के संचालकों ने जब देखा कि विज्ञान के क्षेत्र में भारत पिछड़ता जा रहा है तब वैज्ञानिकों को महत्व देने की दिशा में प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ0 ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को देश के सर्वोच्च पद पर राष्ट्रपति के रूप में पदासीन कराया गया था। विज्ञान हमें जीवन की सुविधायें देने वाला अक्षयकोष होने के साथ ही सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख कारक भी है। विज्ञान मानव समाज के कार्यभार की समवेत अभिव्यक्ति है। विज्ञान और समाज का गहरा अंतर्सम्बंध है। इतिहासकारों के अनुसार मानवजाति अभी तक केवल तीन बड़े परिवर्तनों से गुजरी है! पहला परिवर्तन था समाज की स्थापना एवं दूसरा परिवर्तन सभ्यता का उदय और तीसरा परिवर्तन समाज में वैज्ञानिक बदलाव। पहली परिवर्तन क्रान्ति से स्थापना, दूसरी परिवर्तन क्रान्ति से सभ्यता की खोज और तीसरी परिवर्तन क्रान्ति रही, विज्ञान प्रौद्योगिकी का आधार। कालक्रम के अनुसार देखें तो सब कुछ छठी सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व तक सम्पन्न हो चुका था। तब इसके दो ही केन्द्र थे, भारत और मेसोपोटामिया। पन्द्रहवीं सदी के मध्य में एक नूतन क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। इस समय आधुनिक विज्ञान की सम्भावनाएं जन्म ले रहीं थीं। अठारहवीं सदी तक विज्ञान की प्रक्रिया धीमी रही। परन्तु विज्ञान पूँजीवाद का पूरक बना। वैज्ञानिक मानसिकता में इस बीच काफी परिवर्तन हुये। विज्ञान का पदार्पण सर्वप्रथम धार्मिक अंधविश्वासों को तोड़ने के रूप में हुआ। सामाजिक भूमिका के रूप में विज्ञान के कई और महत्वपूर्ण पहलू हैं। विज्ञान सुविधायें जुटाकर मनुष्य की भौतिक निर्भरता को काफी बढ़ा देता है। या बढ़ाने का प्रयास करता है। विज्ञान का यह पक्ष समाज के लिए सुविधाजनक होने के बावजूद अच्छा नहीं है। वर्तमान युग विज्ञान का युग है। इसकी उपलब्धियों तले मानव समाज दब सा गया है।

विज्ञान आज आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों के जटिल ढाँचे का एक अंग बन गया है। यह सच है कि विज्ञान के पास अथाह शक्तियाँ हैं। आज उच्च विकसित विज्ञान और संस्कृति दो भिन्न–भिन्न धाराओं में बह रहे हैं। ऐसा इसलिए है क्योकि विज्ञान अभी सचेतन शक्ति नही बन पाया है। समाज की संस्कृति में स्थान पाने के लिए विज्ञान को अपनी कमियों को दूर करना होगा। इसके पूर्ण निराकरण के बाद ही विज्ञान की शुष्क प्रकृति सांस्कृतिक संवेदना एवं भावना में एकाकार हो सकती है। विज्ञान का रूपान्तरण एक नये अध्याय की शुरूआत कर सकेगा। जिससे समाज की तकदीर बदल सकती है। विज्ञान ने तार्किकता के अनजाने क्षेत्र में प्रवेश किया है। यांत्रिक, भौतिक और रसायन का उद्‌भव इसी का परिणत है। महर्षियों एवं मनीषियों का कथन रहा कि तर्क से सृजन सम्भव नही हैं। अतः जीव विज्ञान में तार्कितता (विज्ञान) का मिथक टूटा। विज्ञान ने विकास के कई और चरण बढ़ाये। उद्‌विकास सिद्धान्त में इसे नवीनता और इतिहास को मान्यता भी मिली। परन्तु इतिहास एक विज्ञान नही बन सका।

21वीं सदी के नये युग में विज्ञान समाज के भावी परिवर्तन का एक प्रमुख कारक बन सकता है परन्तु इसके सुधार की प्रक्रिया जीवन के दायरे में आनी चाहिए। विज्ञान की चुनौतियों में उज्जवल भविष्य की सम्भावनायें छिपी हुई है। बीसवीं और इक्कीसवीं सदी में मानव को अनुभवाश्रित ज्ञान की सर्वप्रथम झलक विज्ञान के माध्यम से मिली। इसके पहले उसको कुछ प्रयत्नों पर विस्वास हुआ करता था। उदाहरण के लिए न्यूटन की भौतिकीय को अनेक पूर्व धारणाओं के बिना स्वीकार कर लिया गया था। किन्तु वर्तमान समय में वैज्ञानिक अधिक से अधिक प्रत्ययों को शोध द्वारा प्रमाणित करने का प्रयत्न करता है। अतः वैज्ञानिकों ने आधुनिक विज्ञान की सहायता से ज्ञान के मूल पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। ज्ञान से विज्ञान और विज्ञान से विकास की अन्धी दौड़ में आज का सम्पूर्ण संसार उलझा हुआ है। मनुष्य अपने हांथों से किये गये निर्माणों पर कम, मशीनरियों के निर्माण पर अत्यधिक एवं पूर्ण विश्वास कर रहा है। समय ऐसा आ गया है कि मनुष्य का कर्म पर से ही

विस्वास उठ गया, जबकि प्रमुख एवं पूज्यनीय हिन्दू ग्रन्थ 'गीता' में 'कर्मण्येवाधिकरस्ते' का पाठ पढ़ाया गया है।

वैज्ञानिक प्रतिरूपों के आधार पर प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या की जा सकती है। परन्तु घटनाओं एवं दुष्परिणामों को रोक पाने में विज्ञान सफल नही है। अभी हाल ही की सुनामी जैसी घटनायें प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के संचालक तथा संहारकर्ता को अदृश्य शक्ति के रूप में मानने से आज विज्ञान, वैज्ञानिक एवं विकसित राष्ट्र भी इन्कार नही कर रहें हैं। सन् 1952 ई0 में जब वैज्ञानिकों ने पहली बार जीन सूत्रों का पता लगाया। तो 'अहंब्रम्हास्मि' बनने का स्वप्न देखने लगे। अमेरिकी कम्पनी ने गत वर्ष क्लोन एड में मानव क्लोन बनाने का दावा किया तो पूरी दुनिया हैरान रह गयी। परन्तु जब असफलता हांथ लगी तो उसे अपनी मामूली भूल अथवा चूक की संज्ञा देकर वही वैज्ञानिक इज्जत बचाने लगे। विज्ञान बहुत कुछ तो हो सकता है परन्तु सब कुछ नही। अहं का भाव लिये हर वैज्ञानिक एक ओर जहां अपने विज्ञान की धुरी पर स्वयंभू होने का दम्भ भरता है वहीं दूसरी ओर अपनी परम शक्ति एवं सत्ता के समक्ष नतमस्तक भी हो जाता है।

आरंभ से ही मानव सभ्यता के विकास से जाने अनजाने में विज्ञान का व्यवहारिक प्रयोग करता आ रहा है। भारतीय सन्दर्भ में विकास कार्यों के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग के साक्ष्य प्राचीन काल से ही मिलते है। प्राचीन भारत में आर्यभट्ट, वाराहमिहिर, ब्रम्हगुप्त, भाष्कराचार्य जैसे गणितज्ञ और खगोलशास्त्री द्वारा प्रतिपादित अनेक वैज्ञानिक सिद्धान्त आज भी मान्य है चिकित्सा के क्षेत्र में चरक तथा धन्वन्तरि जैसे महान विभूति का जन्म भारत भूमि पर ही हुआ था लेकिन आधुनिक समय में हमारे प्रतिदिन के जीवन पर प्रौद्योगिकता की क्या भूमिका हो सकती है। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण 18वीं शताब्दी के मध्य ब्रिटेन में हुई औद्यागिक क्रान्ति है। ब्रिटेन के इस औद्योगिक क्रांति ने विश्व के अन्य देशों को इस प्रकार के क्रांन्ति के लिए प्रेरित किया। किसी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था और उसके लोगों के खुशहाली के लिए प्रौद्योगिकी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण संसाधन है। वैश्वीकरण के

वर्तमान दौर में प्रौद्योगिकी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा का निर्धारण करती है। किसी संगठन के विकास और लाभ में भी इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ0 सोलों ने 1957 में प्रकाशित अपने शोधपत्र में यह तथ्य उद्घाटित किया था कि 1909–1949 की अवधि में अमेरिका में प्रतिव्यक्ति उत्पादन में 90 प्रतिशत वृद्धि तकनीकी परिवर्तन के कारण हुई थी। जिससे पता चलता है कि तकनीकी प्रगति और आर्थिक विकास के बीच सुदृढ़ सम्बंध हैं।[1] और फलतः लोंगों की गुणवत्ता में सुधार होता है। इस प्रकार से किसी देश के विकास के लिये उपलब्ध विभिन्न प्रकार के संसाधनों का उपयोग समुचित प्रौद्योगिकी के द्वारा ही सम्भव है और इस समुचित प्रौद्योगिकी का विकास विज्ञान एवं वैज्ञानिक अनुसंधान के द्वारा ही सम्भव है। अतः हम इस आधार पर कह सकते हैं कि विकास, विज्ञान और प्रौद्योगिकी एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। एक विकासशील और गरीब देश होते हुए भी भारत ने हमेशा विज्ञान और प्रौद्योगिकी को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। स्वाधीनता के पूर्व अत्यन्त अल्प साधनों, सीमित प्रयोगशालाओं और कठिन परिस्थितियों के बीच भी भारतीय प्रतिभा की यह महती उपलब्धि है कि जगदीश चन्द्र बसु, नोबेल पुरस्कार प्राप्त सर सी0वी0 रमन और रामानुजम जैसे वैज्ञानिक पैदा हुये।

स्वतंत्रता के बाद इस परम्परा का निर्वहन गंभीरता से किया गया। यही कारण है कि आज के बदले दौर में भारत को प्रौद्योगिकी के लिए मोहताज नही होना पड़ रहा है। अंतरिक्ष, सूचना, कृषि, जैव, परमाणु आदि प्रौद्योगिकी के बारे में भारत की सक्षमता जग जाहिर है। आजादी के बाद वैज्ञानिक औद्योगिक अनुसंधान परिषद (CSIR) का गठन हुआ। आज इसकी 38 प्रयोगशालाओं में कार्यरत 22000 वैज्ञानिक, एड्स जैसे असाध्य रोगों की दवा खोजने, औद्योगिक विकास के लिए नये–नये यंत्र बनाने, नये उत्पाद बनाने खाद्यान में आई आत्मनिर्भरता को टिकाऊ बनाने, चमड़ा उद्योग से लेकर काँच एवं पेट्रोलियम उद्योग तक सभी उद्योगों को नवीनतम तकनीकें उपलब्ध कराने जैसे देश के आर्थिक प्रगति के आधारभूत अनुसंधानों में जुटे हुये हैं। इसी प्रकार कृषि क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद *(ICAR)* अंतरिक्ष अनुसंधान

के क्षेत्र में *(ISRO)* तथा इसी तरह के कई अनुसंधान एवं वैज्ञानिक संस्थान देश के विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। वैज्ञानिक से राष्ट्रपति बने डॉ0 ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने इण्डिया मिलेनियम मिशन 2020 में पाँच ऐसे क्षेत्रों का उल्लेख किया है जिसमें प्रगति कर भरत विकसित देश बन सकता है। ये क्षेत्र हैं। कृषि एवं खाद्य प्रसंस्करण, ऊर्जा–सूचना प्रौद्योगिकी, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवा, प्रतिरक्षा प्रौद्योगिकी (अंतरिक्ष, परमाणु एवं अन्य)। डॉ0 कलाम का मानना है कि भारत के पास विशाल वैज्ञानिक जनशक्ति है। सभी क्षेत्रों में इसने अपनी धाक जमाई है। नाभिकीय प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष विज्ञान और सूचना विज्ञान के अतिरिक्त कृषि, औषधि, पदार्थ विज्ञान, रसायन और प्रौद्योगिकी तथा अन्य क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण सार्थक प्रगति हुई है। यह भी सही है कि उन सभी क्षेत्रों में हमारा प्रदर्शन और भी सही हो सकता था। भारत एक विकसित देश बनने लायक क्षमताओं से परिपूर्ण है।

भारत प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विश्व समुदाय में अपनी पहचान बना चुका है। उच्च और तकनीकी शिक्षा तथा शोध संस्थानों ने जो तकनीकी जानकारों की जमात पैदा की है उसका लाभ दूसरे देश भी उठा रहे हैं। अमेरिका के प्रतिष्ठित अंतरिक्ष संस्थान 'नासा' में एक तिहाई वैज्ञानिक भारतीय हैं। कोई 25000 डॉ0 वहां कार्यरत हैं। एक समय में ब्रिटेन की राष्ट्रीय स्वास्थ्य सेवा में एक चौथाई चिकित्सक भारतीय हुआ करते थे। जब अमेरिका ने सुपर कम्प्यूटर देने से इंकार कर दिया तो हमारे वैज्ञानिकों ने यह चुनौती स्वीकार कर ली। रूस, जर्मनी और सिंगापुर ने भारत से परम पदम् सुपर कम्प्यूटर भारत से खरीदे भी हैं। अंतरिक्ष और प्रतिरक्षा प्रौद्योगिकी में चीन के अतिरिक्त सभी विकासशील देशों से भारत आगे है।

अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हम विकसित देशों से प्रतिस्पर्धा करने की स्थिति में है। आज भारतीय अंतरिक्ष वैज्ञानिक भारत का प्रथम चन्द्रमा का अभियान चन्द्रयान–1' भेजने की तैयारी में है। भारत इस यान को ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान *(PSLV)* के द्वारा प्रक्षेपित करेगा।[2]

भारत अपने उपग्रहों की सहायता से विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों का आकलन, खोज, रेडियो, नेटवर्किंग, दूरस्थ शिक्षा, उच्चतर शिक्षा, मौसमी तथा विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं का पूर्वानुमान जल संस्थानों का बेहतर प्रबंधन, जैसे विकासात्मक कार्य कर रहे हैं।[3] भारत ने गत चार दशकों में विकसित अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का भरपूर लाभ उठाया है। जिसमें अनेक प्रणालियां उसने स्वयं बनाई हैं। भारत ने सामाजिक, आर्थिक विकास के लिये अंतरिक्ष का उपयोग किया है, उसने संसार को दिखा दिया है कि टेलीविजन प्रसारण, शिक्षा, मौसम विज्ञान, संसाधन प्रबंधन, एवं सूचना प्रौद्योगिकी, ने सम्पूर्ण विश्व की दूरियां कम कर दी हैं। भारत की सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति विश्व स्तर की है। इस क्षेत्र से जुड़ी भारतीय प्रतिभाओं का लोहा सम्पूर्ण विश्व मान रहा है। आज अत्यन्त पिछड़ा गाँव विकसित से विकसित शहरों तक की सम्पूर्ण सूचनायें प्राप्त कर विकास कर रहा है।[4] सूचना प्रौद्योगिकी ने दैनिक कार्य प्रणाली, उद्योग चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, शिक्षा विज्ञान वित्तीय प्रणाली, कृषि आदि विविध क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन का सूत्रपात किया है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रमों के द्वारा कई घातक बीमारियों का उन्मूलन एवं उनको नियंत्रित करने में सफल रहे हैं। जिसके कारण भारत की जीवन प्रत्याशा बढ़ी है। औद्योगिक क्षेत्र में प्रौद्योगिकी सुधार द्वारा औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि हुई है।[5]

देश के विकास के लिए आवश्यक सड़क, परिवहन, संचार जैसे आधारभूत संरचना के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की उल्लेखनीय भूमिका रही है। सूचना क्रांति के इस दौर में भारत किसी विकसित देश से पीछे नही है और सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में किसी को चुनौती देने की स्थिति में है। भारत में नाभिकीय प्रौद्योगिकी का स्वास्थ्य, उद्योग कृषि, पर्यावरण संरक्षण पशुपालन तथा विद्युत उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान है। आज भारत अपनी सुरक्षा आवश्यकता को पूरा करने के उददेश्य से एक परमाणु हथियार सम्पन्न राष्ट्र बन चुका है। रक्षा के क्षेत्र में हम अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी के बदौलत ही मुख्य युद्धक टैंक, प्रशिक्षण विमान, इलेक्ट्रॉनिक प्रणाली, विभिन्न प्रकार के प्रक्षेपास्त्र का विकास कर रक्षा आवश्यकताओं

की पूर्ति कर रहे हैं। भारत के विकास में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की भूमिका के इस संक्षिप्त वर्णन के आधार पर कह सकते हैं। जिस प्रकार विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का क्षेत्र व्यापक है उसी प्रकार भारत के सामाजिक, आर्थिक, आधारभूत संरचना के विकास में भी व्यापक योगदान है।

भारत की रक्षा नीति का उददे्श्य भारतीय उपमहाद्वीप में शान्ति को स्थापित रखना है तथा किसी आक्रमण का सामना करने के लिए सेना को पर्याप्त रूप से सुसज्जित करना है।[6] स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत को पड़ोसी राष्ट्रों से उत्पन्न राष्ट्रीय सुरक्षा के खतरे को देखते हुये प्रतिरक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक एवं तकनीकी विधियों पर विशेष ध्यान दिया गया। जिसके परिणामस्वरूप भारत को इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई। स्वतंत्र भारत अपनी रक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये परमाणु प्रौद्योगिकी, प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी एवं संचार प्रौद्योगिकी में महारत हासिल करता जा रहा है।[7] प्रतिरक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुसंधान को बढ़ावा देने के उददे्श्य से एक नोडल एजेन्सी के रूप में प्रतिरक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन *(DRDO)* की स्थापना की गई।[8] *DRDO* देश के रक्षा अनुसंधान योजनाओं के प्रारूप तैयार करने से लेकर उसका क्रियान्वयन मूल्यांकन एवं देश के रक्षा अनुसंधानों में लगी सभी संस्थाओं के बीच समन्वय तक का कार्य करता है। सार्वजानिक क्षेत्र के रक्षा प्रतिष्ठानों का ढाँचा इस तरह बनाया गया कि उनमें लचीली संचालन व्यवस्था, विक्रेन्दित प्रबन्ध और पर्याप्त स्वायत्वत्ता हो। रक्षा उत्पादन और आपूर्ति विभाग के अंतर्गत आठ सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम है।[9] हिन्दुस्तान एरोनाटिक्स लिमिटेड 1964 में इसकी स्थापना की गई थी। इसका मुख्यालय बंगलौर में हैं। इसका मुख्य कार्य विभिन्न प्रकार के विमानों, हेलीकाप्टरों, और उनसे सम्बंधित है। हवाई इंजनों के उपकरणों तथा कलपुर्जो का डिजाइन बनाने और उसका निर्माण करना है। सेना तथा अन्य क्षेत्रों में काम आने वाले हेलीकाप्टरों का डिजाइन बनाया तथा विकसित किया। इनमें छोटे विमान, लड़ाकू प्रशिक्षक विमान, हेलीकाप्टर और उनके इंजन तथा कलपुर्जे आदि शामिल हैं। भारत इलेक्ट्रॉनिक्स

लिमिटेड की स्थापना 1954 में तथा कार्यालय बंगलौर में है और इसकी नौ उत्पादन इकाइयाँ हैं ।

भारत की सशस्त्र सेनाओं, अर्धसैनिक बलों, और आकाशवाणी, दूरदर्शन विभाग, दूरसंचार विभाग, पुलिस, बेतार, मौसम विभाग जैसे अन्य सरकारी विभागों में काम आने वाले इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों और अति आधुनिक कलपुर्जों के डिजाइन तैयार करने और उनके विकास तथा निर्माण कार्य में लगा हुआ है। भारत अर्थमूवर्स लिमिटेड की स्थापना 1964 में तथा बंगलौर में कार्यालय, भारतीय रेलों के रेल डिब्बों, रेल बस और डी0सी0ई0एम0यू0 हैवी ड्यूटी ट्रकों इसकी विभिन्न किस्मों कैश फायर टेंडर, हैवी रिकवरी वाहन, पी0एम0एस0 पुलों, मिटट्ी खोदने वाले उपकरण आदि के निर्माण में लगी हैं। मझगांवडांक लिमिटेड, 1960 में स्थापना तथा कार्यालय बम्बई में है। यह देश की जलपोत निर्माण की सबसे बड़ी गोंदी है। इस समय भारत नौसेना के लिए पनडुब्बियों, प्रक्षेप्रास्त्र नौका, विध्वसंकों, लघुविध्वसंको और युद्धपोतों का निर्माण तथा तटरक्षकों के लिए गस्ती नौकाओं के निर्माण कार्य में लगी है। गार्डनरीचशिप बिल्डर्श एण्ड इंजीनियर्स लिमिटेड की स्थापना 1934 में तथा कार्यालय कोलकाता में है। नौसेना और तटरक्षक संगठन के लिए युद्धपोतों और सहायक पोतों के निर्माण व मरम्मत का कार्य करती है। गोवा शिपियार्ड लिमिटेड में वास्कोडिगामा स्थित जहाजों एवं जलपोंतों का निर्माण उनकी मरम्मत तथा पुनः फिट करने का कार्य किया जाता है। इसने भारतीय नौसेना और तटरक्षक बल के अलावा गैर सैनिक क्षेत्रों के लिये भी विभिन्न प्रकार के जलपोतों के निर्माण तथा उसकी मरम्मत का कार्य करता है। भारत डायनॉमिक्स लिमिटेड 1970 में स्थापना तथा कार्यालय हैदराबाद में है। इसमें निर्देशित प्रक्षेप्रास्त्रों का उत्पादन होता है। यह उन्नत निर्देशित प्रक्षेप्रास्त्र प्रणाली के निर्माण की क्षमता रखती है। इसकी इकाइयाँ कंचनबाग और मेढ़क में स्थित है। मिश्रधातु निगम लिमिटेड की स्थापना 1973 में तथा हैदराबाद में कार्यालय है। यह विशेष इस्पात टिटेनियम और सुपर मिश्रधातुएं बनाती है। जिसका

प्रयोग वैमानिकी, अंतरिक्ष और परमाणु उर्जा इंजीनियरी तथा संचार क्षेत्रों में किया जाता है।[10]

सामान्य तौर पर किसी भी राकेट को प्रक्षेपास्त्र कहा जाता है। मौलिक रूप से दो तरह के प्रक्षेपास्त्र होते हैं पहला अनिर्देशित तथा दूसरा निर्देशित। इन दोनों प्रक्षेपास्त्र में मुख्य अंतर यह होता है कि अनिर्देशित प्रक्षेपास्त्र ऊपरी वातावरण से सम्बंधित शोध के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। जबकि निर्देशित प्रक्षेपास्त्र युद्ध में शत्रु के टैंको, विमानों, प्रक्षेपास्त्र आदि को नष्ट करने के लिए प्रयोग में लाये जाते हैं। दोनों प्रकार के प्रक्षेपास्त्र में उड़ान के प्रारम्भिक भाग में राकेट मोटरों द्वारा नोदित की जाती है। नोदक के दहन से उत्पन्न हुई गैंसे जब नोजल से होकर तीव्र गति से निकलती है। तो गैस के बहाव के विपरीत दिशा में प्रणोद विकसित होता है। जिससे प्रक्षेपास्त्र गतिमान हो जाता हैं प्रतिरक्षा के क्षेत्र में प्रक्षेपास्त्र के महत्त्व को देखते हुए डॉ0 ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम के नेतृत्व में चलाई गई समन्वित निर्देशित मिशाइल विकास कार्यक्रम (I.G.M.D.P) के अन्तर्गत 'अग्नि' सतह से सतह पर मार करने वाला प्रथम इंटरमीडियट रेंज का बैलिस्टिक मिसाइल (*IRBM*) है। इसका पहला परीक्षण 22 मई 1988 को उड़ीसा के चांदीपुर रेंज से किया गया था। 'अग्नि' एक दो चरणों वाला प्रक्षेपास्त्र है। जिसके प्रथम चरण में ठोस नोदक (ईंधन) और दूसरे चरण में द्रव नोदक का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार यह ठोस और द्रव दोनों का एक साथ प्रयोग करने वाला विश्व का पहला प्रक्षेपास्त्र है। अग्नि प्रक्षेपास्त्र में जड़त्वीय नौ परिवहन मार्ग निर्देशन प्रणाली का प्रयोग किया गया है। जिससे इसे निष्क्रिय करना कठिन है। इसके री–इन्ट्री सिस्टम कार्बनरेशों और फोनोलिक रेजीन से बना है। जिससे यह 3000 डिग्री सेंटीग्रेड तक के ताप को सहन कर सकती है। भारवाहन क्षमता एक टन, मारक क्षमता 1500 किलोमीटर, जबकि कुल वजन 14.2 टन तथा लम्बाई 21 मीटर है। इस प्रक्षेपास्त्र में SLV-4 राकेट का प्रयोग किया गया है। अग्नि–2 प्रक्षेपास्त्र को अधिक उन्नत बनाकर दोनों चरणों के राकेट में ठोस ईंधन का प्रयोग किया गया है। जिसके कारण इसकी मारक क्षमता अधिक है इसमें न्यूक्लियर

वार हेड का प्रयोग कर परमाणु हथियार भी ढोया जा सकता है। भारत ने अपनी सुरक्षा चिन्ताओं के अनुरूप अपनी सामरिक रणनीति को आगे बढ़ाते हुए यह संकेत दिया हैं कि वह अपनी रक्षा व्यवस्था को प्रक्षेपास्त्रों पर आधारित रखेगा। अग्नि–2 सतह से सतह में मार करने वाली मध्यम दूरी की बैलिस्टिक मिसाइल है। यह प्रक्षेपास्त्र 2000 किमी0 से अधिक, न्यूक्लियर वार हेड के साथ एक टन विस्फोटक सामग्री के साथ अपने लक्ष्य तथा बदले हुए लक्ष्य में मार कर सकता है। इसकी सफलता से भारतीय प्रतिरक्षा प्रणाली और सुदृढ़ हो गयी। पोखरण में परमाणु विस्फोट करने के बाद के दिनों में भारत ने जिस न्यूनतम परमाणु प्रतिरोधक शक्ति की बात कही थी, वह अग्नि–2 के सफल परीक्षण के बाद काफी सीमा तक प्राप्त कर ली है। भारत की वास्तविक सुरक्षा चिंताये पाकिस्तान चीन और अमेरिका को लेकर है। भारत के पास लघु दूरी तक मार करने वाली पृथ्वी मिसाइल सभी पाकिस्तानी शहरों तक मार कर सकती है। अग्नि–2 का विकास चीन के खतरे के खिलाफ हमारा प्रतिरोधात्मक प्रबंध है। भारत के पास न केवल परमाणु बम बनाने की क्षमता है बल्कि उसे दूर तक छोड़ने के लिये आवश्यक मिसाइलों की क्षमता भी है। अग्नि–2 के सफल परीक्षण ने एक सैन्य ताकत के रूप में भारत को अच्छी तरह स्थापित कर दिया है। भारत का सिद्धान्त, भारत किसी भी युद्ध में पहले परमाणु बम का प्रयोग नही करेगा, लेकिन विश्व में जब तक परमाणु बम के हमला का खतरा जीवित है तब तक उसके विरूद्ध एक प्रतिरोधात्मक भारतीय कवच भी बना रहना चाहिए। अग्नि–2 का परीक्षण करके भारत ने अपने संकल्प और साहस का भी सफल परीक्षण किया है। जिसे अमेरिका के दबाव में छोड़ दिया गया था। 1 जनवरी 2001 के सफल परीक्षण के बाद इस मिसाइल प्रणाली का सीमित उत्पादन प्रारम्भ कर दिया गया।

पृथ्वी प्रक्षेपास्त्र की सतह से सतह पर 150 से 250 किमी0 तक मारक क्षमता है। यह थल तथा वायु सेना में तैनात किया गया है। इसमें भार वाहन क्षमता तथामारक क्षमता में आपसी सामंजस्य है। पृथ्वी का नौसेना संस्करण 'धनुष' है। **आकाश** प्रक्षेपास्त्र अमेरिकी पैट्रियाट प्रक्षेपास्त्र की तरह जमीन से हवा में मार करने

वाला प्रक्षेपास्त्र है। जो 25 किमी0 की ऊँचाई में उड़ने वाले दुश्मन के विमान व प्रक्षेपास्त्र आदि को एक साथ मारकर गिरा सकता है इसी कारण इसे बहुलक्ष्य प्रक्षेपास्त्र कहा गया है। आकाश प्रक्षेपास्त्र में फेस्डऐरेराडार (राजेन्द्र) लगाया गया है जो एक साथ 64 लक्ष्यों पर नजर रख सकता है। नाग प्रक्षेपास्त्र तीसरी पीढ़ी का टैंक नाशक प्रक्षेपास्त्र है। जो इन्फ्रारेड प्रणाली से सुसज्जित होने के कारण दुश्मन के टैंक को पता लगाकर नष्ट कर सकता है। इस प्रक्षेपास्त्र को हेलीकाप्टर से भी छोड़ा जा सकता है। इसकी मारक क्षमता 5 किमी0 है। नाग प्रक्षेपास्त्र थल सेना में अक्टूबर 1999 में शामिल कर लिया गया है तथा इसका उत्पादन जारी है। नाग सभी मौसम में कार्य कर सकने वाला प्रक्षेपास्त्र है। इसमें इमेजिंग इन्फ्रारेड तथा मीलीमीट्रिंग तरंग ग्राही तकनीक पर आधारित निर्देश प्रणाली का प्रयोग किया गया है। जिसमें यह अत्यधिक अचूक निशाने के साथ टैंक पर टाप और फ्रंट अटैक कर सकता है। एक बार छोड़े जाने के बाद इसे पुनः निर्देशित करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। जिसके कारण इसे 'दागो और भूल जाओ' टैंक रोधी प्रक्षेपास्त्र भी कहा जाता है। त्रिशूल यह धरती से धरती पर मार करने वाला कम दूरी का प्रक्षेपास्त्र है। त्रिशूल की मारक क्षमता 500 मीटर से 9 किमी0 है। त्रिशूल में फ्लाईकैचर राडार का प्रयोग किया गया है। जिससे यह सभी प्राकर के मौसम में कार्य कर सकता है। इस प्रक्षेपास्त्र को थल, वायु और नौसेना के उपयोग के लिए काफी लाभदायक है। त्रिशूल का नौसेनिक रूपान्तरण किया गया है। जिससे वह सैनिक के पोत के पास आते हुए दुश्मन के किसी प्रक्षेपास्त्र को आसानी से नष्ट कर सकता है। त्रिशूल के नौसैनिक संस्करण का सफल परीक्षण हो चुका है। ब्रम्होस 12 जून 2001 को भारत–रूस संयुक्त रूप से विकसित, मध्यम दूरी के सुपरसोनिक क्रूज मिसाइल का बंगलौर में सफल परीक्षण किया गया। 6.9 मीटर ऊँचा यह प्रक्षेपास्त्र कई शस्त्रमुख (वारहेड) एक साथ ले जाने में सक्षम है और 280 किमी0 तक मार कर सकता है। यह प्रक्षेपास्त्र कम्प्यूटर बोर्ड द्वारा संचालित है और इसमें ठोस तथा द्रव दोनों तरह के ईंधनों का प्रयोग किया जा सकता है। भारत की सामरिक क्षमता में और वृद्धि के उद्देश्य से सूर्य प्रक्षेपास्त्र 5000 किमी0 मारक क्षमता वाला एक

इण्टरकंटिनेन्टलबैलिस्टक मिसाइल (*ICBM*) है। इसमें क्रायोजेनिक इंजन युक्त पी0एस0एल0वी0 का प्रयोग किया जायेगा। इस प्रक्षेप्रास्त्र का विकास कार्य 1997 से चल रहा है। धनुष सतह से सतह पर मार करने वाले पृथ्वी प्रक्षेप्रास्त्र का नौसैनिक रूपान्तरण है जिसे किसी नौसैनिक पोत से दागा जा सकता है। अस्त्र लड़ाकू विमान से छोड़ा जा सकेगा। जिसकी मारक क्षमता 60–100 किमी0 होगी। ''दृष्टि से अधिक दूरी'' वाली हवा से हवा में मार करने वाली इस अस्त्र मिसाइल को देश में विकसित हो रहे हल्के लड़ाकू विमान (*LCA*) में लगाई जायेगी। यह मिसाइल दुश्मन के किसी हमलावर विमान पर मार कर सकती है। अस्त्र का विकास रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन द्वारा किया जा रहा है सागरिका समुद्र से छोड़ा जाने वाला क्रूज प्रक्षेपास्त्र है।[11]

विश्व में सर्वाधिक उन्नत श्रेणी के बहुउपयोगी लड़ाकू विमानों में से एक स्वदेश निर्मित (तेजस–LCA) का भारत ने 4 जनवरी 2001 को बंगलौर में सफल परीक्षण कर भारतीय वैमानिकी के इतिहास में एक नया अध्याय लिख गया है। 'तेजस' में लगाया गया इंजन अमेरिका का (*GE-404*) है, किन्तु इसमें लगा कावेरी इंजन 75 से 80 प्रतिशत शीघ्र ही स्वदेशी होगा। यह विमान ध्वनि की गति से तेज, चार टन वजन के हथियार के साथ सभी प्रकार के मौसम में हवा से हवा में, हवा से धरती पर तथा हवा से समुद्र में मार करने में सक्षम है। यह निर्धारित समय से पूर्व ही वायु सेना में शामिल होगा। रक्षा मंत्रालय की स्थाई समिति की रिपोर्ट में कहा गया है कि दशकों के वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुसंधानों का निचोड़ है। जो विमान को हर पहलू से उन्नत सिद्ध करती है। (*LCA*) में उड़ान के दौरान ही आकाश में ईंधन भरा जा सकता है। तथा इसके उड़ाने एवं उतारने के लिए छोटी हवाई पटटी ही पर्याप्त है। युद्ध के समय आने वाली समस्याओं में (*LCA*) भारतीय वायुसेना के लड़ाकू विमानों में सबसे भरोसेमन्द अत्याधुनिक विमान होगा। वायु सेना के लिए विमानवाही पूर्व चेतावनी (*IL-76*) विमान के निर्माण के लिए भारत ने इजराइल एवं रूस के साथ एक त्रिपक्षीय समझौते पर हस्ताक्षर 10 अक्टूबर 2003 को नई दिल्ली

में किये हैं। एक अरब डालर के तहत इजराइल में निर्मित अत्याधुनिक फॉल्कन राडार प्रणाली (*AWAC*) रूस निर्मित एल्युसिन परिवहन विमान (*IL-76*) में फीट की जायेगी इस विमान को भारत रूस से खरीदेगा। इससे भारत फाल्कन अवाक्स प्रणाली युक्त इल्युसिन विमान रखने वाला इजराइल के बाद विश्व का दूसरा देश हो जायेगा। अमेरिका अपनी पूर्व चेतवानी प्रणाली हाक आई (*HAWK EYE*)के लिए बोइंग विमानों का इस्तेमाल करता है। 3 सितम्बर 2003 को सुरक्षा मामले पर मंत्रिमंडलीय समिति (*CCS*) ने सैन्य बलों के आधुनिकीकरण के लिये लगभग 1250 करोड़ रुपये के खरीद प्रस्तावों को स्वीकृत प्रदान की है। इसमें वायुसेना के लिए उन्नत जेट प्रशिक्षण (*AIT*) हांक विमानों की खरीद का प्रस्ताव भी शामिल है। ब्रिटिश एयरोस्पेस कम्पनी ने 66 हांक 115&-Y-24 विमान तैयार अवस्था में खरीदे जायेंगे, जबकि बयालीस का निर्माण हिन्दुस्तान एअरोनाटिक्स लिमिटेड में प्रौद्योगिकी हस्तान्तरण लाइसेंस के तहत किया जायेगा। यह पूरा सौदा 8000 करोड़ रूपये का होगा।[12] इसमें विमानों के रखरखाव के लिए आधारित संरचना तैयार करने की लागत भी शामिल है। वैसे प्रत्येक विमान की कीमत 85 करोड़ बताई गई। 8 अक्टूबर 2003 को इजराइल निर्मित तीव्र मारक क्षमता वाली पोत इनफेक टी0–82 को भारतीय नौसेना बेड़ा में शामिल कर लिया है। इस पोत के नौसेना में शामिल हो जाने से भारतीय नौसेना और मजबूत हो जायेगी। टाइफून नामक अस्त्र से सुसज्जित इस नौका को आक्रमण के दौरान तेजी से चलाने के लिए उच्च्य शक्ति का इंजन लगाया गया है। रडार वह डिवाइस यंत्र है जो अपने ट्रांसमीटर की सहायता से छोटी तरंगदैर्ध्यों का उच्च्य आवृति में लक्ष्यों विमान आदि से टकराकर पुनः उसके रिसीवर में आ जाता है, जिससे लक्ष्य (विमान आदि की दिशा उंचाई आदि का पता लगता है) प्रतिरक्षा के क्षेत्र में रडार का उपयोग शत्रु की विमानों की गतिविधियों की जानकारी लेने में मुख्य रूप से की जाती है। उल्लेखनीय है कि साधारण रेडियो तरंगे इतनी अधिक लम्बाई की होती है कि वे ठोस वस्तुओ के पीछे तक पहुंच जाती हैं। लेकिन रडार में प्रयुक्त तरंगे इतनी कम लम्बाई की होती है कि अधिकांश वस्तुओं से टकराकर वापस लौट आती हैं। रडार में इस तथ्य का लाभ वस्तु की दूरी ज्ञात करने

में लगाया जाता है। वस्तु यदि गतिमान है तो परिवर्तित तरंगों द्वारा उसकी दिशा एवं चाल का पता लगाया जाता है।

भारत इलेक्ट्रॉनिक्स 1960 से रडार निर्माण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। इन्द्र, इरमा, रडारों का विकास, नौसैनिक रडारों में रानी, रश्मि, अपर्णा, रडार सर्वेक्षण तथा एस0एस0एम0 नियंत्रण के लिए किया गया। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र द्वारा विकसित किया जाने वाला एक प्रकार का इलेक्ट्रॉनिक शस्त्र, काली (*KALI+KILO, AMPERE, LINEAR, INJCTOR*) 500 मेगावाइट शक्ति की सूक्ष्म तरंगे उत्सर्जित कर शत्रुओं के विमानों एवं प्रक्षेपास्त्रों को इलेक्ट्रॉनिक्स प्रणालियों व कम्प्यूटर को नष्ट कर सकती है। मूलतः काली की परिकल्पना औद्योगिक उपयोगो के लिये 1985 में वार्क के तत्कालीन निर्देशक डॉ0 चिदम्बरम द्वारा की गई थी, परन्तु इस पर कार्य 1989 में प्रारम्भ किया गया भारत के इस प्रथम स्टारवार शस्त्र का डिजाइन पी0एच0सेन ने तैयार किया था। इस अत्याधुनिक स्टारवार शस्त्र का निर्माण कार्य लगभग पूर्ण हो चुका है। संयुक्त एवं संग्रह भारतीय रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन के हैदराबाद स्थिति डिफेन्स इलेक्ट्रॉनिक्स युद्ध प्रणाली का विकास किया गया *DRDO* ने थल सेना के लिये 'संग्रह' नामक इलेक्ट्रॉनिक युद्ध प्रणालियां विकसित की है। *DRDO* वायुसेना के लिये टेम्पेस्ट का विकास कर चुका है। निशांत पायलेट रहित लड़ाकू विमान है जो बंगलौर स्थिति नेशनल एअरस्पेस लैवरोट्रीज द्वारा विकसित किया गया है। इसके द्वारा प्रशिक्षण एवं टोही गतिविधियां होगीं। इसका कई बार सफल परीक्षण किया गया। प्रशिक्षण विमान निशांत के विकास का मुख्य उद्‌देश्य युद्ध क्षेत्र में पर्यवेक्षण और टोह लेने की भूमिका का निर्वाह करना है। उसे जमीन से 160 किमी0 की परिधि में नियंत्रित किया जा सकता है। इसकी बाडी मजबूत ग्लास एवं कम्पोजित मैटेरियल की बनी है जिसके कारण यह रडार की पकड़ में नहीं आता। लक्ष्य भी भारत में विकसित पायलेट रहित विमान है। जेट इंजन से सुसज्जित यह विमान 10 बार प्रयोग में लाया जा सकता है तथा 100 किमी0 की परिधि में इसे रिमोट से नियंत्रित किया जा सकता है। इसकी अधिकतम गति 500

किमी0 प्रति घंटा है इसका जमीन से वायु, वायु से वायु में मार करने वाले प्रक्षेपास्त्रों एवं तोपों से निशाने लगाने के लिये प्रशिक्षण देने हेतु लक्ष्य के रूप में किया गया है। हंस–3 स्वदेशी तकनीक से निर्मित दो सीटों का प्रशिक्षण विमान है। यह हल्कीकम्पोजिट सामग्री का बना है जिससे यह विमान रडार की नजरों से बचा रहेगा इसका उपयोग टोही विमान के रूप में किया जा सकता है। 215 किमी0 प्रतिघंटे चाल है। पिनाका मल्टीबैरल राकेट लांचर प्रणाली है। पिनाका राकेट लांचर प्रणाली के द्वारा 44 सेकेण्ड में 12 राकेट एक साथ 39 किमी0 दूर की मारक क्षमता से छोड़ा जा सकता है। पिनाका का अब तक कई सफल परीक्षण कर चुके हैं और इसको सेना में सम्मिलित कर लिया गया। कारगिल युद्ध में यह काफी उपयोगी सिद्ध हुआ। अर्जुन टैंक भारत का युद्धक टैंक है जिसका विकास (*DRDO*) द्वारा किया गया है। यह 80 किमी0 प्रतिघन्टा की गति से 50 किमी0 तक मार कर सकता है। इस टैंक में उच्च तकनीकी के ऊर्जा एवं संचार प्रणालियों का प्रयोग किया गया है। जिससे यह रात के अंधेरो में दुश्मन पर कहर ढा सकता है। इस टैंक का उपयोग रेगिस्तान एवं दलदली क्षेत्रों में सामान्य रूपों से किया जा सकता है। इस टैंक में एक खास किस्म की आर्मरपिर्यसिंगकिन स्टैविलाइज्ड डिस्कटिसैवोट तकनीकी का इस्तेमाल किया गया है। जिससे इसके द्वारा बख्तरबंद गाड़ियों तथा चलती फिरती वस्तुओं पर अचूक निशाना लगाया जा सकता है। निशाना साधने के लिये इसमें तीन चैनल हैन्डेसाइट, थर्मलासाइट और लेजररेंज फाइंडर। इनमें से लेजर रेजफाइंडर चैनल से सर्वथा अचूक निशाना लगाया जाना सम्भव है। इसके अलावा इस टैंक में निष्क्रिय इन्फारेड सेंसर पर आधारित नाइट विजन उपकरण लगाया गया है। इस तकनीक के कारण यह निम्न इंटेनस्टीफोटान की भी पहचान कर सकता है। जिससे अंधेरे में भी लक्ष्य को देखकर अचूक निशाना लगाया जा सकता है। भीष्म टैंक आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित और जबरजस्त मारक क्षमता वाला भीष्म टी0–90 टैंक को 7 जनवरी 2004 को थल सेना को सौंप दिया गया है। इस टैंक के भारतीय सेना में सम्मिलित होने से थल सेना की मारक एवं युद्ध क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि होने की आशा है।

सैन्य विज्ञान संचालन क्षेत्र में सम्बद्ध वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान में सेना की सहायाता के लिए 1948 में रक्षा विज्ञान संगठन की स्थापना की गई। इनकी प्रयोगशालाओं, प्रतिष्ठानों को सेनाओं के तकनीकी विकास प्रतिष्ठानों के साथ मिलकर 1958 में (*DRDO*) स्थापित किया गया, इसका उद्देश्य सेना को वैज्ञानिक सलाह देने के अलावा, हथियारों एवं उपकरणों की डिजाइन तैयार करना और उनका विकास करना हैं जटिल उच्च पौद्योगिकी वाली अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं को मंजूरी और प्रबन्धन में प्रशासनिक कुशलता बढ़ाने के लिए 1980 में अलग रक्षा अनुसंधान एवं विकास विभाग गठित किया गया। संगठन से सशस्त्र सेनाओं की आवाश्यकताओं के अनुसार कई रक्षा प्रणालियां, उपकरण तथा अन्य उत्पाद विकसित किये हैं और उनके आधार पर उत्पादन शुरू हो गया है। इसमें उल्लेखनीय है, जमीन से जमीन तक मार करने वाली मिसाइल पृथ्वी, पायलेट विहीन लक्ष्यभेदी विमान 'लक्ष्य' वायुसेना के लिए इलेक्ट्रॉनिक्स युद्ध प्रणालियां 105 MM की हल्की फील्डगन, 5.56 इंसास राइफल, एल0एम0जी0 और उनकी गोलियां मिश्रित सोनार व समन्वित अग्नि नियंत्रण प्रणाली पंचेद्रियां 'सोनोबाई', सामुद्रिक ध्वनिक अनुसंधान पोत, सागर ध्वनि, एम0वी0टी0 अर्जुन, 130 MM की हैवीगन, 125 MM - *FSAPDSA* इफ्लुएंस सुरंगे, रोशनी छोड़ने वाले गोले, कई तरह के फ्यूज आर0टी0यू0 सहित उच्चगति वाले निम्न ड्रैग बम, कम ऊँचाई के लिये रडार 'इन्द्र' रात्रि दृश्य यंत्र लेजर यंत्र फांइडर, टार्गेट , डेजिग्नेटर उन्नत गणना प्रणाली कई प्रकार के युद्ध सेल रचना करने वाले सेमुलेशन साफ्टवेयर, उत्पाद सेंसर सामग्री, इलेक्ट्रॉनिक यंत्र खाने व जीवित रहने के लिये तैयार भोजन, राशन, भीषण ठंड के लिये कपड़े NBC संरक्षणात्मक मदें। आश्रय व पर्वतारोहण उपकरण, समन्वित निर्देशित मिसाइल कार्यक्रम (IGMDP) के अंतर्गत विभिन्न मारक क्षमता वाले प्रक्षेपास्त्रों का विकास किया गया है।

इस वैज्ञानिकी ने हमारी रक्षा आवश्यकताओं में आत्मनिर्भरता पैदा की है। लेकिन परिवर्तित परिस्थितियों में मानवीय दृष्टिकोण संकुचित हुआ है। जिससे नैतिक

मूल्य प्रभावित हुये है। यहां तक कि इनमें स्थिरता भी नही रही बल्कि गिरावट आई है जिससे हमारे रक्षा तंत्र पर एक प्रश्न चिह्न लगता जा रहा है।

संरक्षक राज्य की विचारधारा-

(भूटान, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका)

आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व तिब्बत के खामा प्रान्त के लोग यहां आकर बस गये और धीरे–धीरे उन्होने इस पर कब्जा कर लिया। आगे चलकर वर्तमान महाराजा के पूर्वजों ने लामाओं के प्रभुत्व को समाप्त कर दिया और भूटान पर अपना अधिपत्य जमा लिया। भारत–भूटान सम्बंधों की शुरूआत 1865 की सन्धि 'सिनचुलासन्धि' जो कि भारत की ब्रिटिश सरकार और भूटान के मध्य हुयी थी, जिसके द्वारा भूटान को भारतीय रियासत का रूप प्रदान किया गया था। उसके बाद 1910 में 'पुनर्वा संन्धि' द्वारा इन सम्बंधों को सुदृढ़ किया गया। इस सन्धि के अन्तर्गत तत्कालीन ब्रिटिश भारत ने भूटान के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने और भूटान ने विदेशी मामलों में भारत से निर्देशित एवं नियंत्रित होना स्वीकार कर लिया। [13]

भूटान पूर्वी हिमालय में स्थित एक छोटा सा स्वतंत्र राष्ट्र है। इसके पश्चिम में भारत का सिक्किम प्रान्त तथा बंगाल का दार्जिलिंग जिला, इसे नेपाल से अलग करता है। इसकी उत्तरी तथा उत्तर पूर्वी सीमा पर तिब्बत तथा इसके पूर्व तथा दक्षिण में भारत का असम प्रान्त है। सन 1949 में भूटान ने स्वतंत्र भारत से एक नई सन्धि की, जिसमें पुनर्वासन्धि की सभी शर्तों को मानने के लिये आश्वासन दिया।

भारत ने भूटान के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना स्वीकार किया तथा विदेश नीति निर्धारण की जिम्मेदारी भूटान से प्राप्त कर लिया। भूटान को 5 लाख वार्षिक सहायता देना स्वीकार किया सन् 1962 के चीन आक्रमण के बाद प्रतिरक्षा का भार भी भूटान ने भारत को सौंप दिया। आर्थिक क्षेत्र में भारत ने भूटान की धन और जन से अधिक सहायता की हैं भूटान कृषि, सिंचाई, सड़क परियोजना में भारत ने निरन्तर सहयोग दिया है। चुक्खहाईडिल परियोजना और पेनडोना सीमेन्ट संयन्त्र में (1.275 करोड़) रूपये की सहायता दी है। भूटान के सचिवालय के निर्माण तथा पुराने मठों व विहारों के जीर्णोद्धार के लिये आर्थिक सहायता दी है। पूर्णरूप से भारत की

सहायता से निर्मित 50 किमी0 के भूटान प्रसारण केन्द्र का मार्च 1991 में उद्घाटन और जून 1991 में 336 MW की चुक्ख जल परियोजना जिनसे भूटान को आधे से अधिक आय प्राप्त होती है। जो दोनों देशों के बीच बढ़ते हुए आर्थिक एवं तकनीकी सहयोग का उदाहरण है। भारत से सहायता प्राप्त संगम पुत्र नाम की एक परियोजना 21 जून 1991 में उद्घाटन किया गया। सितम्बर 1991 में भूटान नरेश की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच एक नये वायुसेना करार पर हस्ताक्षर किये गये। भारत भूटान के विद्यार्थियों को माध्यमिक एवं उच्चतर शिक्षा तथा विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण करवाता है तथा उनको छात्रवृत्ति प्रदान करता हैं। भारत ने भूटान में 30 करोड़ रूपये लागत से भारतीय सीमा सड़क संगठन ने 100 किमी0 लम्बी सड़क का निर्माण किया। 1978 में चौथी पंचवर्षीय योजन के लिये भूटान को 77 करोड़ रूपये दिया गया। पांचवी पंचवर्षीय योजना के लिये 159 करोड़ दिये गये। भूटान की सातवीं पंचवर्षीय योजना के लिये भारत ने 750 करोड़ रूपये की सहायता दी।[14] इस प्रकार भारत भूटान की आर्थिक, सामाजिक समृद्धि के लिये आर्थिक एवं तकनीकी मदद कर रहा है।

भारत भूटान को एक स्वतंत्र देश के रूप में बनाये रखना चाहता है। भारत की पहल पर ही भूटान 1971 में संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बना, 1975 में वह निर्गुट आन्दोलन में शामिल हुआ, 1977 में भारत ने भूटान के दूतावास का नई दिल्ली में दर्जा बढ़ा दिया। 'भूटान सार्क' का भी सदस्य है और वह दक्षिण एशिया में डाक सेवाओं में सहयोग सम्बंधी समिति का अध्यक्ष है।[15] चीन की भूटान में घुसपैठ निश्चित ही भारत की चिन्ता का कारण है। चीन ने पिछले दिनों में पशुओं को चराने के बहाने भूटान की सीमाओं में चले आये। दूसरा भारत की चिन्ता का कारण भूटान में रह रहे 4000 तिब्बती शरणार्थी है जो 1959 से वहां रह रहे हैं और जिन्हे भूटान की राष्ट्रीय एसेम्बली ने 1979 में एक प्रस्ताव पास कर कहा है कि वे या तो भूटान की नागरिकता स्वीकार करें और भूटान समाज में घुलमिल जाय या फिर उन्हे बाहर निकाल दिया जाय। इस चेतावनी के पीछे चीन का हांथ है। जो भारत के राष्ट्रीय

हित और आदर्श के विपरीत हैं यदि तिब्बती शरणार्थी भूटान, नेपाल या भारत की नागरिकता ग्रहण कर लेते हैं तो फिर तिब्बत की स्वाधीनता का मतलब ही समाप्त हो जाता है। भूटान की सामरिक स्थिति का लाभ उठाने के लिये चीन ही नही अमरीका, रूस तथ अन्य यूरोपीय देश भी लालायित रहते हैं। यदि भूटान के वैदेशिक सम्बंध संचालित न किये जायें तो वह भारतीय सुरक्षा के लिये भी खतरनाक सिद्ध हो सकता है। अभी तक भूटान अपनी विदेश नीति का संचालन भारत के मार्ग निर्देशन पर करता रहा है। पर धीरे–धीरे भूटान के अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व का विकास हो रहा है। वह संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य बन गया है। भारत और बांग्लादेश में उसके दूतवास खुल गये हैं। नेपाल, हांगकांग, सिंगापुर कुवैत में भी इसके प्रतिनिधि नियुक्त कर दिये गयें हैं। चीन, भूटान के राजनीतिज्ञों को धन और पद का लालच देकर अपने पक्ष में करने की चेष्टा में लगा हुआ है। भविष्य में भूटान के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बंध इस बात पर निर्भर करेंगे कि भारत–भूटान के सम्बंध कितने सहयोगपूर्ण रह पाते हैं तथा भूटान कहां तक अपने आप को चीन के प्रभाव से मुक्त कर सकता है।

नेपाल हिमालय की उपत्यकाओं में बसा हुआ एक छोटा सा देश है। यह भारत और तिब्बत के बीच स्थिति है और अब तिब्बत पर चीन के अधिपत्य के बाद भारत व चीन के बीच एक बफर स्टेट का कार्य करता है। आधुनिक नेपाल के निर्माता पृथ्वी नारायण शाह ने नेपाल की विदेश नीति का निर्धारण करते हुये कहा **"यह देश दो चट्टानों के बीच खिले हुये फूल के समान है हमें चीनी सम्राट के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बंध रखने चाहिये तथा हमारे सम्बंध दक्षिणी सागर के सम्राटों से भी मधुर होना चाहिए वह बहुत ही चालाक है।"**[16]

भारत के उत्तर पूर्व में स्थिति नेपाल सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। चीन द्वारा तिब्बत को हस्तगत कर लेने के बाद भारत चीन सम्बंधों में नेपाल की सामरिक स्थिति का महत्त्व बढ़ गया। उत्तर में भारत की सुरक्षा एक बड़ी सीमा तक नेपाल की सुरक्षा पर निर्भर करती है पंडित नेहरू ने 1950 में कहा था "जहाँ तक कुछ एसियाई गतिविधियों का सम्बंध है। भारत नेपाल के बीच किसी प्रकार का सैन्य

समझौता नही है। लेकिन नेपाल पर किये जाने वाले किसी भी आक्रमण को भारत सहन नही कर सकता। नेपाल पर कोई भी सम्भावित आक्रमण निश्चित रूप से भारतीय सुरक्षा के लिये खतरा होगा।''[17] अक्टूबर 1956 में भारत के राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने अपनी नेपाल यात्रा के दौरान कहा था कि नेपाल की शान्ति और सुरक्षा के लिये कोई भी खतरा भारतीय शान्ति और सुरक्षा के लिये खतरा है। नेपाल के मित्र हमारे मित्र हैं और नेपाल के शत्रु हमारे शत्रु हैं।[18] भारत ब्रिटिश शासन के समय यद्यपि नेपाल औपचारिक रूप से एक स्वतंत्र देश था तथापि नेपाल की राजनीति में ब्रिटिश शासकों का हस्तक्षेप बहुत अधिक था।

स्वतंत्र भारत सरकार सम्राज्यवादी नीति की पोषक न होने के बावजूद सामरिक महत्व के कारण नेपाल की अवहेलना नही कर सकती थी। इसके अतिरिक्त तिब्बत पर चीन का अधिकार हो जाने से सीमायें बिल्कुल मिल गईं। संयुक्त राज्य अमेरिका भी इसी कारण नेपाल की राजनीति में रूचि लेने लगा। इस प्रकार नेपाल में बड़ी अंतराष्ट्रीय शक्तियों के बीच टक्कर होने की स्थिति उत्पन्न हो गई। प्रारम्भ से भारत सरकार ने नेपाल की राजनीति एवं आर्थिक स्थिति को दृढ़ करने की नीति अपनाई। 1950 में राजशाही से मुक्ति के लिये प्रयास शुरू हुआ। 16 नवम्बर 1950 को नेपाल के महाराजा त्रिभुवन ने राज परिवार के 14 सदस्यों के साथ अपने राजमहल का परित्याग कर भारत में शरण ली। राणा शमशेर सिंह के विरूद्ध गृहयुद्ध शुरू हो गया यह विद्रोह भारत के भूभाग से ही संचालित किया गया। भारत के सहयोग से ही नेपाल में राजशाही का अन्त हुआ और नेपाल के महाराजा वास्तविक शासक बनें तथा लोकतंत्र की स्थापना हुई। इस समय पं0 नेहरू ने कहा **''नेपाल की स्वतंत्रता का सम्मान करते हुये हम नेपाल में कोई अव्यवस्था सहन नही कर सकते। क्योकि इससे हमारी सीमा सुरक्षा कमजोर हो जाती है।''**[19] 1 फरवरी 1955 को नेपाल के विदेशमंत्री ने कहा **''नेपाल किसी भी दशा में भारत के विरूद्ध नही जायेगा।''** भारत नेपाल मित्रता सन्धि (1950) का जिक्र करते हुये कहा, भारत का इरादा नेपाल के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का नही है किन्तु नेपाल की

घटनाओं का भारत पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है अतएव भारत का नेपाल के विषय में चिन्ता करना एवं सतर्क रहना स्वाभाविक है। नेपाल के विकास कार्यों में सबसे अधिक धन भारत का ही लगा हुआ है। नेपाल को भारत से हर तरह का प्रशिक्षण तकनीकी और गैर तकनीकी भी मिलता है। कोलम्बों योजना के अन्तर्गत भी भारत ने अनेक नेपाली नागरिकों को प्रशिक्षण दिया है।

भारत ने नेपाल की जिन परियोजनाओं के लिये सहायता दी है। उनमें प्रमुख 1.देवीघाट, त्रिशूल, करनाली, पंचेश्वर, जल विद्युत, योजनाओं 2. त्रिभुवन गणपथ, काठमाण्डु त्रिशूली मार्ग, त्रिभुवन हवाई अड्डा। 3. काठमाण्डु रक्सौल टेलीफोन संयन्त्र 4. चल नहर परियोजना, कोसी और गंडक परियोजना। 5. भू–वैज्ञानिक अनुसंधान तथा खनिज खोजबीन का काम 6. वीरगंज और हितौदा रेल निर्माण 7. काठमाण्डु घाटी के एक उपनगर पाटन में एक औद्योगिक बस्ती की स्थापना। दिसम्बर 1990 में एक द्विपक्षीय करार पर हस्ताक्षर हुये जिसके अन्तर्गत सहायक अनुदान के आधार पर रक्सौल में 3 करोड़ रूपये की लागत से एक नये रोड एवं रेल पुल का निर्माण, जो कि भारत से नेपाल आने जाने के लिये सर्वाधिक महतवपूर्ण सीमा स्थल होगा। दिसम्बर 1991 में बी0एच0 कोईराला की पुण्यतिथि में 'भारत–नेपाल फाउन्डेशन' बनाने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। दोनों ही देश दो–दो करोड़ रूपये के अंशदान से स्थापित इस फाउन्डेशन के द्वारा द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ावा दिया। वे औद्योगिक क्षेत्र में साझा उद्यम लगाने को भी सहमत है। इसके अतिरिक्त चीनी, कागज तथा सीमेन्ट पर विशेष ध्यान दिया गया। नेपाल के आग्रह पर भारत विराट नगर में कोइराला स्मृति मेडिकल कालेज, रंगेली में एक टेलीफोन एक्सचेंज, विराट नगर झापा तथा चतारावीपुर मार्ग के निर्माण, जनकपुर, बीजलपुर के रेललाइन के नवीनीकरण और रक्सौल तक की रेल लाइन को बड़ी लाइन में परिवर्तित किया। भारत–नेपाल के मध्य सम्बंधों का प्रमुख आधार 1950 की सन्धि के अनुच्छेद (7) के अनुसार "**एक देश के नागरिकों को दूसरे देश में निवास, जायदाद की मिल्कियत, उद्योग, व्यापार में भागीदारी व घूमने फिरने के समान**

अधिकार पारस्परिक आधार पर दिये जायेगें।"[20] "परिणामस्वरूप नेपाली नागरिकों को भारत में रहने घूमने–फिरने काम–धन्धा करने और *IAS, IFS, IPS* को छोड़कर शेष सरकारी नौकरियाँ करने की छूट है। भारत ने नेपाल को वो सारी सुविधायें प्रदान की है जो अनुच्छेद 7 में हैं लेकिन नेपाल भारत के सम्बंध में जूनियर भागीदार की मानसिकता से ग्रसित हैं नेपाल, भारत और चीन के साथ समदूरी सिद्धान्त के आधार पर सम्बंध विकसित करना चाहता है जिससे चीन को भी सन्तुष्ट किया जा सके। परन्तु भारत समदूरी के सिद्धान्त को नही मानता वह तो नेपाल के साथ विशिष्ट सम्बंध चाहता है, क्योंकि नेपाल एक आन्तरिक देश है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में नेपाल में माओवादी सिद्धान्त के आधार पर राजशाही शासन को समाप्त कर दिया गया, वहां पर सभी राजनीतिक पार्टियां तथा माओवादियो की सम्मिलित सरकार चल रही है जिस पर पुष्पकमल दहल उर्फ प्रचण्ड जो माओवादियों का नेतृत्वकर्ता तथा चीन समर्थित है उसका प्रभुत्व है अतः भारत नेपाल सम्बंध वर्तमान में अतिसंवेदनशील माहौल से गुजर रहें हैं।

बांग्लादेश के उद्‌भव के समय अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विकसित देश अमरीका, चीन ने भारत के समक्ष बड़ी समस्या उत्पन्न कर दी थी। एक ओर पाकिस्तान, चीन और अमेरिका की सांठ–गांठ से दक्षिण एशिया में शक्ति सन्तुलन अस्तव्यस्त हो गया था। पाकिस्तान से एक करोड़ शरणार्थी भारत में शरण लिये हुये थे। इस विशाल जन समुदाय के खान–पान, रहन–सहन और स्वास्थ्य सम्बंधी देखभाल का भार भारत पर था। इसके बावजूद भी पाकिस्तान ने भारत पर 3 दिसम्बर 1971 को पठानकोट, अमृतसर, जोधपुर, आगरा और श्रीनगर पर बमबारी कर इस उपमहाद्वीप में युद्ध छेड़ दिया। अब भारत को अपनी सुरक्षा, अखण्डता और सार्वभौमिकता को बनाये रखना आवश्यक था। पत्रकार अजित भट्‌टाचार्य का अभिमत था कि "भूगोल, इतिहास, संस्कृति और आर्थिक हितों की दृष्टि से इस संघर्ष की परिणति भारत के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और शरणार्थी के लगातार आगमन से स्थिति और भी गम्भीर हो गयी है। इन बातों को देखते हुये भारत के लिये यह

आवश्यक है कि इस लड़ाई का अन्त बांग्लादेश के पक्ष में हो। सन् 1962 और 1965 में जितनी जोखिम थी उतनी ही इसमें विद्यमान है। इससे हमें निश्चय ही लाभ होंगे–हमारी सीमाओं के दोनों ओर एक सशक्त दुश्मन की जगह एक मित्र और दूसरा कमजोर दुश्मन ही रह जायेगा भारत ने पाकिस्तानी आक्रमण का जवाबी उत्तर देते हुये दो सप्ताह की घमासान लड़ाई के बाद बांग्ला देश की मुक्तवाहिनी और भारतीय सेना के समक्ष पाकिस्तानी सेना को आत्मसर्मपण करना पड़ा। बांगलादेश आजाद हुआ। शेख मुजीबुर्रहमान को पाकिस्तान से छुड़ा लिया गया। इनकी सम्मान सभा में श्रीमती गाँधी ने कहा–**"मैंने कहा था कि शरणार्थी अपने घर पुनः लौंटेंगे। हम मुक्तवाहिनी और बांग्लादेश की हर तरह से मदद करेगें। हमने शेख साहब को मुक्त कराने का भी वृत लिया था। ये तीनो ही वायदे पूरे कर दिये गये हैं।"**[21] 16 दिसम्बर 1971 को बांगलादेश का निर्माण भारत के प्रयास से सफल हुआ। शेख मुजीबुर्रहमान ने कहा **"भारत–बांगलादेश" एक असीम भाइचारे में बंध गये हैं, उनका कृतज्ञ राष्ट्र भारत की सहायता भुला नही सकेगा।"**

बांग्लादेश के आर्थिक पुर्ननिर्माण के लिये भारत ने 25 करोड़ रूपये मूल्य का माल और सेवायें प्रदान करने का वचन दिया। भारत ने बांग्लादेश को 50 लाख पौण्ड की विदेशी मुद्रा भी प्रदान किया। भारत बांग्लादेश के बीच 25 मार्च 1972 को एक व्यापार समझौता हुआ जिसके अनुसार सीमाओं के दोनों तरफ सोलह–सोलह किमी0 तक स्वतंत्र व्यापार की व्यवस्था थी। इसमें आयात–निर्यात और विनिमय सम्बंधी कोई नियंत्रण नही था। 19 मार्च 1972 को भारत–बांग्ला मैत्री सन्धि 25 वर्ष की थी। इस सन्धि के द्वारा दोनों देशों ने एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने, एक दूसरे की सीमाओं का आदर करने, एक दूसरे के विरूद्ध किसी अन्य देश की सहायता न करने, विश्व शान्ति और सुरक्षा को दृढ़ बनाने आदि का संकल्प किया। सन्धि में यह भी व्यवस्था की गयी कि यदि दोनों देशों में कोई मतभेद हो जाये तो आपसी बातचीत द्वारा हल करने की कोशिश करेगें। शेख मुजीबुर्रहमान के कार्यकाल में भारत–बांगलादेश सम्बंध मधुर रहे। समय के साथ–साथ बांग्लादेश अपना रूख

बदलता रहा वहां पर कट्टरवादियों की जमात सक्रिय होती जा रही है। लेकिन भारत बांग्लादेश के सामाजिक, आर्थिक, विकास में योगदान करके हमेशा उसकों मित्र बनाये रखना चाहता है जिसमें भारत का सामरिक हित छिपा है और बांग्लादेश इस मानस से पीड़ित है कि वह एक बड़े देश का छोटा पडोसी है, इसी मानस के कारण बांगला देश क्षेत्रातीत सम्बंधों पर बल देता है, जिससे क्षेत्र में महाशक्तियों को हस्तक्षेप करने का अवसर मिलता है। एक असंलग्न राष्ट्र होते हुए भी बंगला देश पश्चिम की ओर अधिक झुका हुआ है। चीन और अमेरिका से बांग्लादेश के सम्बंध मधुर हैं। बांग्लादेश की स्वतत्रता में भारत ने विशेष योग दिया था। फिर भी आज वे दूर के पड़ोसी लगते हैं। बांग्लादेशी शरणार्थी निरन्तर आते रहते हैं लेकिन भारत हर समस्या का समाधान द्विपक्षीय वार्ता से हल कर, बांग्लादेश को अपने प्रभाव क्षेत्र में रखने पर ही भारत का हित साधन हो सकता है।

श्रीलंका भारत के दक्षिण में स्थित एक छोटा सा द्वीप है जिसका क्षेत्रफल 25332 वर्ग मील है। सांस्कृतिक दृष्टि से श्रीलंका भारत के साथ जुड़ा हुआ है। यहां पर रहने वाले भारतीय तमिलनाडु के मूल निवासी हैं। श्रीलंका के अधिकांश निवासी बौद्धधर्मावलम्बी हैं। हिन्द महासागर में भारत के समीप होने के कारण सैनिक एवं सामरिक दृष्टि से श्रीलंका का भारत के लिये अत्यधिक महत्त्व है। श्रीलंका सरकार भारतीय मूल के तमिलवासियों को जो सैकड़ों वर्षों से श्रीलंका में रह रहे थे। उनको सभी अधिकारों से वंचित कर विदेशी करार दिया। जब इन लोगों ने अपने वाजिब हक मांगे तो इनको बड़े ही क्रूरतम तरीके से प्रताड़ित किया जाने लगा, जिससे भारत अपनी मानवीय और नैतिक जिम्मेदारियों को निभाने के लिये श्रीलंका सरकार से इस मुदद्‌ पर बातचीत किया लेकिन आंशिक सफलता के बाद पुनः श्रीलंकाई सरकार और वहां के मूलनिवासियों के कहर से त्रस्त आकर सभी तमिल मूलवासी इकट्‌ठा होकर विरोध शुरू कर दिया। भारत के प्रधानमंत्री स्व0 श्री राजीव गांधी एवं श्रीलंका के जयवर्धने के मध्य समझौता हुआ। ईलम पीपुल्स रिवोल्यूशनरीफण्ट के अधिकृत प्रवक्ता कन्नीस्वरन के अनुसार "सिर्फ समझौते पर दस्तखत होने भर से

समस्या हल हो जायेगी इसमें सन्देह है। [22] इसी तरह ईलम रिवोल्यूशनरी आर्गेनाइजेशन के बी0 बालाकुमार ने कहा "**हमसे कहा गया है कि भारत यह समझौता चाहता है और वह इस पर कायम रहेगा, लेकिन समझौता सिर्फ भारत और श्रीलंका के बीच हुआ है। हमारी इसमें कोई भागीदारी नही है।**"[23]

फिर भी इस समझौते को दोनों देशों के नेताओं के साहस और सूझबूझ का परिणाम कहना समीचीन है। समझौता भारत की कूटनीतिक सफलता है। इसने श्रीलंका का कम से कम राष्ट्रपति जयवर्धने का पाकिस्तान व पश्चिम की ओर झुकाव खत्म कर उन्हे भारतीय प्रभामण्डल में खींच लिया।[24] भारतीय शान्ति सेनायें श्रीलंका भेजी गईं। भारतीय सेना के चौथे और 54वें डिवीजन के पचास हजार जवान जाफना में फैल गये। शान्ति सेना का उद्देश्य तमिल मुक्ति चीतों के गढ़ जाफना को घेरकर उन्हे आत्मसमर्पण के लिये बाध्य करना था। मुक्त चीतों ने राजीव जयवर्धने समझौता स्वीकार नही किया। जाफना को मुक्त कराने में आयी तमाम मुश्किलों के बावजूद इस उपलब्धि को शान्ति सेना के एक अधिकारी ने 'एक वहीयात लड़ाई और वह भी दूसरों के लिये लड़ी गई लड़ाई बताया।[25] लगभग 1100 जवान और अधिकारी मारे गये और तीस हजार जवान घायल हो गये। श्रीलंका के सैनिक अपने ठिकानों पर आराम कर रहे थे और भारतीय सैनिक उनकी लड़ाई लड़ रहे थे।[26] श्रीलंका में अपनी सेनायें भेज कर भारत ने बहुत कड़ा कदम उठाया, एक तरह से यह जरूरी भी था। क्योंकि भारत पहल न करता तो भारत विरोधी ताकतें जयवर्धने की मदद के लिये तैयार बैठी थी। भारतीय सेनायें एक संरक्षक राज्य की विचारधारा के फलस्वरूप ही भेजी गयी थी। भारत ने हिम्मत करके शेर की सवारी का फैसला किया तो उसकी जोखिम भी गले लगानी होगी।[27]

भारत श्रीलंका में तमिलों के जातीय मसले का ऐसा शान्तिपूर्ण समाधान चाहता है जो उनकी सामान्य आकांक्षाओं के अनुरूप हो। साथ ही भारत श्रीलंका के साथ, विशेष रूप से वाणिज्यिक, आर्थिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक तकनीकी तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक स्तर पर द्विपक्षीय सम्बंधों को विकसित करना चाहता है। इसी

पृष्ठभूमि में भारत और श्रीलंका ने भारत–श्रीलंका संयुक्त उद्योगों की स्थापना के लिये श्रीलंका के विदेशमंत्री हेराल्ड हेरात के दौरे के दौरान जुलाई 1991 में एक करार पर हस्ताक्षर किये। व्यापार पूंजी–निवेश तथा वित्त और सांस्कृतिक, शैक्षिक और सामाजिक विषयों से सम्बंधित उप आयोगों की अक्टूबर 1991 में कोलम्बो में बैठकें हुई जिनमें विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग को और अधिक मजबूत बनाने के उपायों पर विचार विमर्श हुआ। दोनों देशों के बीच वर्ष 1992–94 तक के लिये सांस्कृतिक आदान–प्रदान के कार्यक्रम पर हस्ताक्षर किये गये। श्रीलंका में शरणार्थियों की सुरक्षा के बारें में और उनके पुर्नवास के लिये उपयुक्त प्रबंध करने के बारें में श्रीलंका सरकार से प्राप्त आश्वासनों के आधार पर शरणार्थियों की स्वेच्छा से वापसी की प्रक्रिया 20 जनवरी 1992 से शुरू हो गई। 21 जनवरी 1992 से 2 अक्टूबर 1992 तक 29000 से अधिक श्रीलंकाई शरणार्थी अपने देश वापस आ गये। अब तक कुल मिलाकर 36000 से अधिक शरणार्थी वापस जा चुके हैं।[28]

भारत ने श्रीलंका के समक्ष अपने इस विश्वास को दोहराया है कि श्रीलंका की एकता और अखण्डता बरकरार रखते हुये जातीय समस्या का बातचीत द्वारा स्थाई राजनीतिक समाधान किया जा सकता है। 1987 के भारत श्रीलंका करार के बाद श्रीलंका के संविधान में किये गये 18वें संशोधन से बनी राजनैतिक रूप रेखा अभी भी किसी प्रकार की ऐसी भावी बातचीत के लिये एक रचनात्मक आधार है।

भारतीय उप महाद्वीप में भारत के पड़ोसी देश नेपाल, भूटान, बांग्लादेश श्रीलंका, आदि सभी देश एक संरक्षक राज्य की विचारधारा के अन्तर्गत भारत से सम्बंध हैं। इनका संरक्षण करना भारत का नैतिक दायित्व है। किन्तु वर्तमान में भूटान के संरक्षण नैतिक दायित्व का निर्वहन की प्रक्रिया को भी विश्व तथा पड़ोसी देश संदेह की भावना से देखते हैं जो परिवर्तित मूल्यों का जीता जागता उदाहरण है। इस प्रकार हमारे पड़ोसी देश नेपाल भूटान, बांग्लादेश एवं श्रीलंका के प्रति भारत के अलग से नैतिक उत्तरदायित्व रहे हैं। भारत ने उनको भली–भांति निभाया है। यह भारतीय उच्च नैतिकता का परिचायक है। भारतीय सेनाओं ने बांग्लादेश उदय के

समय बांग्लादेश जाकर जिस मुक्ति युद्ध लड़ा और बांग्लादेश निर्माण करने के बाद वापसी करना दुनिया में नैतिकता की अव्यक्तीय मिशाल है। इसी प्रकार श्रीलंका की आंतरिक समस्या में सेनाओं को भेजकर जो त्याग भारत ने दिखाया वह भी हमारी सेनाओं का एक नैतिक एवं व्यावसायिक पक्ष की मजबूती स्पष्ट करता है। विश्व मंच पर तो हमारी सशस्त्र सेनाएं आज भी व्यावसायिक एवं नैतिक शक्ति का एक उदाहरण है। लेकिन इधर पिछले दस वर्षों से इसमें क्षरण हुआ है जिसके प्रति हमें सावधान रहने की आवश्यकता है।

भौतिकवादी दृष्टिकोण का प्रभाव-

मानव ने आधुनिक युग में अपने द्विज रूप में आत्मविस्मृत से उसने आधुनिकता का आरम्भ किया है। कालजय की मानवीय आकाँक्षा का दिग्विजय की आकाँक्षा में परिवर्तन होना एक ऐसा विपर्यय है जिससे अनात्म जिज्ञासा का आरम्भ होता है। 'मैं कौन हूँ' को अनुसुना करके अनात्म जिज्ञासा शुरू होती है तथा निरंकुश पराङमुख चेतना जिस सृष्टि की रचना करती है वह सर्वथा भौतिक जगत है। प्रकृति विजय, इतिहास विजय तथा दिग्विजय इस रचना के उददेश्य हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि यह नष्ट करने के उद्देश्य से की गई रचना है। मनुष्य का द्विजरूप चेतना की उस क्षमता का नाम है। जो द्वन्द्वात्मकता वहन करती है द्वंद उसे खण्डित नही करता। एक ओर वस्तुबोध की परिवेशवद्धता तथा दूसरी ओर आत्मातिक्रमण का भाव दोनों ही सत्य है किन्तु न परस्पर सापेक्ष है और न परस्पर विरोधी ध्रुव सत्यों के रूप में ही देखें जा सकते हैं। जिस चेतन के लिये यह विवृत्त सम्भव हो वही चेतना मनुष्य की द्विजता है। उसकी विस्मृति आधुनिकता (भौतिकता) का मूल है। विकासवाद , प्रगतिवाद, इतिहासवाद, विज्ञान तथा यांत्रिकी तथा औद्योगिक समाज व्यवस्था आधुनिकतावादी जीवन दृष्टि की आधार भित्तयां हैं। ये किसी सुव्यवस्थित प्रत्यय व्यवस्था के अंग की तरह आधुनिकता की परिभाषा और व्याख्या के घटक नही तथा शास्त्रों के रूप में भी एक दूसरे से पर्याप्त भिन्न हैं। किन्तु आधुनिकता की व्याख्या इनके बिना नही की जा सकती। सनातन परम्परा सृष्टि के रहस्य को अज्ञेय मानती आयी है। जिसका प्रमुख कारण यह है कि न मनुष्य स्वयं और न यह सृष्टि ही उसकी अपनी रचना है। इसलिए इसका सम्पूर्ण और निश्चयात्मक ज्ञान भी उसके लिए सम्भव नही। जो पूर्ण नही वह ज्ञान नही क्योंकि यह संदेहास्पद रहेगा। इसका खण्डन आधुनिक जीवन दृष्टि सर्वज्ञेयतावाद से करती है। यह वास्तविक रूप से खण्डन नही बल्कि अज्ञेयतावाद की सर्वज्ञेयतात्मक से प्रतिस्थापना है।

सर्वज्ञेयतावाद की सृष्टिकथा यह है कि मनुष्य विकास की निरंतर प्रक्रिया का परिणाम है। विकास के चरण गुणमूलक परिवर्तनों से निर्धारित होते हैं। और गुणमूलक परिवर्तन अथवा रूपान्तर संचित परिवर्तन का फल ऐसी कोई व्याख्या उपलब्ध नही जो बता सके कि एक रूप अपने से सर्वथा भिन्न किसी दूसरे में रूपान्तरित कैसे होता है। परिणाम स्वाभाविक है कि इस व्याख्या में ऐसे विलक्षण ऐतिहासिक अन्तराल मौजूद हैं। जिनका समाधान सम्भव नही है। विकास के प्रथम चरण में मानव तथा प्रकृति किसी परमशक्ति के विस्तार और संकोच का फल थे। दूसरे चरण में विश्व किसी सतत रूपांतर प्रक्रिया का परिणाम था किन्तु मानव को उसका अधूरा ही ज्ञान था। अतः वह उसका दास था। तीसरी स्थिति वह समकालीन तथा भावी अवस्था है जिसमें मनुष्य विकास प्रक्रिया का स्वामी होगा। यही आधुनिक समकालीन चिंतन का महावाक्य है जो अपने आप में महामोह एवं भयंकर शब्द जाल मात्र है। क्योंकि स्वयं इस तर्क के अर्थानुसार यह विकास प्रक्रिया का अंत है। इसके बाद फिर से सृष्टि प्रक्रिया का आरंभ होगा और मानव उसका विधाता होगा। जिस आरंभवादी सृष्टि कथा के निषेध में रूपांतर की सतत प्रक्रिया की स्थापना की गई थी यह पुनः उसी की स्थापना और रूपांतर का निषेध है। मनुष्य की अधीनता और नियंत्रण में होने वाला विकास प्रगति है। प्रकृति की निर्भरता से मुक्ति के लिये विज्ञान तथा इस मुक्ति का लाभ उठाने के लिये प्रौद्योगिकी का विस्तार और विकास ही इसके अनुसार आधुनिक युग की सृष्टि कथा है। सर्वज्ञेयवाद की जिज्ञासा का विषय अनात्म है अतः ज्ञाता स्वयं कभी ज्ञान का विषय नही बनता और सृष्टि कथा और विश्व दृष्टि के सहारे के बिना जी सकने की क्षमता को वयस्कता का लक्षण मान लिया जाता है। प्रगति पर आधारित सृष्टि कथा का स्वरूप यह है कि समग्रता या निरपेक्ष सत्य की तलाश व्यर्थ भ्रम है। औद्योगिकी और यांत्रिकी का विकास ही युग धर्म है और औद्योगिकीकरण द्वारा देश को समृद्धतर बनाने का प्रयत्न इस कथा का नैतिक आधार और सबल राजनीतिक नीव है। यह वास्तव में अल्प संख्यकों की प्रभुता का महामंत्र है इसका सीधा तात्पर्य यह है कि औद्योगिकीकरण की दिशा में निरंतर संक्राति की आधुनिकता ही निज धर्म होगा। मानवोचित जीवन की दिशा में

हर एक के समक्ष बस यही एक उपाय है। आधुनिकीकरण अर्थात पाश्चात्यमाडल पर यांत्रिकी सम्मत जीवन प्रणाली अपनाना, संक्राति की प्रक्रिया में जीवन मूल्यों के नाम पर जो शेष रहेगा वह कुल इन्ही दो विकल्पों में समा जायेगा। सभ्यतायें भ्रांति से चरम सत्य नही कब भ्रांति से नियंत्रित शंका तथा व्यंग तक पहुंचेगी। समग्र दृष्टिकोण न होगा।

आधुनिकतावाद के अनुसार सर्वज्ञेयता के लिये मनुष्य को विकास द्वारा प्राप्त सारी शक्तियाँ ऐतिहासिक अर्जितज्ञान विचारों के इतिहास की माध्यमता की तर्कशक्ति, कल्पना शक्ति और ऐन्द्रिय संवेदन मात्र की आवश्यकता है। शक्ति का औचित्य मानव कल्याण की कामना से ही सिद्ध हो सकता है। किन्तु मानव की यही एक मात्र परिभाषा उपलब्ध हो कि वह सृष्टि विजेता, इतिहास नियंता और प्रकृति विजेता है और ज्ञान इसी लक्ष्य को उदिष्ट है। तो ज्ञान की स्वयं साध्यता का अर्थ भी इस ज्ञान पद्धति में ज्ञान एक शक्ति है और सर्वज्ञता का अर्थ है जिसके पास ज्ञान है वह शक्तिमान है प्रौद्योगिकी और विज्ञान की शक्ति अज्ञात का रूपांतर ज्ञात में इस तरह करती है कि उस पर ऐसी प्रभुता पा सके कि उसका अपने से सर्वथा भिन्न में रूपांतर किया जा सके असत् से सत् की उत्पत्ति की कल्पना का स्वरूप कोई नही पर वही व्यवहार बन चुकी है। इस बिडम्बना का स्वाभाविक परिणाम और विस्तार ही विनाश है।

मानव के जीवन पर ज्ञान के प्रति इस दृष्टिकोण का परिणाम यह होगा कि कोई कोना अंधकारमय न होने के कारण मानव जीवन सर्वथा अमिधावादी हो जायेगा और जो कोने अंधकारमय होंगे उनके अस्तित्व को ही नकार दिया जायेगा। मनुष्य अधिकाधिक निढ़ाल होता जायेगा क्योकि प्रत्येक सर्वशक्तिमान नही हो सकता, कुछ ही हो सकते हैं। अतः शेष शक्तियों का बड़ा हिस्सा निढ़ाल हो जाता है। अर्धभ्रामिकता का निराकरण होता है। ज्ञान एक शक्ति है ज्ञानवान शक्तिमान है शक्ति प्रकृति विजय तथा दिग्विजय के लिये है विजेता शक्ति का उपयोग शोषण के लिये करता है इसलिए समानता का कोई वास्तविक आधार नही बचता। इतिहास के

स्वामित्व की इच्छा का अर्थ इतिहास को मिटा देने का प्रयत्न है। इसलिये दुःख या निराशा य विषाद की कोई वास्तविक संवेदना आधुनिक चेतना में नही है। आधुनिकवादी स्वयं को इतिहास का सर्वश्रेष्ठ निष्कर्ष मानकर चल रहें हैं। जिस तर्क की चरम परिणत पूरे संसार के विनाश की संभावना तक आ पहुँची है। उसके विकल्पों पर विचार स्वाभाविक है। उपनिवेशवाद की औपचारिक समाप्ति तथा एशिया, अफीका के राजनैतिक स्वत्व की स्थापना के बाद साम्राज्यवाद का स्थान आधुनिकीकरणवाद नें ले लिया हैं पूर्ण औद्योगिकरण सम्भव न होते हुये भी वही इस युग का धर्म तकनीकी औद्योगिक युग को पार कर के उत्तर औद्योगिक में प्रवेश करने के बाद एक सर्वथा नई संस्कृति की आवश्यकता है।

मनुष्य की जिज्ञासु प्रवृत्ति ने प्रारम्भ से ही उसे प्रश्न पूंछने और उत्तर प्राप्त करने में संलग्न रखा है। प्रकृति में जो कुछ होता जा रहा है, मनुष्य उसे सदा ध्यान से देखता रहा है। और जो कुछ उपयोगी हो सकता था। उसका धीरे–धीरे उपयोग करना वह सीखता रहा है। इस उपयोग में लगातार सुधार भी करता रहा है। उत्तर प्राप्त करने की प्रक्रिया में जीवन पर्यन्त संलग्न रहना मनुष्य की नियति है। सभ्यता के विकास में यह सतत प्रक्रिया रही है और रहेगी । इसी में लगातार नये प्रश्न उभरते हैं। नये विकल्प सामने आते रहते हैं और प्रक्रिया की प्रगाढ़ता बढ़ती जाती है।

मध्यकाल के बाद यह गति तथा इसकी व्यावहारिक उपयोगिता और बढ़ी। जहां कुछ लोगों ने 'वाष्प इंजन' को आधुनिकता का प्रारम्भ बताया तो औरों ने घड़ी को आधुनिकता का प्रतीक बताया। लेकिन क्रमशः पराक्रम युग, बारूद का आविष्कार, भाप शक्ति का प्रयोग, तेलशक्ति के बाद से नवीनतम टेक्नोलाजी, विमान, युद्धपोत, प्रक्षेपास्त्र, अणु, परमाणु, हाइड्रोजन आदि शक्तियों का विकास हुआ। जिससे सम्पूर्ण विश्व के जनमानस में एक नई क्रान्ति आ गई। इस समय ने मानव सम्वेदना के ऊपर वरीयता पाई। जिसने समय को उपलब्धियों, आर्थिक प्रयत्नों, संस्कृति तथा व्यवस्था से जोड़ दिया वह समय के साथ चलते रहे। जिन्होने समय के प्रबंधन पर

ध्यान न दिया वह पीछे रह गये। विज्ञान ने समय को महत्त्वपूर्ण बनाया, कम समय में अधिक प्राप्त करने की विधियां बताई। यह उपलब्धियां भौतिकता की ओर झुकती गई, परिणामस्वरूप आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा परम्परागत मानव संवेदनायें प्रभावित होती गई और समाज पर लगातार इसका प्रभाव बढ़ता गया। गति की तीव्रता धीरे–धीरे दौड़ में बदल गई और आज हम इसी दौर से गुजर रहे हैं। विज्ञान का विकास और उससे सम्बंधित ज्ञान का प्रसार जिस तेजी से हुआ है उसका प्रभाव विश्व के हर व्यक्ति पर और हर कोने तक पहुँचा है। सम्भवतः मानव इतिहास में इतनी तेजी से परिवर्तन पहले कभी नही हुये जितनी 20वीं शदी में हुये हैं। दुनिया ने इसी शदी में और एक छोटी सी ही अवधि में दो–दो महायुद्ध देखे हैं और उनसे जुड़ी तबाहियों, भीषण नरसंहारों का अंतहीन सिलसिला देखा है। पर आदमी के अंदर छिपे 'पशु' ने इससे कोई सबक नही सीखा। यह वजह है कि आज भी सारी दुनिया में आयुधों के जमा करने की होड़ लगी है। छोटे देश भी अपनी सुरक्षा के नाम पर दुनिया की बड़ी ताकतों से हथियार खरीदते जा रहें हैं। न जाने दुनिया को कहां ले जायेंगे यह हैवानियत की अंधी दौड़, कुछ नासमझ लोग इस महाविनाश का श्रेय वैज्ञानिकों को देते हैं। यह सच है कि खोजें वैज्ञानिकों द्वारा की जाती है पर उनके उपयोग अथवा दुरुपयोग की चाभियां सत्ता के संचालकों के हांथों में होती है और उन्ही के इशारों पर आदमी ने आदमी को ही घास–फूस की तरह कुचला है और अपनी ही नस्लों को भूनकर रख दिया परिस्थितियों के आगे मजबूर होने के बावजूद भी विज्ञानियों ने अपना दायित्व समझा है और सत्ता–पिपासुओं को आयुधों के खतरों से आगाह किया है। खास कर दूसरे महायुद्ध के बाद कई चोटी के वैज्ञानिकों ने अपना अधिकांश समय शान्ति की स्थापना के लिये जनमानस में एक रूझान और वातावरण बनाने में दिया।

अमेरिकी राष्ट्रपति ने नाजियों के दमन को रोकने के लिये तत्काल कदम उठाया क्योकि उनकी दृष्टि से जर्मनी सरकार के प्रतिनिधियों की आंखे खोल देने के लिये अणुशक्ति का प्रदर्शन आवश्यक हो गया था। 16 जुलाई 1945 को राबर्ट ओपन

हाइमर ने प्रथम परमाणु बम का सफल परीक्षण किया और ठीक 22 दिन बाद जापानी शहर हिरोशिमा पर 6 अगस्त को परमाणु बम डालकर उसे तहस–नहस कर दिया और फिर 9 अगस्त को दूसरे जापानी शहर नागासाकी पर बम प्रहार करके अमेरिका ने विनाशलीला का वीभत्स और मर्मान्तक प्रदर्शन किया कि सारी दुनिया भय से कांप उठी। फिर भी राजनीतिज्ञों की आंखे नही खुली और शनैःशनैः परमाणु आयुधों का भण्डारण तीव्रगति से होने लगा। परमाणु आयुध रखने वाले घोषित पांच देशों के पास 1997 के अंत तक 36000 परमाणु बम थे। जिनमें अमेरिका के पास 12000 रूस के पास 23000 बिट्रेन के पास 260, फ्रांस के पास 450 और चीन के पास 400 परमाणु बम थे।[29]

भारत तथा पाकिस्तान के पास अघोषित परमाणु बम हैं। उत्तर कोरिया तथा ईरान भी परमाणु बम तक पहुंच चुके हैं। जिन्हे या तो लड़ाकू विमानों या लम्बी व मध्यम दूरी के प्रक्षेपास्त्रों या पनडुब्बी आधारित प्रक्षेपास्त्र से छोड़ा जा सकता है। स्टार्ट–सन्धि के लागू हो जाने और उनका अनुपालन करने के बावजूद रूस और अमेरिका के पास 7000 परमाणु बम बचे रह जायेगें और उनके द्वारा धरती का हजारों बार विध्वंस किया जा सकता है।[30] परमाणुओं की विध्वंसक शक्ति के अतिरिक्त इनके विभिन्न प्रकार के शांतिपूर्ण उपयोग भी हैं। परमाणुओं का पास तोड़ कर विद्युत जनन ऐसी ही तकनीक है, नाभिकीय औषधियाँ, नई–नई फसल प्रजातियों का विकास, चिकित्सा युक्तियाँ, कृषि संधान आदि विभिन्न क्षेत्र हैं। जहाँ नाभिकीय विज्ञान का उपयोग किया जा सकता है। भारत ऐसा ही करने का प्रयास कर रहा है। भारत आरंभ से ही युद्ध विरोधी और परमाणु शक्ति के शान्तिपूर्ण संसाधनों का पक्षधर रहा है। संयुक्त राष्ट्र महासभा के दूसरे अधिवेशन जून 1982 में हिरोशिमा और नागासाकी के महापौरों ने दुनियाँ के नाम अपीलें जारी की थी। हिरोशिमा इतिहास का एक गवाह ही नही है हिरोशिमा मनुष्य जाति के लिये एक चिरंतर चेतावनी है। हिरोशिमा को भूलने का अर्थ होगा उसी भूल को दोहराना और मानव–इतिहास की इतिश्री।[31]

चार सौ साल के इतिहास वाली बस्ती नागासाकी एक सुन्दर और मोहक शहर था। रात में नागासाकी के बन्दरगाह के आस–पास पहाड़ियाँ असंख्य बत्तियों से जगमगाने लगती थी। इसलिये इसे 'जापान का नेपल्स' कहा जाता था। यहां देजिया जैसे स्थान ऐतिहासिक अन्तर्राष्ट्रीय मेल मिलाप के प्रतीक हैं। तो कुगावायुग (1603–1868) में एक टापू था, जो एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र बना। जापान में ईसाइयत की सबसे गहरी जड़े नागासाकी में हैं। औउरा कैथलिक गिरजाघर 1557 में शहीद हुये 25 संतो की यादगार है और ऐसे अनेक पावन स्थल नागासाकी में थे। 9 अगस्त 1945 को नागासाकी में अणु बम गिराया गया (बम का नाम फैटमैन था) गिरजाघर के पास जमीन से 500 मीटर ऊपर उसका विस्फोट हुआ उससे निकली ताप किरणों से पत्थर पिघल गये, फौलादी कंकरीट चूरा–चूरा हो गया और सबसे खतरनाक बात हुई आणविक विकिरण। बम ने 74000 लोंगो की जान ले ली और 75000 लोंगो को जख्मी कर दिया। यह नागसाकी नगर की दो तिहाई आबादी थी। मनुष्य ही नही पेड़–पौधे और पशु–पक्षी भी काल के हवाले हो गये। नागासाकी एक मृत्यु नगर बन गया। चारों तरफ निर्जीव शरीर के अम्बार लग गये–मलबे और धुंधुआती आग के बीच, युद्ध को साधारण हत्या के समकक्ष नही माना जायेगा। लेकिन इन दोनों ही में कोई तात्विक अन्तर नही है। ये दोनों ही मानवीय जीवन की गरिमा को भंग करते हैं। हमारे दैनिक जीवन में फिजूल असाध्य और खतरनाक हथियारों पर अपार धन बहाया जा रहा है, जबकि दुनिया का अर्थतंत्र डावाडोल है। करोड़ों लोग भूंख से मर रहे हैं उन्हे न चिकित्सा नसीब होगी न शिक्षा। जब अफ्रीकी मरूभूमि में दम तोड़ते बच्चों की तस्वीरों का मिलान अत्याधुनिक चमकदार मिशाइलों से करते हैं तो बरबस लगता है कि दुनिया बौरा गई है। अकेले एक मिसाइल के खर्चे से कितने सारे बच्चों की जान बचाई जा सकती है। भौतिकता की अन्धी दौड़ में नैतिकता अदृष्य होती जा रही है। 1950 के बाद विज्ञान जनित तकनीकी में कई क्रान्तिकारी परिवर्तन किया है। डी0एन0ए0 परमाणु के निर्माण और उपयोग की विधि जिसने वायोटेक्नोलॉजी को अभूतपूर्व क्षेत्र प्रदान किया और नये–नये औद्योगिक पदार्थों की उपलब्धता आदि से विश्व के देश कृषि प्रधानता से औद्योगिक आधार की

ओर तथा औद्योगिक आधार से स्वचालन संचार तकनीकी के आधार की ओर बढ़ रहे हैं धन और समृद्धता की, ज्ञान और कौशल पर निर्भरता लगातार बढ़ रही है। विकसित देशों में आज से अधिक सृजनात्मक और नवाचार पहले कभी नही हुआ। वह दुनियाँ में नये सामान और सेवायें लगातार पहुँचा रहे हैं जिसका आधार उनकी मस्तिष्क शक्ति और सृजनात्मकता है। आर्थिक सम्पन्नता, बौद्धिक सम्पत्ति के उपयोग, कलाओं के सिद्धान्तों, विज्ञान और तकनीकी के उपयोग के साथ–साथ अत्यन्त विकसित और लगातार विकासशील कार्य दलों के द्वारा प्राप्त की जा रही है।[32]

मानवीय समाज में जब भी नये और बड़े मोड़ आये हैं। उनका आधार नवार्जित ज्ञान नये आविष्कार और उपयोग ही रहा है। यहीं समस्या है और यहीं पर समाधान की संभावना है। इस स्थिति पर व्यक्ति के विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता सामने आती है। वह व्यक्ति ही है, जो सृजनकर्ता है। समाज की परम्पराओं और साधनों को संवारता है। कई बार यही व्यक्ति जब उसका पूर्ण विकास नही होता उसकी मानवीय मूल्यों के प्रति संवेदनायें विकसित नही होती तो वह साधनों और ज्ञान का दुरूपयोग करता है। ऐसे देश जहां गरीबी, अशिक्षा और अज्ञान है। आज भी सबसे बड़ी समस्या बनकर समाज और व्यवस्था के समाने खड़ी है। इसके समाधान में विज्ञान ही जो भूंख, गरीबी, गंदगी, निरक्षरता, अंधविस्वास, अनुपयोगी परम्पराओं आदि को रोंक सकता है और मानव जीवन की गुणवत्ता के ह्रास की दिशा बदल सकता है। सत्य की लगातार खोज करते रहना ही विज्ञान है। इसका सम्बंध अध्यात्म से है। मनुष्य की प्रवृत्ति से उसके चिन्तन की क्षमता को दिशा देने से है। मनुष्य लगातार विज्ञान द्वारा ज्ञान प्रप्त करने का प्रयत्न करता रहेगा और प्रकृति को समझने का प्रयत्न करता रहेगा। इस सम्बंध को तर्कसंगत और व्यवहारिक बनाने में विज्ञान एवं तकनीकी स्वयं उसकी सहायता करेंगे। जिस समाज में ऐसा नही हो रहा है वे पर्यावरण के दुरूपयोग, प्रदूषण जनसंख्या वृद्धि तथा स्रोतों व साधनों की कमी के दलदल में लगातार फंसते जा रहे हैं। हमारा देश भी उनसे

अलग नही है। जो स्थिति सामने दिखाई देती है उसमें अत्यन्त आवश्यक होगा कि मानवीय दृष्टिकोण में परिवर्तन लाये जाये।[33] वैज्ञानिक दृष्टिकोण 'साइंटिफिक टेम्पर' के सार्वभौमिक विकास की परिकल्पना भारतीय परिवेश में गई है, जो आंतरिक समस्यायें सामाजिक परिदृष्य में उभरी है इनका समाधान ही विज्ञान आधारित समझ तथा सोंच से हो सकता है। जो चिन्तन के आधार पर बढ़ता और पलटता है वह कितनी ही प्रभाविक मानवीय समस्याओं का समाधान कर सकता है।[34]

आधुनिकता मुख्यरूप से विज्ञान की उपज या देन है। जहां एक ओर विज्ञान तथा तकनीकी के उपयोगी प्रभाव आधुनिकता के विकास तथा स्वरूप लेने में सहायक रहे हैं दूसरी ओर इनकी अनुपयोगी या विनाशकारी संभावनाओं ने भी गहन रूप से सम–सामयिक परिदृश्य को प्रभावित किया है। आधुनिक विज्ञान तथा उससे जुड़े तकनीकी ने समाज के हर ताने बाने को प्रभावित किया है। राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक सुरक्षा संचार या जीवन का निश्चय ही मानव प्रकृति सन्तुष्ट होकर बैठ जाने की नही है। नई आवश्यकताएं सामने आ रही है। नये प्रयत्न जारी है। यहीं पर साथ–साथ समानता, समरूपता, सामजिक व्यवस्था में बराबरी तथा जीवन में गुणवत्ता का समान अधिकार और उससे जुड़ी हुई समझ और सोंच का स्वरूप भी निर्मित हुआ है। उसका परिमार्जन तथा परिवर्तन भी हुआ है। परंपरागत सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्य पीछे जा रहे हैं नये मूल्य उनका स्थान ले रहे हैं। सर्वपरिचित उदाहरण है जन्मदर पर नियंत्रण का, कुछ दशक पहले किसी भी समाज की मान्यतायें इसे उचित नही ठहराती थीं। बदले हुये परिवेश में यह आवश्यक हो गया है। मानव जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने में यह सबसे अधिक आवश्यक माना जा रहा है। इसके लिये साधन तथा तकनीकी का विकास एक बार फिर विज्ञान तथा वैज्ञानिकों के हवाले किया गया है। देश की आर्थिक तथा समाजिक अवस्था शिक्षा की स्थिति से प्रकट होती है। वह शिक्षा ही है जो सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों की दिशा सवांरती है। इन्ही तंत्वों की गतिशीलता शिक्षण व्यवस्था का चरित्र निर्धारण करती है।[35] मनुष्य को जिस पर्यावरण के साथ रहना है उसको वह प्रारम्भ से देखता है

समझने का प्रयत्न करता है तथा उसमें हो रहे परिवर्तनों में या तो योगदान करता है, या रोकने का प्रयत्न करता है।[36] विकसित देशों में लोंगो को ऐसा जीवन स्तर दिया है जो पहले एक बहुत छोटे वर्ग तक सीमित रहता था; इसने न केवल मानव के भौतिक पर्यावरण को बदल दिया है वरन उसे चिंतन के नये आयाम तथा विस्तार प्रदान किये है उसके मानसिक क्षितिज वृहद विशालता दी है मानव मूल्यों को प्रभावित किया है तथा मानव सभ्यता को नया जोश तथा गति प्रदान की है। आज समाज के सामने आवश्यकताऐं अनेक प्रकार की है और विविध क्षेत्रों तक फैली हुई हैं। जहां एक ओर गरीबी की समस्या है वहीं दूसरी तरफ मूल्यों की शिक्षा और सामाजिक सम्बंधों की बात भी सामने आती है। गरीब और अमीर वर्ग का बढ़ता हुआ भेद कितना ही अमान्य सामाजिक परिस्थितियों को जन्म देती हैं। इनका सम्बंध समाज के सभी वर्गों से है। आज प्रत्येक परिवार अधिक से अधिक भौतिक उपलब्धियों सुख सुविधा के साधनों को इकट्ठा करना चाहता है। साधारण मध्यम वर्ग के सामने एक तरफ समस्या है अपने बच्चों को अच्छी शिक्षा देने की उन स्कूलों में ले जाने की जहां की शिक्षा इन बच्चों के भविष्य को किसी सीमा तक सुरक्षित करती है। इसके लिये उसकी आय के स्रोत पर्याप्त नही होता है। दूसरी तरफ उन्हे वह आवश्यकताएं भी पूरी करनी हैं जिनका सम्बंध विज्ञान की उपलब्धियों के सार्वजनीकरण से है जैसे रंगीन टी0वी0, बी0सी0आर0, कपड़े धोने की मशीन, ए0सी0, फ्रिज, गाड़ी आदि। इन दोनों प्रकार की पूर्ति के प्रयत्न में व्यक्ति की अपनी मान्यताओं और मूल्यों पर लगातार बोझ बढ़ता जाता है और कई बार मान्यतायें और मूल्य टूट जाते हैं। भारतीय सेना के जवान भी इसी समाज से निकल कर आते हैं। अतः इन सभी समस्याओं से उनको भी जूझना पड़ता है जिससे उनके मन में असंतोष की लहर व्याप्त हो जाती है और उस पर सैन्य अधिकारियों का अनुचित दबाव सैनिकों में एक तनाव उत्पन्न कर देता है जिससे वे मनोरोगी होकर अंततः वागी तेवर में आकर अपने अधिकारियों, साथियों तथा स्वयं तक को गोली मार लेते हैं। अतः इसके समाधान के लिये समाजिक और सामूहिक चिन्तन के द्वारा एक जीवन विधा का प्रयत्न किया जाना चाहिए। उन्हे सबसे अधिक ध्यान इस ओर देना

होगा कि अब परिवर्तन सैकड़ों वर्षों की दूरी पर न होकर समय में सिमट गये हैं। परिवर्तन की तीव्रता, खोज की तीव्रता तथा ज्ञान के भण्डार का विस्फोट इनसे तो सतर्कता और आँख खोलकर ही मिला जा सकता है।

सामाजिक परिवर्तन के लिये मुख्यरूप से उत्तरदायित्व तत्व ज्ञान का विस्फोट स्वयं विज्ञान तथा तकनीकी के विकास से सीधा जुड़ता है। समाज के सामने परिवर्तन की परिस्थितियाँ लगातार चुनौती बनकर आती रहती हैं जो समाज बौद्धिक तथा सामाजिक सांस्कृतिक रूप से विकसित तथा परिपक्व होता है उसमे इस चुनौती को स्वीकार करने, परिवर्तित करने या अस्वीकृत करने का साहस या समझ होती है। यही समाज इस प्रक्रिया से बिना किसी उथल–पुथल के गुजरते रहते हैं। जो स्वयं को तैयार नही कर पाते हैं वहां चुनौतियों को विकृत रूप से समझा या अपनाया जाता है। परिणामस्वरूप सामाजिक परिवर्तन को उपर्युक्त ढंग से न अपना पाता है न उसका उपयोग कर पाता है। यह कई प्रकार समाज में विवाद, भेद, दुर्भावना उत्पन्न कर सकते हैं जो देश और समाज इस परिवर्तन की प्रक्रिया को सही ढंग से अपना पाये उन्हे इसके परिणाम कितने ही रूपों में मिलते हैं। जीविकोर्पाजन के लिये श्रम उतना कष्टकारी नही रहा, औसत आयु बढ़ी है बीमारियों पर नियंत्रण, जीवन यापन, सुखकर तथा आनन्द और मनोरंजन पूर्ण बना है। कुल मिलाकर एक स्वस्थ्य खुशहाल और सुविधाजनक जीवन पद्धति विकसित हुयी है।[37] स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में वह पीड़ा मौजूद थी जिसके साथ देश के लिये त्याग तथा बलिदान का इतिहास था। जनता का इन पर पूर्ण विश्वास था। लोंगो में निःस्वार्थ कार्य करने की आस्था थी। आजादी से केवल विदेशियों को बाहर कर पाने की लालसा न थी। प्रत्येक देशवासी के लिये क्या कुछ नही करना था। जो प्रक्रिया आरम्भ हुई उससे लाभ भी हुये परिणाम हर क्षेत्र में दृष्टिगोचर हुये परन्तु यह कुछ तक सीमित होकर रह गये। लोगों के बीच अन्तर बढ़े हैं जबकि अपेक्षा थी कि उसका ठीक उल्टा होगा। शहर और गांव की बात ही लें अन्तर लगातार बढ़ा है। ग्रामीण नवयुवक शहर की ओर भागता है। चकाचौंध से प्रभावित होकर आशाओं का भार लेकर जब सत्य से उसका सामना

होता है तो निराशा और अन्धकार ही उसे दिखाई देते हैं। शहरों में भौतिक विकास और सुख सुविधा की सत्त दौड़ ने लोंगो को मूल्यों और मान्यताओं से विमुख कर दिया है। समाज में विकृतियों को पनपाने में लगातार मदद कर रहा है। गरीबी रेखा के नीचे के लोंगो की संख्या बढ़ी है एक उदाहरण–टेलीविजन जैसा सशक्त माध्यम आज शिक्षा के लिये कितना कर रहा है, संस्कृति मानव मूल्य स्वदेशी यह सब कितना पोषण उससे प्राप्त कर रहे हैं। नवयुवक और युवतियों को यह माध्यम अपनी प्रतिभा के विकास में कितनी सहायता कर रहा हैं। संभवतः योजानायें बनाते समय यह समझना आवश्यक नही समझा कि इनका प्रभाव विषमतायें पैदा करेगा, कुछ लोंगो के लिये उपयोगी होगा पर अधिकांश पीछे ही छूटते जायेगें। विषमतायें बढ़ रही हैं और व्यवस्था पर से विस्वास कम होता जा रहा है।

भौतिकवादी दृष्टिकोण के विकास एवं प्रभाव से आज सेना भी प्रभावित हुई है। कोई समय था जब सेना घर के बाहर दूर–दराज के क्षेत्रों में रहती थी। इसका एक अपना परिवेश होता था। शहर एवं सिविल से कोई सम्बंध नही होता था। केवल अपनी व्यावसायिक एवं नैतिक दक्षता में लीन रहते थे। आज दुनिया सिमट कर एक गांव बन चुकी है। संचार क्रांति ने हर जगह को एक दूसरे से जोड़ दिया है। आज टी0वी0, मोबाइल, वी0सी0डी0, कपड़ा धोने की मशीन, ए0सी0, फ्रिज, गाड़ी सभी की आवश्यकता सी बन गयी है। सैनिकों पर भी इसका दबाव बढ़ा है। संसाधनों के अभाव में इन्हे हासिल करने हेतु नैतिकता का क्षरण शुरू होता है। साथ ही ऊपर से मनोरोगी बना देता है। फलतः उनमें विद्रोह की भावना पैदा हो जाती है। परिणामस्वरूप आत्महत्या एवं हत्यायें प्रारम्भ होंगी ही, जो थमने का नाम नही ले रही हैं। हांलाकि सेना में इसके अध्ययन के सभी प्रयास जारी हैं। पर भौतिकवादी दृष्टिकोण के प्रभाव सैनिक तंत्र को झकझोर कर रख दिया है।

संयुक्त परिवार व्यवस्था का विखराव-

मानव समाज में ही नही अरण्यकाल में भी जंगली जानवरों के परिवार होते थे। आज भी नेशनल ज्योग्राफिक नामक चैनल में प्रायः सभी जानवरों के परिवार की पहचान की जा सकती है। कई बार तो उन परिवारों के कुनबे भी साथ–साथ भोजन के लिये भटकते देखे जाते हैं या फिर शिकार करते हैं बंदरों के झुण्ड शहरों तक में रहते हैं इनमें परिवार के साथ–साथ घूमने फिरने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है। जहां तक मानव समाज का सवाल है परिवार सबसे प्राचीन संस्थान हैं। समाज की यह आधारभूत इकाई है और सर्वश्रेष्ठ हैं। आज इस पर वैश्विक स्तर पर बहस चल रही है। कारण यह है कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक धरातल पर अच्छा–बुरा जो भी घटित हो रहा है उसकी जड़े परिवार में हैं। आज यह परिवार पश्चिम में तो टूटते नजर आ रहे हैं। अनेक अन्य देशों में चरमरा रहे हैं। भारत में भी विशेष रूप से नगरों एवं महानगरों में किसी न किसी दबाव या तनाव में बढ़ती हुई संख्या में तलाक हो रहे हैं। उससे भी ज्यादा बढ़ती हुई संख्या में अदालतों में तलाक के मामले लम्बित पड़े हैं। असल में पश्चिम में विशेष रूप से अमेरिका में दो संस्थायें शक्तिशाली है। एक तो सरकार दूसरे तरह–तरह के समुदाय आर्थिक संगठन और संस्थान समाज और सरकार के बीच परिवार करीब–करीब अस्तित्वहीन होते जा रहे हैं। यौन विस्फोट और पारिवारिक मूल्यों के दुर्भिक्ष में विवाहेत्तर सम्बंधों से बच्चों का जन्म हो रहा है। शायद ही बीस प्रतिशत टिकाऊ परिवार हो जहां बच्चों को माता–पिता दोनों का साथ मिलता हो। वरना सिंगल पेरेंट के साथ उन्हे रहना पड़ता हैं। इसी साल ब्रिटेन की कंजरवेटिव पार्टी के प्रधान डंकन स्मिथ को ब्रिटिश सरकार की सामाजिक सुरक्षा की नीतियों का अध्ययन करने का निर्देश दिया था। पिता विहीन या माता विहीन हो गये परिवारों को ब्रिटिश सरकार गुजारे लायक सहायता देती है। सरकार पर उसका बोझ बीस विलियन पाउण्ड आता है। यह रकम भारत सरकार की आमदनी का पांचवा भाग अर्थात 90 हजार करोड़ रूपये प्रतिवर्ष पड़ती है।

डॅंकन का एक निष्कर्ष है कि विवाह संस्थान से पैदा हुये बच्चे अपनी पांचवीं वर्षगांठ मनाये उसके पहले ही उनका तलाक हो जाता है। नौजवान लोग शादी के बिना साथ रहने लग गये हैं। ऐसे माता–पिता में से किसी एक के साथ रहने वाले बच्चों के बारे में डॅंकन का निष्कर्ष है कि उनमें से 70 प्रतिशत नशीली दवाओं के अभ्यस्त हो जाते हैं। 50 प्रतिशत से ज्यादा शराब पीने लगते हैं। 40 प्रतिशत कर्ज में डूब जाते हैं और 35 प्रतिशत से ज्यादा बेरोजगार होते हैं। परम्परागत परिवारिक मूल्य और टिकाऊ अर्थव्यवस्था में सीधा सम्बंध है। परम्परागत पारिवारिक मूल्यों के आधार पर ही शताब्दियों तक चलती रही है। ऐसा समाज विश्व भर में किसी न किसी रूप में था। मगर आज यह पश्चिम में खत्म हो रहा है। इसके मूल्य में पश्चिम का अतिरेकी व्यक्तिगत अधिकार आधारित जीवन है। इसे हम आधुनिकता कह कर गौरवान्वित करते हैं। व्यक्तिवाद और व्यक्ति केन्द्रित चिन्तन पर आधारित कानून और अन्य व्यवस्थाओं पर जोर दिया जा रहा है। वह स्वच्छंदता का एक वातावरण पैदा करता है। यह मेरा जीवन है मैं इसे चाहे जैसे जिऊं। मानवाधिकारों का भी इसी पृष्ठभूमि में विश्लेषण किया जाता है। व्यक्ति को बेलगाम स्वतंत्रताओ ने परिवार पर ग्रहण लगा दिया है। परिवार आज पश्चिम में इसलिए टूटे हैं और पश्चिम की भौतिकतावादी चकाचौंध विज्ञान और तकनीकी की लम्बी उंची छलांगो ने पूरी मानवता को चौंधिया दिया है।

पश्चिम का मॉडल आदर्श मॉडल बन गया है। सभी वैसी ही जीवन शैली के पीछे दौड़ रहें हैं। वैश्वीकरण की झंझावती आवेग ने भारत जैसे प्राचीन परम्परागत सभ्यता संस्कृति के देश को भी हिलाना चालू कर दिया है। आज से 50 वर्ष पूर्व प्रायः हर गांव में संयुक्त परिवारों के अनगिनत नमूने मिल जाते थे जिससे तीन चार पीढ़ियों के सभी लोग दादा, परदादा, दादी, परदादी, माँ, बच्चे चाहे अलग अलग या चाहे सामूहिक रसोइयों में खाते थे। लेकिन परिवार का मुखिया एक ही होता था। पिछले पचास वर्षों में आर्थिक दबाव तले करोड़ों गांववासी शहरों की तरफ आये हैं। लेकिन आज भी चचेरा, ममेरा, फुफेरा, भाइयों की कुटुम्बीय भावनायें विद्यमान है।

आज भी नौजवान लोग परिवार छोड़कर शहरों में कहीं गये हों लेकिन परिवार संस्थान के प्रति उनकी निष्ठायें बनी हुयी हैं। माता–पिता और बड़े बुजुर्गों के प्रति सम्मान कायम है। शहरों या महानगरों में रहकर धन अर्जित करते हैं और हर महीने मनीआर्डर भेजकर अपने परिवार की अर्थव्यवस्था में सहयोग करते है। होली, दीवाली छठ, दूर्गा, पूजा, वगैरह जैसे पर्वों पर पारिवारिक ही नही कुटुम्बकीय सम्बंधनिभायें जाते हैं। बिहार की अर्थव्यवस्था के बारे में तो कहावत प्रचलित हो गई है कि वहां तो मनीआर्डर अर्थव्यवस्था है ।

लेकिन महानगरों में परिवार का विघटन हो रहा है। इधर बच्चे की शादी हुई उधर उसने अलग घर बसाया। विवाह प्रायः एक जोड़े युवाओं का मिलन मात्र नही था। दो परिवारों की रिश्तेदारी थी। दो परिवार भी जब जुड़ते थे तब वर–वधू के चयन में काफी सावधानियां बरती जाती थी। क्योकि वर के माता–पिता और वधू के माता–पिता दोनों की यही बलवती कामना रहती थी। कि दोनों फले–फूले और वंश परम्परा को आगे बढ़ाये। लेकिन आज प्यार मोहब्बत के तरंगित वातावरण में नव युवा सोचने लग गये हैं। कि वे परम्परागत शैली में सोंचने वाले माता–पिता से अधिक बेहतर निर्णय अपने बारे में कर सकते हैं। ऐसा कई बार होता भी है लेकिन ऐसी शादियां विफल भी ज्यादा होती है। इस बीच एक मध्यमार्ग का प्रचलन बढ़ रहा है। जिसमें नवयुवाओं की राय का भी महत्त्व होता है और परिवार की राय का भी। इसलिए भारत में परिवार व्यवस्था महानगरों में अभी तक टिकाऊ नजर आती है। वैश्वीकरण के सांस्कृतिक हमले के प्रचण्ड वेग को देखते हुये पारिवारिक मूल्य के पालन में एक खोखलापन घुलता जा रहा है और वह बड़ी तेजी से भारत पर पश्चिमी संस्कृति के बेगवान हमले में पारिवारिक मूल्य कुछ तबकों में तो क्षत–विक्षत हों गये हैं। आर्थिक सफलतावादी दृष्टि के कारण मूल्य विहीनता महानगरों में फैल रही है। उपभोक्तावाद और नये से नये व ज्यादा से ज्यादा चीजों के उपभोग की लालसा के कारण नैतिकता तार–तार हो गई है। पुराने अपराधों का व्यास फैलता जा रहा है। नये–नये अपराध सामने आते जा रहे हैं। अपराधीकरण का दौर भी इसलिए दिखाई

देता है। परिवारों में ही मानवीय और पारिवारिक मूल्यों के संस्कार की परम्परा हजारों साल से चली आ रही है अब उसका अभाव होता जा रहा है। आज परिवार इन मूल्यों की शिक्षा नही देते अगर देते भी हैं तो भी बच्चा उन्हे ग्रहण नही करता क्योकि उन मूल्यों का शिक्षा देने वालों में ही अभाव होता है। परिवार में बालक को रामायण, महाभारत ही नहीं पंचतंत्र जैसी अनेक कथा परम्पराओं की नई से नई कहानियां सुनाते थे। आज जब दादा, चाचा, ताऊ, साथ रहते ही नही तो सुनायेगा कौन।

रामायण तो मर्यादा पुरूषोत्तम राम के जीवन को चित्रित करता है। इसलिए परिवार की मर्यादाओं से सम्बंधित तमाम संस्कार समेटे हुये मिलता है। पति–पत्नी के बीच पारस्परिक कर्तव्य भाई–भाई के बीच का सम्बंध, बड़ों के प्रति सम्मान और वृहत्तर परिवार की कल्पना के बीच के तमाम सम्बंध इसमें चित्रित हैं। परिवार कुटुम्ब ग्राम, जनपद आदि से लेकर विश्व परिवार तक की संकल्पना उसमें मिली हुयी है। इसलिये हमारे ऋषि–मुनि "वसुधैव–कुटुम्बकम" तक की बात सोच सकें। ब्रिटिश सामाजिक परम्परा में कंजर्व करने या संरक्षण देने की बहुत सी परम्परायें रही हैं। जिनका आदरपूर्वक पालन होता रहा था। लेकिन अमेरिकी समाज का इतिहास तो सिर्फ चार पांच सौ साल का है। अमेरिका ने व्यक्तिवाद पर जोर दिया हैं। समाज और परिवार की चिन्ता नही की या बहुत कम की। भौतिकवाद पर जोर दिया और भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त की। उपभोक्तावाद की परम्परा को तरजीह मिलती रही। सारा जीवन दर्शन इसी के इर्द–गिर्द घूमता रहा है। मेरा जीवन मेरा अपना जीवन है, इसको चाहे जैसे में जिऊं। स्वतंत्रता ने स्वच्छन्दता की राह पकड़ी और सामाजिकता सूख गई। परिवार भी इसी कारण टूटे और अभी टूटते जा रहें हैं। प्रतियोगिता जीवन के केन्द्र में आ गई। भौतिक ऊंचाइयाँ छूने के लिये प्रतिस्पर्धा का माहौल बना।

भारत के परम्परागत समाज में ऐसा नही था। भौतिक उपलब्धता का सम्मान था। लेकिन इसके लिये इतनी प्रतियोगिता या होड़ नही थी। स्वयं अपने बल पर आर्थिक ऊंचाई हासिल करना और अपनी क्षमताओं के शिखर पर पहुंचने की प्रेरणा

जो थी इसे अध्यात्मिक भी कह सकते हैं। अर्थात अपनी क्षमता की पराकाष्ठा प्राप्त करना। संयुक्त परिवार की व्यवस्था में यदि कोई अपंग या अक्षम है तो भी उसके भरण पोषण का जिम्मा परिवार लेता था। बहुत से निर्णयों के लिये परिवार के सदस्य स्वतंत्र थे। लेकिन हर परिवार का अपना एक अनुशासन था और अनुशासन की उस रेखा को लोग पार नही करते थे, नैतिकता का दबाव था। आज महानगरों में यह सब देखने को नही मिलता। पश्चिम की अपसंस्कृति का प्रभाव बढ़ रहा है। अमेरिका माडल लोगो को आकृष्ट कर रहा है। इसी समाज से ही निकलकर युवक सेना में भर्ती होता है। सैनिक प्रशिक्षण अनुशासन, सामूहिक जीवन सेना में विताते हुये भी उसके मन मष्तिष्क में पूर्व के पड़े संस्कार कभी कभी जाग्रति होकर इन जवानों को इतना प्रभावित कर देते हैं कि ये सैनिक, सेना तथा राष्ट्र के लिये घातक साबित हो रहे हैं। संयुक्त परिवार पर आधारित टी0वी0 सीरियलों की लोकप्रियता इस बात का प्रमाण है कि लोग आज भी मानसिक रूप से संयुक्त परिवार के जीवन को ही आकर्षक पाते हैं। एकल परिवारों का बढ़ता भयावह अकेलापन असुरक्षा खालीपन आज फिर से लोगों को यह सोचने पर बाध्य कर रहा है कि संयुक्त परिवार पद्धति ही आदर्श पारिवारिक जीवन का मूल्य है बच्चों का जैसा लालन–पालन संयुक्त परिवार में होता है एकल परिवार में नही हो सकता ।

आजकल माता–पिता दोनो कामकाजी हैं। ऐसे में बच्चों के उपेक्षित होकर बिगड़ने या मानसिक ग्रन्थियाँ पालने के काफी अवसर बढ़ जाते हैं जबकि संयुक्त परिवार में रहकर बच्चा मिलजुल रहना, सबके साथ तालमेल बिठाकर चलना सीखता है। यहां वह दादी से पुरानी ज्ञान से भरपूर कहानियां सुना करता है जो कहीं गहरे में पैठ कर उसे आगे चलकर अच्छा इन्सान बनने में सहायक होती है, रीति रिवाज और परम्पराओं से उसका परिचय आगे चलकर जीवन का खालीपन भरता है। इस तरह उसमें सही विचारधारा विकसित होने लगती है। यहां उसे अच्छे संस्कार मिलते हैं। अनुशासन में रहने की आदत पड़ती है जो आगे चलकर जीवन में बहुत काम

आती है। आज के बुजुर्ग भी पहले की तरह दकियानुसी नही रह गये। वे वक्त के साथ बदलते हैं और उनकी दखलदांजी करने की आदते बदली हैं।

वे अपने चारों ओर के वातावरण को लेकर जागरूक बने हैं। आज वे भी युवाओं जैसी सोंच लिये प्रगतिशील बन गये हैं। जीवन से जुड़े रहने का संयुक्त परिवार से अच्छा दूसरा साधन नही है। आज विदेशों में भी जीने की इस पद्धति को बढ़ावा दिया जा रहा है। वहां पर बढ़ती तलाक की दर बाल अपराध का ऊंचा होता ग्राफ, मनोरोग के बढ़ते आकड़े कहीं न कहीं एकल परिवार की तनहाई से जुड़े हैं। यही हाल हमारे देश में है। जवानी से ज्यादा बुढ़ापे में मानसिक सहारे की आवश्यकता होती है। संयुक्त परिवार में अगर आपसी समझ हो और स्नेह, प्यार अपनापन, हो तो साथ रहने में सुख बहुत है। इस व्यवस्था के पीछे सदियों का अनुभव है। रिश्ते नातों की जीवन में क्या अहमियत है यह महसूस करने की बात है। संयुक्त परिवार के बदौलत ही अगली पीढ़ियां रिश्ते नातों को जान पाती हैं। ननिहाल में नाना–मामा के घर जाकर बचपन में वो मस्तियां करना बड़े से कुनबे में सुबह से रात तक उत्सव का सा वातावरण हमने जो जिंदगी जी है। भविष्य में पोते–पोती, बेटा–बहू उसकी कल्पना भी नही कर सकते। महज पैसा उस सुख का विकल्प नहीं। संयुक्त परिवार जो हमारी संस्कृति की पहचान है, टूटने के कगार पर जा पहुँचा अब न यहां रिश्तों की पूजा होती है और न बड़ों का आदर बचा है। इसके टूटने से केवल बच्चे ही नही बल्कि बड़े भी स्वार्थी हो गये हैं उसका खामियाजा भी समाज भर रहा है। खासकर औरतें जिन पर घर और बाहर की दोहरी जिम्मेदारी होती है वह स्वयं तनावग्रस्त रहने लगी है, साथ ही बच्चे भी जिन्हे माता–पिता समयाभाव के कारण वक्त नही दे पा रहे हैं। संयुक्त परिवार इसलिये आज ज्यादा जरूरी हो गया है। जब हम अन्य सामाजिक रिश्ते निभा सकते हैं तो घर परिवार के रिश्ते क्यो नही? बच्चों में आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता संयुक्त परिवार में ज्यादा आती है। पति–पत्नी में मतभेद कम होते हैं। भावनात्मक सम्बल और सुरक्षा का एहसास भी मिलजुलकर रहने में ही मिलता है।

संयुक्त परिवारों के विघटन, आधुनिकता की दौड़ एकल परिवारों का उभरना, खण्डित होते जीवन मूल्यों और टूटती परम्पराओं ने परिवार के मुखिया और बड़े बुजुर्गों को असहाय और भावनात्मक रूप से अलग–थलग कर दिया है। एक सर्वे के अनुसार 2001 में भारत में बुजुर्गों की संख्या करीब नौ करोड़ थी 2010 तक करीब 20 करोड़ हो जायेगी। बुजुर्गों की बढ़ती आबादी के साथ–साथ समस्यायें भी बढ़ी हैं। राजधानी दिल्ली जैसे महानगरों में आये दिन बुजुर्गों की हत्या और उनके साथ लूटपाट की घटनायें होती रहती हैं। पिछले दिनों सरकार ने बुजुर्गों की देखभाल के लिये विशेष कानून बनाने के संकेत दिये यह स्वागत योग्य हैं। लेकिन विडम्बना यह है कि विश्व गुरू कहे जाने वाले देश भारत में सामाजिक व पारिवारिक समस्याओं के समाधान के लिये कानून की जरूरत पड़ गई। समाज की नई बनावट ने ही बुजुर्गों की इज्जत और मान सम्मान को घटाया है।

भारत की सफल परिवार प्रणाली दुनिया में अनूठी रही है। किन्तु आधुनिकता ने इस पर जो विखराव पैदा किया है इसका सीधा आक्रमण हमारे नैतिक मूल्यों पर हुआ है। अब अधिकतम धन कमाने की भावना ने आज की भावना को बढ़ाया है। पहले यदि किसी परिवार में कोई अपंग, विधवा आदि जैसी स्थिति होती थी। उसका सप्रबंध व्यवस्था में पूरे जीवन संरक्षण किया जाता था। आज वह स्थिति नही रह गयी है। माता–पिता, भाई–बहन पत्नी–पुत्र आदि सभी रिश्ते आर्थिक अभाव से कमजोर होते जा रहे हैं। परिवार टूटते जा रहे हैं। सम्मान कमजोर होता जा रहा है इन कारणों ने सशस्त्र सेनाओं की मानसिकता को प्रभावित किया है। कहीं–कहीं पर उनके गिरते जीवन मूल्यों का आये दिन मूल्यांकन एवं अध्ययन किया जा रहा है।

संयुक्त परिवार व्यवस्था के विखराव ने सेना के नैतिक एवं व्यवसायिक मूल्यों को सीधा प्रभावित किया। पहले उसके परिवार को संयुक्त परिवार पालता था। अब एकल परिवार व्यवस्था ने उसे अलग–थलग कर दिया है जिससे आंतरिक रूप से उसके ऊपर दबाव बढ़ गया है। एक ओर आर्थिक दबाव दूसरी ओर सैनिक अधिकारियों का दबाव होने के बीच तालमेल बैठाने वाली संयुक्त परिवार व्यवस्था के विखराव ने स्थित और विकराल कर दी है। परिणामस्वरूप इन परिस्थतियों ने सैनिकों मे आत्महत्याओं एवं हत्याओं की वृद्धि में सहयोग किया है जिसे तत्काल रोकना होगा।

कृषि एवं उद्योग का आधुनिकीकरण-

भारत एक कृषि प्रधान देश है यहाँ कि 80 प्रतिशत जनता कृषि व्यवसाय में लगी हुयी है। इसलिये यह भी कहा जाता है कि भारत गांवो का देश है। भारत की विशाल आबादी का पेट भरने के लिये कृषक दिन रात एक किये रहते हैं और उनकी आर्थिक दशा इतनी जर्जर है कि भरपेट भोजन मिलना कठिन है। किसी शहर से फटे कपड़े जर्जर शरीर नंगे पांव कोई व्यक्ति सड़क छोड़कर पगडंडी से जा रहा हो आप उसके पीछे हो जाइये सीधे आप किसी गांव में पहुँच जायेगें। नैपोलियन ने कहा है कि सेना पेट के बल चलती है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किसी भी राष्ट्र का बच्चा से लेकर वृद्ध तक सभी सैनिक स्तर में आते हैं। क्योंकि समग्र युद्ध का युग चल रहा है। इसलिये 1965 के युद्ध में भारत के प्रधानमंत्री स्व0 श्री लालबहादुर शास्त्री जी ने 'जय जवान और जय किसान' का नारा दिया था। इससे कृषि की उपयोगिता स्वयं सिद्ध हो जाती है। द्वितीय विश्व युद्ध में जर्मनी का खाद्यान्न भण्डारण समाप्त हो गये जिससे उसके यहां गृह युद्ध छिड़ गया और अन्ततः जर्मनी की पराजय हुई।

भारत एक संघीय राज्य है इसमें 28 राज्य तथा सात संघ द्वारा शासित क्षेत्र हैं। प्रत्येक जगह की जलवायु एवं कृषि उत्पादकता में भिन्नता पाई जाती है। भारत का कृषि व्यवसाय अधिकांश भागों में मानसून पर निर्भर है इसी कारण भारत की एक बहुत बड़ी जनसंख्या निर्धन रेखा से नीचे का जीवन स्तर बिता रही हैं 1960 ई0 के दशक के मध्य प्रारम्भ हुये 'हरित क्रान्ति' के बाद से भारत में खाद्यान्य उत्पादन प्रतिवर्ष कुछ उतार चढ़ाव के बीच बढ़ता रहा है। हरित क्रान्ति से पहले के दौर में कृषि उत्पादन कृषि के क्षेत्र में भारत की उपलब्धि, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (*ICAR*), कृषि विश्वविद्यालयों तथा देश भर में फैले विशिष्ट अनुसंधान संस्थानों के तत्त्वाधान में लाये गये विभिन्न प्रकार के तकनीकी अनुसंधान परियोजनाओं के द्वारा प्राप्त हुई हैं। भारत में कृषि के क्षेत्र में नये तकनीकी तथा वैज्ञानिक निवेशों का प्रयोग साठ के दशक के मध्य प्रारम्भ हुये। आज कृषि के क्षेत्र में उन्नतशील वैज्ञानिकी एवं तकनीकी प्रयोग के द्वारा विभिन्न फसलों के अधिक उपज देने वाली प्रजातियों का

विकास, फसल सुरक्षा, मृदा एवं जल प्रबंधन एवं फसलों के पोषण प्रबंधन के द्वारा अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा रहा है। नई राष्ट्रीय कृषि नीति में दुग्ध (स्वेत क्रांति), मत्स्य उत्पादन (नीली क्रान्ति), तिलहन उत्पादन (पीली क्रान्ति), और खाद्यान्न उत्पादन (हरित क्रान्ति) सभी के समग्र रूप से विकास करने की रणनीति अपनाई गई है। जिसे 'इन्द्रधनुषी क्रान्ति' के नाम से सम्बोधित किया गया। पौध प्रजनन के द्वारा किसी भी फसल के उन सभी लक्षणों में सुधार किया जाता है, जिससे उस फसल की मानव के लिये उपयोगिता बढ़ती है। पौध प्रजनन से किसी फसल के किसी ऐसे किस्मों का विकास किया जा सकता है, जो अधिक उपज देने वाला हो, उच्च गुणवत्ता का हो रोग एवं कीट रोधी हो कम समय में पककर तैयार होता हो। देश में पौध प्रजनन विभिन्न तकनीकों (*Hybocidization*) संकरण, (*Selction*) वरण, (*Mutation*) उत्परिवर्तन, और जैव प्रौद्योगिकी से लगभग कृषिगत फसलों के अनेक उन्नतशील किस्मों का विकास किया गया। संकर किस्म का विकास कार्य किसी फसल के दो भिन्न जीनोंटाइप वाले पौधों को आपस में संकरण कराके किया जाता है। मक्का, धान, गेहूं, ज्वार बाजरा सहित अनेक खाद्यान्य फसलों के अधिक उपज देने वाले किस्मों का विकास किया गया हैं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और उसके सहयोगी कृषि विश्वविद्यालयों से अब तक 3000 के लगभग उन्नति किस्में विकसित करके किसानों को खेती के लिये जारी की जा चुकी है।[38] फसलों में मनचाहे गुणों वाले जीन का प्रवेश कराके नई किस्म तैयार की जायेगी ये पराजीनी या ट्रान्सजेनिक किस्म है।

अब तक दुनिया भर में 50 से अधिक पराजीनी किस्में विकसित की चुकी हैं। 1960 के दशक के मध्य से प्रारम्भ हुये 'हरित क्रान्ति' के बाद से भारत में हरित क्रान्ति से पहले के दौर में कृषि उत्पादन में वृद्धि का मुख्य कारण कृषि योग्य भूमि का विस्तार था, लेकिन हरित क्रांति के बाद उत्पादन में वृद्धि का जो रूख बना रहा है, उसके पीछे उत्पादन बढ़ाने वाली टेक्नोलॉजी और समर्थक सेवाओं तथा ढांचे के कारण उत्पादकता में होने वाली वृद्धि थी। परिणाम स्वरूप देश का कुल खाद्यान्न

उत्पादन जो 1950–51 में मात्र 5.5 करोड़ टन था उसमें नवीनतम अनुमानों के अनुसार 2003–04 में 8 गुना से अधिक वृद्धि हुई। और यह उत्पादन 21.2 करोड़ टन के आकड़े को पार कर गया। इसी बीच प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता भी जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि के वावजूद 395 ग्राम प्रतिदिन से बढ़कर 500 ग्राम प्रतिदिन हो गई है। खाद्य सुरक्षा का पहले 'जहाज से मुंह तक' के रूप का उपमा दिया जाता था। आज भारत के पास विशाल खाद्यान्न भण्डारण है। तिलहन के क्षेत्र में भी एक बड़ी छलांग लगी है। जिसके फलस्वरूप पीली क्रान्ति सम्भव हो पाई है। नब्बे के दशक में नदियों, झीलों, तालाबों, से मछली उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि दर्ज की गई, जिससे 'नीली क्रान्ति' आई। बागवानी और मुर्गी पालन उत्पादन में भी वृद्धि उच्चस्तरीय रही। दुग्ध उत्पादन में प्रथम तथा फल एवं सब्जी उत्पादन में भारत विश्व में दूसरा स्थान प्राप्त कर चुका है।

इस कृषि एवं उससे सम्बंधित उद्योगों के क्षेत्र में जो आधुनिकीकरण हुआ है। उसका प्रभाव भी भारतीय नैतिक मूल्यों पर पड़ा है जहां–जहां विज्ञान का प्रवेश होता जा रहा है। वहां पर मूल्यों में गिरावट देखी जा रही है। जब हमारे यहां खाद्यान्न के आभाव में अकाल पड़ते थे, तो नैतिकता के आधार पर, मानवीय आधार पर लोगों की सहायता की जाती रही है। लेकिन वैज्ञानिक विकास तथा आधुनिकता से मूल्यों के संरक्षण एवं संवर्धन का दृष्टिकोण शनैःशनैः कमजोर होता जा रहा है जिसका सीधा प्रभाव हमारी सशस्त्र सेनाओं के नैतिक मूल्यों पर पड़ रहा है।

भारत में कृषि अनुसंधान संस्थाओं तथा अन्य वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थानों द्वारा कृषि एवं ग्रामीण विकास से सम्बंधित विकास प्रौद्योगिकी को ग्रामीणों तक पहुंचाने के उद्देश्य से कृषि प्रसार कार्यक्रम के अधीन कई प्रकार के योजनायें जिनमें राष्ट्रीय प्रदर्शन कार्यक्रम इसी उद्देश्य से प्रारम्भ किया गया। कि वैज्ञानिक अनुसंधान के द्वारा विकसित तकनीक को किसानों के खेत पर प्रदर्शित कर उसको अपनाने के लिये प्रोत्साहित किया जाय। जनसंचार माध्यमों से कृषि तथा तकनीकी विकास तकनीकों का व्यापक प्रचार–प्रसार द्वारा ग्रामीणों तक पहुँचानें का प्रयास होता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र कृषि तकनीक के प्रसार हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (*ICAR*) द्वारा संचालित केन्द्रीय प्रसार परियोजना है। अब तक देश भर में फैले लगभग 300 कृषि विज्ञान केन्द्रों के द्वारा अपने व्यवसाय में लगे हुये कृषकों, महिलाओं मछुवारों, शिक्षित ग्रामीण युवकों तथा ग्रामस्तरीय कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण के माध्यम से व्यवसाय तथा तकनीकी ज्ञान प्रदान करता है। कृषि विज्ञान केन्द्र के वर्तमान कार्यों में कृषि तथा सम्बंधित क्षेत्रों में करते हुये शिक्षण तथा करते हुए सीखना नियमों का पालन करते हुए किसानों को कौशल प्रशिक्षण सहित कार्य शिक्षण विभिन्न कृषि प्रणालियो में प्रौद्योगिकी की स्थायी अनुकूलता की पहचान के लिये खेतों पर परीक्षण विस्तार कर्मियों के सेवा दौरान प्रशिक्षण ताकि कृषि प्रौद्योगिकी के अग्रणी क्षेत्रों में उनके ज्ञान में सुधार हो और किसानों के खेतों में ही उत्पादनों की सम्भाव्यता सिद्ध करने के लिये प्रदर्शन आयोजन तथा किसानों के अनुभव प्रतिक्रियाओं तक पहुच शामिल है। वर्तमान में कृषि विज्ञान केन्द्र लगभग 13900 प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करते हैं। कृषि विज्ञान केन्द्रो से भारतीय कृषि को लाभ पहुँचा है।

भोजन मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता है। अन्न से जीवन है। इसे पूरा करने के लिए देश में हरित क्रान्ति लाई गई। अधिक अन्न उपजाओ का नारा दिया गया। परिणामस्वरूप रासायनिक उर्वरकों पौध संरक्षण रसायनों (कीटनाशी, रोगनाशी, शाकनाशी, खरपतवारनाशी चूहेमार दवायें) का अन्धाधुध एवं असन्तुलित उपयोग प्रारम्भ हुआ। अतः आज खेती को रासायनिकृत बना दिया गया है। भारत के खेतों में हर वर्ष औसतन 80 हजार टन रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है। इससे उत्पादन तो बढ़ा है परन्तु भूमि की उत्पादकता में गिरावट अथवा स्थिरता आने के कारण पूर्व वर्षों से चली आ रही उत्पादन वृद्धि पर प्रश्न चिह्न लग गया। देश में गेहूं की कमी को देखते हुये सार्वजनिक एजेंसियों के साथ–साथ निजी व्यापारियों को भी शुल्क मुक्त आयात की अनुमति प्रदान करने के लिये 'मन' केन्द्र सरकार ने पहले ही बनाया हुआ था। देश में गेहूं की उपलब्धि में कमी तथा इसकी कीमतों में

लगातार हो रही वृद्धि को देखते हुये केन्द्र सरकार गेहूँ का उत्पादन बढ़ाने के लिये विशेष योजना बनाई है। जिससे गेहूँ का उत्पादन कम से कम 50 से 70 लाख टन तक बढ़ जाये और आयात से छुटकारा मिल सके इसके लिये 2480 करोड़ रूपये के एक पैकेज का प्रारूप तैयार किया गया है। 1240 करोड़ रूपये से अधिक केन्द्र द्वारा खर्च किये जायेगें जबकि 744 करोड़ रूपये राज्यों को और 496 करोड़ रूपये किसानों को खर्च करने होगें। इस पैकेज के तहत पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में उत्पादकता को बढ़ाने में जोर दिया जायेगा तो बिहार, मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में गेहूँ के अधीन बुआई क्षेत्र को बढ़ाये जाने की योजना है।

कृषि सचिव राधा सिंह ने आशा व्यक्त की है कि इस पैकेज से भूमि की मृदा शक्ति को फास्फोरस के जरिये बढ़ाने तथा बेहतर उपज के लिये विद्युत की आपूर्ति बढ़ाने के प्रावधान शामिल है। देश में इस वर्ष गेहूँ का उत्पादन 690 लाख टन से कुछ अधिक रहा, जबकि 1999–2000 में यह 760 लाख तक पहुँच गया था। उत्पादन में कमी आने से और सरकारी खरीद कम रहने की वजह से ही सरकार को सरकारी एजेंशियों के माध्यम से 335 लाख टन गेहुं आयात करना पड़ा और निजी व्यापारियों को शुल्क मुक्त आयात करने की अनुमति प्रदान की गई।[39]

1950 के दशक में देश में खाद्यान्न उपलब्धता जहाज से मुंह तक सीमित थी। इस दुःखद स्थिति को बदलने हेतु गेहूं, चावल जैसी मुख्य खाद्यान्न फसलों के बीजों को तैयार करने के लिये बीजों के संकरण पर ध्यान दिया गया। मैक्सिको से बौनी किस्मों के गेहूं की किस्मों का आयात किया गया और उन्हे भारतीय परिरिस्थितियों के अनुरूप तैयार किया गया। इसी प्रकार पूर्वी एशियाई देशों विशेषकर फिलीपीन्स से धान के बीजों का आयात कर उन्हे देश की परिस्थितियों के अनुरूप ढाला गया। इन सबका परिणाम उत्साहवर्धक रहा। इससे देश में खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई, जिसे हरित क्रान्ति की संज्ञा दी गई। खाद्यान्नों की सफलता के बाद कपास, मक्का, सोयाबीन, सब्जी आदि में यही प्रक्रिया दोहराई गई। अधिक उत्पादन हेतु संकर बीजों को रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, सिंचाई, डीजल, बिजली,

सहकारिता आधार पर ऋण व विपणन सुविधायें तथा सुरक्षित भण्डारण प्रणाली को अपनाया गया। इन बीजों के प्रयोग से खाद्यान्न उत्पादन बढ़ा, लेकिन कई नकारात्मक परिणाम भी सामने आये। उर्वरकों कीटनाशकों सिंचाई आदि के अधिक प्रयोग से भूमि की प्राकृतिक शक्तियों जैसे मिट्टी की उर्वरता भूमिगत, जल और पर्यावरण पर गम्भीर प्रभाव पड़ा इससे फसलों की विविधा नष्ट हुयी और कुछ एक फसलों की चुनिंदा किस्में स्थानीय उत्पादन में तीन दशक तक भारी उत्पादन वृद्धि के बाद गिरावट आनी शुरू हुई और कृषि गहरे संकट में फंस गई। उदारीकरण और भूमण्डलीकरण ने कृषि संकट को गहरा करने में प्रेरक का कार्य किया ।

1998 में विश्व बैंक की संरचनात्मक बदलाव सबन्धी नीतियों में भारत कों अपने बीच क्षेत्र को वैश्विक कृषि व्यापार के लिये खोलने हेतु बाध्य किया। इस बदलाव का परिणाम यह हुआ कि परंपरागत रूप से बचाये गये बीजों का स्थान अनुंवांशिक संशोधित (जीएम) ने ले लिया जो दोबारा प्रयोग में नही आते। उन्हे प्रत्येक मौसम में खरीदना अनिवार्य होता है। पहले जिन क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती थी। वहां अब एक या दो फसलों की प्रधानता हो गई हैं। इसने पौधों के लाखों प्रजातियों को नष्ट किया जिससे फसल नष्ट होने की सम्भावनाएं बढ़ गई। पुनर्प्रयोग में न आने वाले बीज और पेटेंट व्यवस्था ने बीज बचाने की प्रवृत्ति को रोका। कृषकों के लिये एक मुस्त अनाज को अब प्रतिवर्ष खरीदने के लिये बाध्य किया जाने लगा। इससे किसानों की गरीबी बढ़ी और वे ऋण लेने के लिये बाध्य हुये। कृषि बचत बीज के स्थान पर बहुराष्ट्रीय बीज कम्पनियां द्वारा तैयार अनुवांशिक संशोधित बीजों की आपूर्ति से बीज की विविधता घटी और एक फसली (मोनोकल्चर) कृषि को बढ़ावा मिला। आन्ध्रप्रदेश के वारंगल जिले में विभिन्न प्रकार की दलहनी मोटे अनाज और तेल बीज फसलें उगाई जाती थी। बीज एकाधिकार ने कपास की फसल के एकाधिकार को बढ़ावा दिया। इससे अपने आप उगने वाले और किसानों द्वारा उत्पन्न हजारों उत्पाद नष्ट हो गये। एक फसली और एक रस कृषि ने फसल नष्ट होने के खतरे को बढ़ाया। परम्परागत बीज विविध परिस्थित तंत्र से अनुकूलन

स्थापित कर चुके थे इसलिये उनमें सूखा, बाढ़, प्रतिकूल, मौसम और विविध बीमारियों के प्रति प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न हो गई थी। इनके स्थान पर बिना अनुकूलित और बिना परीक्षित किये नये बीज बाजार में आ गये। बिहार में जब परम्परागत रूप से बचाये गये मक्का को मोनसेटों के हाइब्रिड मक्का ने विस्थापित किया तब करोड़ो रुपये की मक्का फसल नष्ट हो गई। फसल प्रणाली के व्यवसायीकरण की ओर झुकने से फसल नष्ट होने के खतरे बढ़ गये। एक फसली कृषि के साथ–साथ मिट्टी एवं भूमिगत जल का अतिदोहन किया गया। जिससे समस्या बढ़ी पहले किसानों को संस्थागत स्रोतों से ऋण सुविधा मिली लेकिन आगे चलकर इन संस्थाओं की माली हालत और विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष आदि के पड़ने वाले दबाव, असंगठित क्षेत्र (निजी साहूकार) से ऊँची ब्याजदर पर ऋण लेने को बाध्य हुये। महंगी तकनीक के विफल होने पर किसान कर्ज के दुष्चक्र में फंसते चले गये। जिन क्षेत्रों में किसानों की आत्महत्या दर अधिक है उन क्षेत्रों में परम्परागत बीजों के स्थान पर बहुराष्ट्रीय बीज कम्पनियों के महंगे बीजों की प्रधानता रही। इन बीजों से शुरू में उपज अच्छी होती है। लेकिन आगे चलकर उत्पादन घटता जाता है। तथा रसायनों एवं कीटनाशकों की मांग बढ़ती जाती है।

इसके अतिरिक्त इन बीजों को पानी की जरूरत अधिक होती है जिसके अभाव में मिटटी की उर्वरा शक्ति कम होती है। पराजीनी किस्मों में रोग, प्रतिरोध, अधिक उपज, बेहतर गुणवत्ता और अधिक टिकाऊपन जैसी खूबियाँ मौजूद हैं। कपास की बी0टी0 किस्म परजीनी फसल है। जो महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और हरियाणा में उगाई जा रही है। भारत में बी0टी0 जीन के माध्यम से पराजीनी किस्में विकसित की जा रहीं हैं।

नई दिल्ली स्थिति कृषि अनुसंधान संस्थान की प्रयोगशाना में बैंगन और टमाटर में बीटी जीन डाली गई है। यह जीन भारतीय जीवाणु से प्राप्त की गई है। नागपुर के केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान राजमुदरी के तम्बाकू अनुसंधान संस्थान में बीटी जीन वाली किस्में विकसित करने के लिये प्रयोग चल रहे हैं। जल्द ही

स्वदेश में भी स्वदेशी पराजीनी किस्मों की फसलें लहलहाएंगी। जिस प्रकार प्राणियों में एक निषेचित अण्डे से जटिल संरचना वालें जीवों के विकसित शरीर बनने में अन्तःस्रावी ग्रथियां हर्मोन्स को रक्त में मुक्त करके अंग निर्माण विकास, पाचन, उत्सर्जन जनन आदि अनेक क्रियाओं को नियत्रित करती है। तथा जिनका नियमन धीरे–धीरे निरन्तर लम्बे समय तक आवश्यक होता है। ठीक उसी प्रकार पौधों में भी पादप–हार्मोनों का संश्लेषण अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा में तनों एवं जड़ों के शीर्ष की मेरिस्टेम कोशिकाओं प्रारूप पत्तियों कलिकाओं एवं बीजों में उत्पन्न करते हैं। जो परिवर्तन के उपरान्त पौधों के दूसरे अंगों में पहुँचकर वृद्धि एवं अनेक उपापचयी क्रियाओं व प्रभावों को नियंत्रित करते हैं। आज कृषि के क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के संश्लेषित पौध हार्मोन्स या वृद्धि नियंत्रक रसायनों का प्रयोग विभिन्न कार्यों के लिये किया जा रहा हैं बीज तकनीक से उन्नति किस्मों का विकास है, जिससे उत्पादन में वृद्धि हो सके। जिसमें प्रजनक बीज, आधार बीज पंजीकृत बीज, प्रमाणिक बीज, की यही श्रेणी किसानों को फसल उगाने के लिये उपलब्ध होती है।

भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है। हमारे सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान लगभग 25 प्रतिशत है। देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या अपनी आजीविका के लिये इसी पर निर्भर है। स्वतंत्रता प्राप्त के बाद भारत का कृषि के क्षेत्र में प्रगति शानदार रही है। जहाँ हम प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में लगभग 55 मिलियन टन खाद्यान्न का ही उत्पादन ही करते थे, वहीं वर्तमान में 210 मिलियन टन से अधिक खाद्यान्न का उत्पादन कर आत्मनिर्भरता की स्थिति में हैं और अकाल से होने वाले मौत पर नियंत्रण स्थापित कर चुके हैं। इसी प्रकार बढ़ती हुयी जनसंख्या के खाद्यान्न उपलब्धता बढ़ी है। आपरेशन फ्लड की सफलता से प्रतिव्यक्ति दूध की उपलब्धता भी आज 210 ग्राम प्रतिदिन हो गई है। आज भारत फल और दूध में प्रथम तथा सब्जी में चीन के बाद दूसरे नम्बर पर है। ये साधारण उपलब्धियां नही है और हम इस पर गर्व कर सकते हैं। कृषि के क्षेत्र में यह हमारी शानदार उपलब्धि

विभिन्न प्रकार के फसलों के अधिक उपज देने वाले उन्नति किस्म के बीज उर्वरक कीटनाशी, तथा कई प्रकार के कृषि प्रौद्योगिकी के कारण ही सम्भव हुआ है।

इस कृषि तकनीकी के विकास एवं आधुनिक रूप से कृषि कार्य भी व्यापारिक स्वरूप ग्रहण करने लगी। व्यापारिक कृषि मानसिकता ने आम जनता को आज से अधिक रासायनिक खाद का प्रयोग के लिए उत्साहित किया परिणामस्वरूप उत्पादन बढ़ा किन्तु अत्यधिक रासायनिक उपयोग से विभिन्न प्रकार की नई–नई बीमारियों का भी जन्म हो गया। इस प्रकार हमारी मानसिक सोच भी प्रभावित हुई है। अब मानव कल्याण की भावना से किसान भी खेती नही करता है। अधिक धन उपार्जित उसका लक्ष्य हो गया है जिससे निरन्तर जीवन मूल्यों में गिरावट आने लगी इसका सीधा प्रभाव हमारी सशस्त्र सेनाओ के नैतिक मूल्यों पर पड़ा है उसे स्थान–स्थान पर देखा जा रहा है।

देश की जीवन मूल्यों की गिरावट का प्रमुख कारण आधुनिक कृषि विकास एवं उसकी उपलब्धियो से जोड़ा जा सकता है। जैसे कहा जाता है जैसा खाये अन्न वैसा बने मन ; रासायनिक जनित एवं व्यावसयिक सोंच के खाद्यान्न उत्पादन से हमारी संवेदनशीलता तथा सोच को भी प्रभावित किया है। प्राचीन नैतिक जीवन मूल्य व्यावसायिक सोच पर आधारित हो गयें हैं। जिससे हमारे नैतिक क्षरण को गति मिली है सारे देश की जनता इस क्षरण से प्रभावित हुई है सशस्त्र सेनाओं पर इसका सीधा प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है कि सैनिकों में विद्रोह की प्रवृत्ति बढ़ रही है। जिस देश में राणाप्रताप ने घास की रोटी खाकर अपनी देशभक्ति एवं नैतिकता का ध्वज सारे विश्व में रोशन किया था। और अकबर की आधीनता स्वीकार नही की। वहां अब चन्द लाभ के लिए बड़े–बड़े सैनिक अधिकारी अपना ईमान बेंचते दिखाई दे रहे हैं। यह बड़ी भयावह स्थिति है।

जनसंख्या वृद्धि एवं शहरीकरण

राष्ट्र के निवासी सबसे महत्त्वपूर्ण होते हैं। क्योंकि वे राष्ट्र के चेतन तत्त्व हैं। राष्ट्र के निवासियों के चरित्र मानसिक स्तर तथा श्रमशीलता पर ही एक राष्ट्र का विकास निर्भर करता है। यह वह तत्त्व है जो भौगोलिक एवं प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग करता है। तथा राष्ट्र के विशिष्ट राष्ट्रीय चरित्र, मनोबल, नेतृत्व तथा प्रतिभा का मानदण्ड स्थिर करता है।

जनसाधारण ही किसी राष्ट्र की शक्ति के प्रमुख व निर्णायक स्रोत होते हैं। हमारा देश एक बहुजनसंख्या वाला देश है। संसार में चीन के बाद हमारे देश की जनसंख्या सबसे ज्यादा है। चीन के पास दुनिया का 7 प्रतिशत भू–भाग है जबकि हमारे पास दुनिया का मात्र 2.4 प्रतिशत भू–भाग ही है। भारत की वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर 1.93 प्रतिशत है तो चीन की मात्र एक प्रतिशत। आज विश्व में प्रति मिनट 150 बच्चे जन्म लेते हैं। जिनमें 45 बच्चों का योगदान हमारा देश करता है।[40] भारत की जनसंख्या का अन्दाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि तीन बड़े महाद्वीपों उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया की संयुक्त जनसंख्या से हमारी आबादी अधिक है। संसार का प्रत्येक छठ्ा व्यक्ति भारतीय है। भारत में प्राचीन काल से ही जनसंख्या अधिक रही है। पर उस समय युद्ध महामारी आदि प्रकोपों के कारण मृत्युदर अधिक होती थी, इसलिये जनसंख्या सन्तुलन बना रहता था। आजादी के पूर्व के 90 वर्षों में भारत की आबादी 12 करोड़ थी तो आजादी के समय करीब 33 करोड़ और आजादी के 50 वर्ष बाद 66 करोड़ थी, जो अब बढ़कर चार गुना हो गई है। जब कि विश्व की जनसंख्या पिछले 40 सालों में तीन अरब से बढ़कर छह अरब ही हुई है। वर्तमान में हमारी जनसंख्या वृद्धि दर लगभग दो प्रतिशत से एक प्रतिशत हो जाय तो भी आने वाले समय में भारत का आबादी के मामले में पहला स्थान होगा। इस बढ़ती हुई जनसंख्या ने भारत के विकास को धीमा कर दिया है। इसके कारण संसाधनों और भूमि पर दबाव बढ़ रहा है। दुर्लभ संसाधनों का अधिक दोहन हो रहा है। आवास के लिये पेड़ो को काटा जा रहा है। जीवन स्तर बनाये रखने के लिये

काफी मशक्कत करनी पड़ रही है। प्रत्येक जगह शक्ति और सुरक्षा पर प्रश्न चिह्न लग गया है। बेरोजगारी तथा अपराधों को बढ़ावा मिल रहा है। लोगों में अनैतिकता की भावना बढ़ रही है। इस बढ़ती हुई भीड़ के कारण सारी व्यवस्था चरमरा गई है। बढ़ती हुई जनसंख्या की वजह से अब लोग काम–धन्धे की तलाश में गांवों को छोड़कर शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। कृषि में आधुनिक मशीनों के प्रयोग के कारण मजदूरों को साल में 150 दिन ही काम मिलता है और बांकी समय में ऐसे बेकार बैठा रहना पड़ता है। आज ग्रामीण गरीबी, बेरोजगारी और शहरीकरण की होड़ में हालत यह है कि गांवों में बच्चे और बृद्ध ही दिखाई देते हैं। सरकार भी ग्रामीण विकास के लिय काफी प्रयास कर रही है। फिर भी यह पलायन रूक नही रहा है। निरंतर बढ़ती जनसंख्या एवं सीमित संसाधनों में सामंजस्य स्थापित करने के लिये जनसंख्या नियंत्रण आवश्यक है।

जनसंख्या विदेश नीति के क्षेत्र में एक प्रमुख तत्व है। विदेशनीति निर्धारण जनसंख्या के तथ्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। ड्रेविड वाइटल के अनुसार " किसी देश के क्षेत्रफल और उसकी जनसंख्या के आधार पर यह निश्चित किया जा सकता है कि वह देश महाशक्ति है या छोटा राष्ट्र। जनसंख्या के महत्व का मूल्यांकन दो दृष्टिकोण से किया जाता है– जनसंख्या और गुणात्मक पहलू । चीन और भारत जनसंख्या की दृष्टि से सबसे बड़े देश हैं जिस कारण वे विशाल स्थल सेना रखने में समर्थ हैं। वे विशाल मानव स्रोत को गुणात्मक दृष्टि से भी मजबूत कर सकते हैं। जनसंख्या का गुणात्मक पहलू भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जनसंख्या की संख्यात्मक दृष्टि से अमरीका और जापान हालांकि चीन और भारत से छोटे हैं किन्तु जनसंख्या की गुणात्मक दृष्टि से सम्पन्न जनसंख्या वाले जापान, अमेरिका जर्मनी और ब्रिटेन विश्व में महत्त्वपूर्ण स्थिति बनाये हुये है साथ ही यह उल्लेख करना भी समीचीन होगा कि जहां संख्यात्मक दृष्टि से बड़ी जनसंख्या वाला देश यदि अपने देशवासियों को गुणात्मकस्तर से सम्मुनत कर दे तो वह विश्व में एक बड़ी शक्ति का स्थान ले लेगा। जब हम भौतिक तथा सम्वन्वित, भौतिक तथा मानवीय तत्वों से

हटकर केवल उन विशुद्ध मानवीय तत्वों पर विचार करते हैं। जिनके द्वारा किसी राष्ट्र की शक्ति निर्धारित होती है तो हमें उनके गुणात्मक तथा मात्रात्मक अंगो में भेद समझ लेना चाहिए। गुणात्मक तत्त्व राष्ट्रीय चरित्र, राष्ट्रीय साहस, नेतृत्व, कूटनीति की गुणावस्था तथा सरकार के साधारण गुणों से सम्बंधित है। मात्रा की दृष्टि से हमें इस तत्व को आबादी के मापदण्ड से परखना चाहिये। जब तक उत्पादन और युद्ध के लिये मनुष्यों की आवश्यकता होगी, तब तक यदि अन्य तत्त्व समान रहे तो जिस राज्य के पास इन दो कार्यों के लिये बड़ी संख्या में लोग होगें, वह सबसे अधिक सार्मथ्यवान होगा।

मुसोलनी ने इटली से आबादी बढ़ाने का आग्रह करते हुये कहा था "बात साफ–साफ सोचना ही ठीक होगा। नौ करोड़ जर्मनों और बीस करोड़ स्लावों के सामने चार करोड़ इटालियनों की क्या हस्ती है।[41] यह कहना तो सही नही होगा कि जितनी अधिक किसी देश की आबादी होती है। उतना ही शक्तिशाली वह देश हो जाता है, क्योकि यदि आबादी के आकड़ों व राष्ट्रीय शक्ति में ऐसा सम्बंध होता तो विश्व में सबसे अधिक आबादी से चीन विश्व में सबसे शक्तिशाली देश होता और भारत दूसरे नम्बर पर होता। संयुक्त राज्य अमेरिका तीसरा और रूस चौथे नम्बर पर होता। किन्तु यह सोचना विल्कुल सही नही होगा कि यदि एक देश की आबादी अन्य तमाम देशों की तुलना में अधिक है तो वह देश आवश्यकता वश उनकी तुलना में अधिक शक्तिशाली होगा ही। परन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि कोई भी ऐसा देश न तो प्रथम श्रेणी का शक्तिशाली देश बन सकता और न बनने पर रह ही सकता है जो संसार की घनी आबादी वाले देशों में से एक नही है।

घनी आबादी के बिना यह असम्भव है कि आधुनिक युद्धों को सफलता पूर्वक संचालित करने के लिये आवश्यक औद्योगिक कारखाने निर्मित तथा संचालित किये जा सके और न ही सम्भव है कि बड़ी संख्या में लड़ने वाली सिपाहियों की टुकड़ियाँ स्थल, जल तथा वायु में लड़ने के लिए प्रस्तुत की जाय और न ही फौज के अन्य कर्मचारी हांसिल किये जा सकते हैं। जिनकी संख्या लड़ाकू सिपाहियों की तुलना में

अधिक होती है जो लड़ाकुओं को रसद, यातायात के साधन, पत्र सन्देश अस्त्र तथा गोला बारूद, इत्यादि पहुँचाते हैं। जहां अधिक जनसंख्या राष्ट्र की शक्ति की अभिवृद्धि में सहायक होती है वह एक अर्थ में राष्ट्रीय शक्ति के विकास में बाधाऐं भी उपस्थित करती हैं। अधिक जनसंख्या के पोषण के लिए यदि राष्ट्र सक्षम नही है तो वह जनसंख्या उसके लिये विभिन्न समस्याओं का अम्बार खड़ा कर देती। बड़ी जनसंख्या वाले देश में एक बड़ी समस्या राष्ट्रीय एकता की होती है और वहां बहुत से लोंगो को जीवित रखने के लिये एक बड़ी मात्रा में खाद्यान्न की आवश्यकता होती है। भारत की विशाल जनसंख्या के सामने जिस प्रकार **अन्न** संकट हमेशा मुंह बाए रहता है वह एक सोंचनीय स्थिति है। कभी–कभी अधिक जनसंख्या बसाने के लिये राज्य अपने क्षेत्र का विस्तार करने को बाध्य होते हैं जिससे साम्राज्यवादी विदेशनीति का प्रादुर्भाव होता है जो अन्ततोंगत्वा विश्व शान्ति के प्रतिकूल ही है। जर्मनी की विस्तारवादी आकांक्षा के मूल में बड़ा कारण जर्मनी की बढ़ती हुई है जनसंख्या का था। भारत पर 1962 में चीन द्वारा आक्रमण के मूल में भी चीन की जनसंख्या वृद्धि थी। किंग्सल डेविस के विचार में निर्धन देशों की जनसंख्या सबसे अधिक बढ़ रही है तथा निकट भविष्य में सबसे अधिक जनसंख्या और सबसे कम संसाधन होने कारण ये देश क्रान्तिकारी नीतियां अपनाने को बाध्य होंगे।[42]

जनसंख्या की अधिकता से न तो शक्तिशाली सेना की गारन्टी हो सकती है और न उच्चकोटि के औद्योगीकरण की। यथार्थ में ये दोनों ही लाभ राष्ट्रीय शक्ति के अन्य कारणों पर निर्भर करते हैं; विशेष रूप से इस बात पर किसी राष्ट्र ने कितना औद्योगिक विस्तार किया है और अपनी सैनिक शक्ति एवं उत्पादन तंत्र को किस सीमा तक आधुनिक स्वरूप प्रदान किया है। विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति के प्रयोग ने पुराने तौर तरीकों पर नूतन तौर तरीकों की बहार ला दिया है। बीते डेढ़ दो दशकों में देश में शहरीकरण की प्रवृत्ति बढ़ी है। शहरीकरण के साथ–साथ ग्रामीण इलाकों से लोगों का शहर की ओर पलायन भी बना हुआ है। यह वजह है कि पिछले एक दो दशक में शहरी आबादी में 32 फीसदी का इजाफा हुआ है, ग्रामीण आबादी की

वृद्धि से लगभग दो गुना, अनुमान है कि करीब तीस करोड़ लोग भारत के शहरों में रह रहे हैं। साथ ही भारत की कुल शहरी आबादी का 30 प्रतिशत यानि 10 करोड़ लोग गरीब है, जो यूएन हैविटेट के अनुसार वर्ष 2020 तक 20 करोड़ हो जायेगे। शहरों में एक वर्ग के लिये जहां तमाम सुख–सुविधायें हैं, रोजगार है शिक्षा के बढ़ते अवसर है वही दूसरी ओर गंदगी से बजबजाते नाले से सटी गरीबों की झोपड़–पट्टियाँ भी हैं जिनके वाशिंदे 18 से 20 घंटे तक हाड़तोड़ काम करने के बाद भी परिवार के लिये पर्याप्त भोजन नही जुटा पाते। शहरों में रहते हुये भी यह गरीब तबका मूलभूत सभी सुविधाओं से सर्वथा वंचित है। अरबन हेल्थ रिर्सोस सेंटर के आकड़ों के अनुसार शहरों में ही नही, बल्कि महानगरों में भी सरकार बेहतर स्वास्थ्य योजानायें मुहैया नही करा पा रही। शहरी गरीबों को बेहतर स्वस्थ और खुला वातावरण भी नसीब नही होता। सच की एक झांकी यह है दिल्ली की झुग्गी बस्तियों में 65 प्रतिशत लोग अस्वथ्य है। दिल्ली कोलकाता, चेन्नई की शहरी झुग्गी बस्तियों में लगभग 42 प्रतिशत बच्चे औसत से कम वजन के हैं। प्रतिवर्ष कुपोषण की वजह से 2 लाख बच्चों की मृत्यु हो जाती है।

जनसंख्या वृद्धि एवं शहरीकरण की प्रवृत्ति ने लोगों के मन में विकास हेतु भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया है। पहले लोग नैतिक आधार पर सूखी रोटी खाकर संतोष से जी लेते थे। किन्तु आज लोग अनैतिक तरीके से आधुनिक सुख सुविधाओं के एकत्र करने में प्रतिस्पर्धात्मक तरीके से जुटे हुये हैं और समाज से उसे विकास की मान्यता प्राप्त है। फलतः हमारी नैतिकता प्रभावित हो रही है। आज लोगों में धन चाहे जिस प्रकार से मिले। राष्ट्रहित राष्ट्र भावना के स्थान पर स्वयं का हित एवं स्वाभाविक बलवती होती जा रही है। अब सेना में भर्ती होने वाले सैनिकों में राष्ट्र सेवा, देश सेवा के स्थान पर धन अर्जित कर स्वसेवा करने की प्रधान भावना है। फलतः वहां पर भी किसी भी अनैतिक तरीके के प्रयोग करने में थोड़ा सा भी संकोच नही रखते हैं। इससे सेना की नैतिक गुणवत्ता प्रभावित हुई है।

सैनिक नेतृत्व का गिरतास्तर एवं उसका सैनिकों पर प्रभाव-

किसी सेना पर उसके सेनापति के व्यक्तित्व का कितना प्रभाव पड़ता है यह मार्लबारों के द्वारा विशालमित्र सेना के नेतृत्व से ज्ञात होता है। इस सेना के बहुसंख्यक जर्मन सैनिकों द्वारा विद्रोह करने पर उन्हे जर्मनी में जाकर वापस लाना मार्लबरों के श्रेष्ठ सेनापतित्त्व का उदाहरण है। मार्लबरों के अन्दर सम्पूर्ण सैनिक प्रतिभा थी। मित्रसंघीय सेनाओं का योग्य कमाण्डर होने के अतिरिक्त, राजनीतिक बुद्धि और राजनयिक क्षमता भी थी । सैन्य संगठन तथा प्रशासन की अद्भुत शक्ति तथा योग्यता थी। वह अपने सैनिकों के कल्याण तथा मनोबल का बड़ा ध्यान रखता था। अकारण वह एक भी सैनिक की जान नही गंवाना चाहता था।[43] सेना की शक्ति का एक महत्त्वपूर्ण तत्व नेतृत्व है। नेतृत्व में ही सैन्य शक्ति के अन्य सभी आधार उचित दिशा निर्देशन पाते हैं। नेतृत्व शक्ति के अन्य तत्वों के विकास तथा अनुशीलन की प्रेरणा देता है। नेतृत्व अकेला भी कभी कभी इतना प्रभावशाली होता है कि वह शक्ति का एक स्वतंत्र तत्व बन जाता है। अंग्रेज सेनापति नवाब बेलिगिंटन, आर्थरबेलेजली तथा जर्मन सेनापति मार्शल ब्लूसर के अनुसार **"अकेले नैपोलियन का लड़ाई के मैदान में उपस्थित होना ही 40000 सैनिकों के बराबर है।"**[44] इसीलिये बिग्रेडियर जनरल हिटिल ने नेपोलियन को युद्ध का देवता कहा है। सेनापति यदि योग्य है तो उसकी सेना भी योग्य होगी। वर्तमान सैन्य संगठन में सेनानायकों की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण हो गई है। सेनानायकों के व्यक्तित्व की छाप सैनिकों के कार्य व्यवहार से स्पष्ट होती है– वर्तमान परिस्थितियों में सेना के जवान अनुशासनहीन होकर अपने अधिकारियों एवं साथियों तथा खुद को गोलियां से छलनी कर रहे हैं। थल सेनाध्यक्ष जनरल जे0जे0 सिंह के अनुसार पिछले चार बरस में जवानों द्वारा आत्माहत्या अथवा अपने साथियों के खून खराबे के चार सौ मामले प्रकाश में आ चुके हैं।[45] ब्रिटिश शासन काल में भी जवानों ने विद्रोह किया जहां का सैन्य नेतृत्व सैनिकों के प्रति उदासीन रवैया अपनाता रहा, सैनिकों को प्रताड़ित करता रहा एवं उनकी धार्मिक भावनाओं एवं आत्मसम्मान को कुचलता रहा तथा भेदभाव की नीति

अपनाई। जो एक सेनानायक के महान अवगुण हैं। फलस्वरूप 1857 का सैनिक विद्रोह एक प्रकार से सैनिक नेतृत्व के गिरते स्तर के कारण ही हुआ। अट्ठारहवीं शताब्दी के उत्तराद्ध में नैपोलियन के काल में फ्रेड्रिक नेल्सन, तथा वाशिंगटन आदि प्रसिद्ध सेनापति और सैन्य विशेषज्ञ थे। उन्नीसवीं शताब्दी में नैपोलियन के समकालीन सेनापति इग्लैंड में आर्थर बेलेजली (नवाब बेलिंगटन) तथा जानमूर, प्रशा में ब्लूसर आस्ट्रिया का आर्कडयूक चार्ल्स तथा फ्रान्स में मार्शल ने, तथा वार्थियर और भारत वर्ष में उसी समय दक्षिण में मराठा पेशवा तथा उत्तर में महाराजा रणजीत सिंह आदि सेनानायक थे। दूपी के अनुसार "अपने युग पर अपने व्यक्तित्व की अमिट छाप नैपोलियन से बढ़कर किसी अन्य ने नही छोड़ी।"[46]

नैपोलियन अपने सैनिकों के ह्रदय में बसता था, उसका कथन था कि सेना पेट के बल चलती है। अर्थात सैनिक की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति भौतिकवादी युग में महत्त्वाकांक्षायें इतनी बढ़ी हुई है भ्रष्टाचारी नेतृत्व में नैतिकता का कोई स्थान नही है। नैतिकता ही है, जो सैनिकों तथा सेनाधिकारियों के बीच की कड़ी का काम करती है। बहुत से सैन्य अधिकारी भ्रष्टाचार में लिप्त पाये गये जैसे सेना का खाद्यान्न घोटाला, रक्षा सौदों में घोटाला, गुप्त सूचनायें बेंचकर कर पैसा कमाना, पदोन्नति के लिये अनैतिक कार्य करना इसके अतिरिक्त अधीनस्थ एवं वरिष्ठ अधिकारी में आपसी मतभेद बढ़ना, सैनिक नेतृत्व के गिरते स्तर का प्रमाण है। सेना में वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा जो शोषण की प्रवृत्ति बढ़ी है, जिससे अधीनस्थ महिला अधिकारी आत्महत्यायें कर रही हैं क्योकि वरिष्ठ अधिकारियों के पास कोर्ट मार्सल जैसे अधिकार सुरक्षित है। महिला सैन्य कर्मियों ने अपने पदों से त्यागपत्र दे रही हैं। सेना में कैप्टन के पद पर कार्यरत महिला सैन्य अधिकारी ने अपने कमाण्डिग अफसर पर यौन उत्पीड़न का आरोप लगाया, यह महिला सैन्य अधिकारी इस समय जम्मू स्थिति सेना की 16 वीं कोर में कार्यरत है।[47] वरिष्ठ अधिकारी शोषण करने के बाद खुद को सुरक्षित रखने के लिये अपने अधिकारों का प्रयोग करते हैं। अंजलिगुप्ता एक युवा फ्लाइंग अधिकारी है जो अपने तीन वरिष्ठ अधिकारियों पर यौन उत्पीड़न का

आरोप लगाया है। इसका विपरीत पहलू अंजलि पर वित्तीय अनियमितता, अनुशासनहीनता, एवं आज्ञा उल्लंघन के गम्भीर आरोप लगाये गये।[48] यह कितना सच है जांच के बाद ही स्पष्ट होगा, लेकिन इससे यह बात सिद्ध हो जाती है। कि सैन्य नेतृत्व का चारित्रिक क्षरण हो रहा है। सैनिकों के साथ तो और बुरा वर्ताव होता है भ्रष्टाचारी अधिकारी सैनिकों का शारीरिक एवं मानसिक शोषण करते हैं। जिससे सैनिक तनाव में रहने लगे हैं। सेना के जवानों में मायूसी बढ़ रही है। सैनिकों को हर समय अनुशासन में रहना पड़ता है। विपरीत परिस्थितियों में रहने के बावजूद भी सैन्य अधिकारियों के तानाशाही को बर्दाश्त करना पड़ता है। तनाव के चलते यदि वे अधिकारियों के साथ बद्तमीजी कर दे तो कोर्ट मार्शल के चंगुल में फंस जाते हैं। कई बार वे उसकी सजा भी पाते हैं जिसके हकदार वे होते ही नही है। फलस्वरूप सेना के जवान आत्मनियंत्रण खोते जा रहे हैं। पूर्व थल सेनाध्यक्ष वी0पी0 मलिक इस बात को स्वीकार किया कि जवानों एवं जूनियर अधिकारियों के बीच ठीक ढंग से संवाद नही हो पा रहा है।[49]

सैनिक भी अपने भ्रष्टाचारी नेतृत्व कर्ताओं के पद चिन्हों पर चलते हुये धन कमाने में संलिप्त हो रहे हैं। सेना की सिगनल यूनिट में तैनात रितेश कुमार व आर्मी ग्रुप इश्योरेंश में हवलदार अनिलकुमार को सेना से जुड़ी तमाम जानकारियाँ कराने के मामले में पाकिस्तानी खुफियाँ एजेंसी दिल्ली पुलिस ने गिरप्तार कर लिया है रितेश सैन्य सूचनाये देनेके लिए नेपाल जा रहा था और अनिल सेना की गोपनीय जानकारी पाक उच्चायोग कर्मी फारूक को दे रहा था।[50] यह घटना भारतीय सेना निगरानी तंत्र के लिये एक बड़ी चुनौती है और उसकी कमजोरी व असफलता को उजागर करती है। देश की रक्षा से जुड़ी संवेदनशील एवं बेहद महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ व दस्तावेज विरोधियों के हाँथ लगना खतरनाक एवं गम्भीर ही नही शर्मनाक भी है। सेना में जासूसों का पकड़ा जाना इस बात का प्रमाण है कि हमारी सैन्य व्यवस्था में कहीं न कहीं कमियाँ हैं। नौसेना के वाररूम से सैन्य सूचनाओं के लीक होने के बाद अब थल सेना में जासूसी के जरिये गोपनीय सैन्य सूचनाओं का बाहर जाना चिंताजनक

समस्या है। मिलिट्री इंटेलीजेन्स ने थल सेना की नौवीं कोर के जम्मू कश्मीर लाइट इंन्फेन्ट्री के तीन जवानों को पकड़ा था। पकड़े जाने से पहले ये तीनों अनेक सैनिक योजनाओं व प्रशासनिक तैयारियों को आई0एस0आई0 के पास भेज चुके थे।[51] थल सेना की चौथी कोर के तेजपुर मुख्यालय में तैनात एक कर्नल के खिलाफ मार्च 2006 से कार्यवाई चल रही है। जब वे वहां तैनात थे तो सैन्य अभियान के महत्वपूर्ण दस्तावेज वहां से निकल गये थे। उस समय उनके कार्यलय में क्लर्क के तौर पर तैनात लॉसनायक जावेद खान को चीनी सीमा पर सैन्य अभियानों से जुड़े महत्त्वपूर्ण दस्तावेज देते हुये पकड़ा गया था।[52] सैनिकों द्वारा अपनी सेना की गुप्त एवं महत्त्वपूर्ण सूचनायें मात्र पैसे के लिये दुश्मन जासूसों के हांथ वेंच देना निकृष्टतम चरित्र का उदाहरण है। तथा इसमें सैन्य नेतृत्व का गिरता स्तर का कारण भी है। सेनापतियों एवं सैनिकों में राष्ट्रप्रेम की भावना को जाग्रत करने के लिये उनमें उच्चनैतिक स्तर लाना होगा तथा सैन्य अधिकारियों एवं सैनिकों के बीच मित्रवत व्यवहार होना चाहिए, आपस में विस्वास हो प्रत्येक के सुख–दुख में सहभागिता होनी चाहिए तथा सैन्य अधिकारियों को चरित्रवान होना चाहिए। इस तरह हमारी सशस्त्र सेनाओं के नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों को बचाया जा सकता है।

सन्दर्भ

1. *India tuday, 15-08-1987 P. -83*

2. *Ibid.. P. -83.*

3. *Ibid P. -86*

4. *The Indian express, 12-08-1988 P. -8*

5. *Ibid..P. -8*

6. *India tuday, 15.11.1987 P. -49*

7. भारत सरकार विदेश मंत्रलाय, वार्षिक रिपोर्ट 1993–94, पृष्ठ–.5

8. *Mainstream-27 Octber 1990 P. -75*

9. *Ibid.. P. -29.*

10. *prabhat kumar singh.. Science and Technology in India. comptetion spectrem 2004 Allahabad, P.-113*

11. *Ibid.. P. -117.*

12. *Ibid.. P. -118.*

13. *B-L-fadia.. International politss, Sahitya bhwan Agara. P.-397*

14. भारत सरकार विदेश मंत्रलाय वार्षिक रिपोर्ट 1993.94, पृष्ठ 2

15. *Fadia – OP-cit, P. -397*

16. *Ibid – P. -391*

17. *Ibid – P. -391*

18. *Ibid – P. -392*

19. *Ibid..P. -396.*

20. *Fadia – OP-cit .. P-377*

21. डॉ0 विमला प्रसाद, इण्डिया सोवियत रिलेशन्स, पृष्ठ – 518

22. *India tuday 15-08-1987 P. -83*

23. *Ibid.. P. -86*

24. *Ibid .. P. -86*

25. *The Indian Express 12.08.1988 P. -8*

26. *Ibid .. P. -28*

27. *India tuday 15.11.1987 P. -49*

28. भारत सरकार विदेश मंत्रलाय वार्षिक रिपोर्ट, 1993.94 पृष्ठ–5

29. सुखदेव प्रसाद, भारत व शेष नाभिकीय विश्व, साहित्य भण्डार इलाबाद 2002 पृ0–7

30. *Ibid.. P. -7*

31. *Ibid.. P. -7*

32. *Raja Rai singh.. Eguketonal for the twenty first Ashiypaesifik parspecitals. Unesko Rejanal ofice Bankak-1991 P. -127*

33. जे0एस0 राजपूत,, रिपोर्ट पैटकांन्फ्रेन्स भाग–2 एण्ड होवन युनिवर्सिटी आफ टेक्नोलॉजी नीदरलैण्ड 1987 पृष्ठ –127

34. जे0एन0 नन्दा,, साइन्स एण्ड टेक्नोलॉजी इन इण्डियाज ट्रान्सफारमेशन, कानसेप्ट पब्लिसिंग नई दिल्ली – 1986 पृष्ठ –98

35. *Raja rai op-cit ..P. -130*

नाग चौधरी,, बी0डी0 एण्ड सोसाइटी, अंकुर पब्लिकेशन हाउस नई दिल्ली–1977–पृष्ठ –137

. साइंस टेक्नोलॉजी एण्ड सोसाइटी इन साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी एजूकेशन एण्ड नेशनल डेबलपमेन्ट, युनेस्को 1983, पृष्ठ –15–24

Prabhat op-cit P. -123

Ibid.. P. -128

0. कुरूक्षेत्र,, वर्ष 53 अंक.9, जुलाई 2007, पृष्ठ –2

1. *Quated by David V. Vitas, the struggle for populstion (oxford-1935), P-34*

2. *Olsem and sandermann, the thery and practice of International relation, P.-151-152*

13. डॉ0 योगेन्द्र कुमार शर्मा,, सैन्य विचारक, अलका प्रकाशन पाण्डुनगर कानपु 1998 पृष्ठ सं0–110

14. डॉ0 लल्लन जी सिंह,, आधुनिक सैन्य विचारक, प्रकाश बुक डिपो बरेली, पृष्ठ संख्या.132

15. हिन्दुस्तान, 6 नवम्बर 2006

16. *Sharma op-cit ..P. -89.*

47. *Danik jagaran 20.05.2006*

48. *Amar ujala 03.05.2006*

49. हिन्दुस्तान, 03.11.2006

50. *Danik jagaran 08.11.2006*

51. *Danik jagaran 08.11.2006*

52. *Danik jagaran 08.11.2006*

पंचम अध्याय

सैनिकों के गिरते हुये नैतिक एवं व्यावसायिक स्तर के कारण

महत्त्वाकाँक्षा– (सैनिकों के महत्त्वाकाँक्षी प्रवृत्ति के मूल कारण)

प्रज्ञावान मनुष्य अनवरत विकास के लिये प्रयत्नशील रहता है। पुरा–पाषाणकाल से ही उसमें उत्तरोत्तर विकास होता रहा स्थाई जीवन की स्थापना से नव–पाषाणकाल में मानव का सामूहिक सह–अस्तित्व का सिद्धान्त उन्नत हुआ। इसी परिदृष्य में सामाजिक नियम, सुरक्षा की समस्या, कार्य विभाजन जैसी सुव्यवस्था सुनिश्चित हुई। भौतिक विकास क्रम ने सारे समाज को अनवरत संघर्ष करने तथा आगे बढ़ने के लिये प्रेरित किया है। इस क्रम में सैनिक एक महत्त्वपूर्ण कड़ी के रूप में सम्मिलित रहे हैं।

इतिहास का समग्र अवलोकन करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि भौतिकता के विकास से अनैतिक वृत्तियाँ तेजी से बढ़ी हैं। ऐसे में समाज का नेतृत्व करने वाले महापुरूषों का आगमन तथा कानून की रचना व्यावहारिक हुयी और अनुशासन को लेकर प्रतिवृद्धताएँ बढ़ी हैं। वर्तमान बाजारवाद के विकास के माध्यम से महत्त्वाकाँक्षी प्रवृत्तियों में वृद्धि हुयी है। बाजारवाद का अनवरत प्रगति करना है ऐसे में जो वर्ग इसके साथ जुड़े वे आगे बढ़े और जो नहीं जुड़े वे शोषित होते गये। महत्त्वाकाँक्षी लोगों ने अपने विकास के लिये जो मार्ग अपनाया उनमें प्रथम मार्ग उपनिवेशवाद द्वितीय व्यापारवाद तथा 1991 के उपरान्त भूमण्डलीकरण की नीति लागू हुई है। बाजारवाद ने व्यक्ति, समाज, देश सभी को प्रतिस्पर्धी बना दिया। संसाधनों के दोहन के प्रति तीव्र रूझान बढ़ा पूंजीवाद ने सुरक्षा प्राप्त करने के लिये अनवरत संघर्ष की प्रेरणा दी। बाजारवाद वस्तुतः पूंजीवादी विचारधारा के विकास का प्रतिरूप है। इसके अन्तर्गत जनमानस को उत्पादों को खरीदने के लिये क्रियाशील करना, लोगों में क्रयशक्ति का विकास करना और बाहरी रूप में कल्याण की अवधारणा निहित होती है। यह प्रक्रिया कहीं न कहीं समाज का संरक्षण करती है क्योंकि व्यक्ति महत्त्वाकाँक्षी बनकर बहुत कुछ प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील हो जाता है। ऐसे में उसके मूल्य प्रभावित होते हैं। लेकिन समस्या यह है कि सामाजिक ताना–बाना ऐसा करने के

लिये बाध्य करता है। उपभोक्तावाद से व्यक्ति परिवार की जिज्ञासाओं की पूर्ति के लिये विवस हो जाता है। बच्चे का भविष्य, घर की सुविधायें, स्वयं के भविष्य की सुरक्षा, संयुक्त परिवार के बिखराव में सभी उसे मानसिक रूप से अत्यन्त कमजोर कर देते हैं। ऐसे में वह सीमित संसाधनों में वर्तमान व भविष्य की नौका में हिलोरें लेता रहता है। ऐसी परिस्थिति में सैनिकों को खुद पर नियंत्रण रख पाना बहुत कठिन हो जाता है।[1]

उन्नीसवीं शताब्दी की भौतिकता ने व्यक्ति को महत्त्वाकाँक्षी बनाना आरम्भ कर दिया था। यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति ने सामाजिक परिवर्तन को प्रभावित किया। इंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी, आस्ट्रिया व अन्य देशों का औद्योगिक विकास हुआ तो वहाँ भी ये प्रक्रिया प्रभावी हुई। औद्योगिक विकास ने एक न खत्म होने वाली प्रतिस्पर्धा को व्यापक बना दिया। किन्तु इस बाजारवाद के प्रतिस्पर्धी समाज में अर्न्तदोश भी होते हैं। जैसे उद्योगों के लिये श्रमिकों की भर्ती एवं संसाधन जुटाये जाते हैं लेकिन यदि बाजार न मिला तो इसके भयावह परिणाम होता हैं। क्योंकि बाजार पर ही उत्पादन और विकास निर्भर हैं। इसी पूंजीवाद ने यूरोप को विश्वयुद्ध में घसीट लिया था। वस्तुतः विश्वयुद्ध बाजार के लिये ही था। जर्मनी, इटली, जापान की आर्थिक आवश्यकतायें पूरी हो जाती, तो उनके द्वारा नाजीवाद, फाँसीवाद एवं साम्राज्यवाद का विकास न किया जाता। 1929 ई0 से 1934 ई0 तक विश्व आर्थिक मंदी ने पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था को अत्यन्त निराशा में बदल दिया था। इससे यूरोप का बैंकिंग व्यवसाय नष्ट हो गया। इसमें बेरोजगारी बढ़ी और अपने आर्थिक हितों के लिये सैन्य संघर्ष बढ़ने लगा। अमेरिका के सकल घरेलू उत्पाद में 34% की गिरावट हुई। महामंदी के इस दौर ने यूरोपीय देशों को लगभग दिवालिया कर दिया। महामंदी का मूलकारण बाजार का न बढ़ना किन्तु क्रयशक्ति के कम होने के कारण थे। इसलिये महत्त्वाकाँक्षी विकास एवं पतन को नियोजित करने के लिये चिंतन की पहल आरम्भ हुयी। अमेरिकी अर्थशास्त्री जानमेनार कीन्स ने अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किये "मजदूरी की कीमत कम करके बेरोजगारी कम नहीं हो सकती, बेरोजगारी को

उत्पादन बढ़ाकर हटाया जा सकता है, और उत्पादन को बाजार में व्यापक करना होगा। इसलिये लोगों में क्रयशक्ति बढ़ानी होगी।" कीन्स की विचारधारा से पूंजीवाद की एक नयी विचारधारा उत्पन्न हुई, जिसे हम परोपकारी पूंजीवाद कहते हैं। जिसे विश्व पूंजीवाद को नियंत्रित करने के लिये विश्वबैंक की स्थापना की गयी। कीन्स की पुस्तक "जनरल एन्थोरी इनस्ट्रेट मनी" 'स्थिर पूंजीवाद के विकास का सिद्धान्त' प्रतिपादित किया। जिसके आधार पर अमेरिकी राष्ट्रपति रूजबेल्ट ने "न्यूडील्ड प्रोग्राम" बनाया। जिसके दो महत्त्वपूर्ण बिन्दु व्यापार को बढ़ाना एवं कृषि को समृद्ध करना था। इसके लिये सब्सडी दी गई और कामगार को बेहतर सुविधायें दी गई। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये पूंजीपतियों पर भारी भरकम कर लगाया गया। लोगों को रोजगार, सुरक्षा बीमा, वेतन एवं सामाजिक सुरक्षा दी गयी। कहने का आशय है कि बाजारवादी प्रवृत्तियों के सामाजिक होने से महत्त्वाकाँक्षाओं का विकास होता है। किन्तु महत्त्वाकाँक्षायें अनियंत्रित न हो इसका भी प्रयास किया जाना चाहिये। सामन्तीयुग में राजा के दैविक सिद्धान्त समाज पर वर्चश्व के कारण कभी भी जनमानस निर्धारित मापदण्डों का उल्लंघन नहीं कर सका था। परिवार उपजाति, एवं जाति केन्द्रित, सामाजिक, आर्थिक संरचना ने उसकी उड़ान को नियंत्रित कर दिया था। किन्तु प्रजातांत्रिक समाज में पूर्व के मापदण्ड नहीं रह गये हैं। समानता एवं समता के सिद्धान्त से जनमानस एक नये बोध से जिसमें बौद्धिक स्वतंत्रता एवं सब कुछ प्राप्त कर लेने की अभिलाषा है किन्तु समस्या यह है कि हमारा देश सरकारी सेवाओं कारपोरेट जगत सदृश्य नहीं कर सकता वेतन आदि सुविधायें भी विकसित राष्ट्र जैसी नहीं हो सकती। इसलिये महत्त्वाकाँक्षा तो बढ़ती है किन्तु उसे प्राप्त कर पाने का प्रयत्न सार्थक नहीं हो पाता। ऐसी परिस्थिति का विस्तारवादी तथा महत्त्वाकाँक्षी राष्ट्र अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये ऐसे महत्त्वाकांक्षी सैनिकों से लाभ उठाने का प्रयास करते हैं। जैसे चीन की महत्त्वाकांक्षा एक महाशक्ति बनने की है और दक्षिण एशिया में भारत की शक्ति को सन्तुलित करना चाहता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उसने दो तरफा रणनीति बना रखी है। भारत के दो मोर्चों पर युद्ध की सम्भावना से इसकी शक्ति को नियंत्रित करना, भारत के विरूद्ध

पाकिस्तान को विश्वसनीय परमाणु निवारण प्रदान कर पाकिस्तान की सुरक्षा को मजबूत करना तथा भारत के सैन्याधिकारियों को धन देकर अपने पक्ष में करना जिसमें पाक खुफिया (आई0एस0आई0) सक्रिय हैं। दक्षिण एशिया में उलझा देना है ताकि भारत विश्वस्तर पर या क्षेत्रीय स्तर पर चीन से प्रतिद्वन्दिता न कर सके।[2]

भौतिकता की चकाचौंध में हमारे सेनानायकों तथा सैनिकों के अन्दर एक अजीब सा परिवर्तन होता जा रहा है वे एक दूसरे को अपने पद ऐश्वर्य और रूतबे से पीछे करने की होड़ में रत जैसे हो गये हैं उन्होंने भ्रातृत्व भावना, परस्पर प्रेम, सौहार्द जैसी नैतिकता को दाँव में लगाकर अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति में लगे हैं। वे राष्ट्रद्रोह जैसी गतिविधियों में संलग्न हो रहें हैं। अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति न होने से मानसिक उदिग्नता के शिकार होकर अपने साथियों तथा अधिकारियों की हत्यायें तक करने से नहीं चूक रहे हैं। इस प्रकार की स्थिति सेना तथा राष्ट्र दोनों के लिये घातक होती जा रही है। अतः ऐसी महत्त्वाकांक्षाओं को नैतिक आधार से युक्त सुन्दर दिशा देने की आवश्यकता है जिससे सेना को शक्तिशाली, अनुशासित, राष्ट्रभक्त बनाया जा सकता है। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने स्वीकार किया था कि धर्मनिर्पेक्षता का यह दृष्टिकोंण देश में एकता, भ्रातृत्व सहज एवं स्वस्थ विकास शान्ति, सौहार्द एवं समरसता की महत्त्वपूर्ण कसौटी बन सकता है।[3]

किसी सैनिक में जब तक त्याग की भावना नहीं उत्पन्न होती तब तक चाहे वह जितनी अच्छी सुविधा का उपभोग करता रहे, उससे सन्तुष्ट व परिपूर्ण नहीं होता है। किन्तु त्याग की भावना आते ही विपन्नता दूर होकर नवीन चेतना एवं उच्च मनोबल का विकास होने लगता है। संसार के पदार्थ भोग की इच्छा समाप्त होने लगती है तथा महत्त्वाकांक्षा की दिशा राष्ट्र कल्याण की ओर उन्मुख हो जाती है। जिससे सेना का प्रत्येक सिपाही राष्ट्र की सुरक्षा तथा राष्ट्रहित को ही सर्वोपरि समझेगा।

भविष्य के प्रति जागरूकता एवं स्वयं के जीवन विकास का वृत्त-

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी हैं। समाज के अतिरिक्त अन्य किसी संगठन में अपने अस्तित्व की परिकल्पना नहीं कर सकता है। हांलाकि समाज का ताना–बाना भौगोलिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में निर्धारित होता है। समाज के विभिन्नवर्ग अपनी योग्यता एवं कार्यक्षमता के अन्तर्गत अपने व्यवसाय का चयन करते हैं। यह अवधारणा ही मानव की सामाजिक उपादेयता सिद्ध करती है। समाज में अपनी स्थिति की परिकल्पना एवं मूर्त करने की अभिलाषायें शिक्षा के द्वारा निर्धारित होती है। सामाजिक एवं मानसिक रूप से सुदृढ़ लोग ही सैन्य एवं प्रशासनिक सेवा हेतु उपयुक्त होते हैं। प्राचीन काल से सैन्य सेवा जनमानस को आकर्षित करती रही है। सामन्तीयुग में सैनिकों को विशेषाधिकार प्राप्त होते थे। सैनिकों को बेहतर सुविधायें मिलती थीं। विभिन्न अभियानों के दौरान लूट का अधिकार तक दिया जाता था। मध्ययुग में सैनिकों का शिक्षित होना भी आवश्यक नहीं था। उनकी शिक्षा सैन्य अभियानों के अनुरूप हथियारों का उपयोग एवं व्यूह रचना करने आदि से सम्बद्ध होती थी। विश्वविद्यालय शिक्षा एवं अन्य शिक्षा से सरोकार नहीं था। मध्ययुग में पेशेवर सैनिकों की एक बड़ी जमात थी जिन्हें नियमित वेतन नहीं मिलता था, किन्तु अभियानों के दौरान लूट का अधिकार प्राप्त था इससे उनकी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जाती थी। मुगलों द्वारा नियमित सैन्य संगठन की परम्परा आरम्भ की गई। मनसबदारी प्रथा में सम्मिलित हुये बिना मुगल प्रशासन में कोई पद प्राप्त करना सम्भव नहीं था। मुगलों के द्वारा मनसबदारी सेवा के तीन संवर्ग: बनाये गये थे। अमीर उमदा, अमीर एवं मनसबदार इनके अन्तर्गत 66 प्रकार की मनसबदारी आवंटित की जाती थी। महत्त्वपूर्ण यह था कि मनसबदारों के अधीन सैनिकों की भर्ती, प्रशिक्षण, वेतन, रशद आदि की व्यवस्था की जिम्मेदारी होती थी। यह व्यवस्था समय–समय पर परिवर्तित होती रही। ब्रिटिश सत्ता के भारत में स्थापित होने के उपरान्त यूरोपीय सैन्य विचारधारा का अस्तित्व स्थापित हुआ। शासन क्षेत्र के विस्तार के कारण सैन्य सेवा की चुनौतियों में भी व्यापकता आयी। इसके

अन्तर्गत केवल शारीरिक रूप से दृढ़ एवं हथियार चलाने में पारंगत एवं सैनिकों के अनुशासन मानसिक दृढ़ता एवं निर्णय लेने की क्षमता, राज्य की समझ, जैसी नवीन आवश्यकतायें उभर कर सामने आईं। 16वीं शताब्दी से ही यूरोप में सैन्य प्रशिक्षण विद्यालय में प्रारम्भ हो गये। इग्लैण्ड की रायल मिलिट्री एकेड़मी, फ्रांस में नील्से एकेड़मी, इनमें नयी सैन्य आवश्यकताओं के लिये स्थापित हुई। इसी कारण भारत सहित अनेक देशों में अंग्रेजों का वर्चस्व स्थापित होने लगा।

भारत में ब्रिटिश शासन के बाद सैन्य प्रशिक्षण के कार्यक्रम संचालित किये गये। 1740 ई0 में फ्रांसीसियों द्वारा कर्नाटक विजय के उपरान्त मैसूर मराठ़ा तथा अन्य राज्यों ने भी यूरोपीय पद्धति पर प्रशिक्षण चलाने प्रारम्भ कर दिये। इनमें सबसे अग्रणी मैसूर राज्य था। इसके द्वारा सैन्य प्रशिक्षण नौसेना विस्तार एवं हथियारों का उत्पादन आधुनिक मापदण्डों के अनुसार प्रारम्भ किया गया। वहां पर बनाई जाने वाली तोपें सर्वश्रेष्ठ किस्म की थी। टीपू सुल्तान ने दो पिस्तौले फ्रांस के शासक लुई को भेंट की थी। भारत में ब्रिटिश पद्धति से सेना का निर्माण भारतीय रियासतों के टूटने पर बेरोजगार हुये सैनिकों के द्वारा हुआ। रियासतों के स्थान पर कम्पनी की सेनायें निर्मित होने लगीं। कम्पनी के द्वारा नियमित वेतन दिया जाता था। 1820 ई0 में कम्पनी की सेना में ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहार ही सम्मिलित होते थे। सैनिकों के प्रशिक्षण के लिये नेशनलडिफेंसएकेडमी की स्थापना हुई। जिसमें वायुसेना, स्थल सेना, एवं नौसेना की आवश्यकतानुसार सैनिकों को प्रशिक्षण दिया जाने लगा। स्वतंत्रता के उपरान्त भारत में ब्रिटिश द्वारा स्थापित सैन्यतंत्र अनवरत उन्नति करता रहा। सैन्य सेवा में सिक्खों, गोरखाओं, राजपूतों को प्रोत्साहित किया गया। इनके पीछे मूल कारण यह था कि इनमें जन्मजात वीरता थी, लेकिन नेतृत्व की क्षमता नहीं थी। स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय सैन्य संगठनों में ब्रिटिश कालीन सैन्य व्यवस्था अनवरत जारी रही। शिक्षा का मानक निर्धारित होने के बाद से पढ़े लिखे नौजवानों की भर्ती सशस्त्र सेनाओं में होने लगी। तकनीकी विकास ने युद्ध को नया आयाम दे दिया। हथियारों की गुणवत्ता व प्रौद्योगिकी ने सैनिकों को बेहतर करने की

दशा में कार्य आरम्भ करवाये, बेहतर प्रशिक्षण के कारण मानसिक दृढ़ता एवं समझदारी का विकास भी हुआ। हालांकि प्रजातांत्रिक ढांचे में सेना का आन्तरिक ढाँचा ब्रिटिश कालीन कानूनों द्वारा संचालित होता रहा इसके कारण उनमें सदा आक्रोश का अंश दिखाई देता है। इसी के परिणामस्वरूप आत्महत्या अथवा अधिकारी की हत्या सैनिकों द्वारा की जाने लगी। कहने का आशय यह है कि वर्तमान तकनीकी विकास ने सैनिकों को बौद्धिक रूप से अधिक परिपक्व किया है। सैन्य शिविरों में मनोरंजन के इंतजाम दिखाई देते हैं। दूर–दराज के क्षेत्रों में रहते हुये भी टेलीवीजन, इण्टरनेट व अन्य माध्यमों से देश व दुनिया की घटनाओं की न केवल जानकारी रखते हैं बल्कि उनके प्रति अपने विचार भी व्यक्त करते हैं। संचार माध्यमों के विस्तार के कारण सैनिकों में उनमें अपने हितों के प्रति बौद्धिक संचेतनायें बढ़ी हैं। वर्तमान में मात्र राष्ट्रसेवा के नाम पर सशस्त्र सेना के जवान अपने घर परिवार को छोड़ कर शहीद होते रहेंगे ऐसी अपेक्षा उचित नहीं रह गयी है। वर्तमान में सैनिकों का मूल वेतन 3200 रूपये मात्र और भत्तों के साथ उसे करीब 6300 रूपये मिलते हैं। अनेक कटौतियों के बाद वह अपने घर मात्र 4500 रूपये ले जाता है।[4] और इतने कम वेतन में परिवार का पेट पालना दूंभर हो चला है। साथ ही उसे घर से नौ महीने निरंतर दूर रहकर विषम परिस्थितियों में जीवन यापन करना सहज नहीं होता है। सैनिकों के सामने हर पल शत्रु की गोली का खतरा बना रहता है। हर समय अनुशासन की सीमाओं में रहना भी उनकी एक मजबूरी होती है। ये सैनिक हमेशा तनाव एवं आत्मग्लानि के शिकार होकर अपने आपको असहाय महसूस करंने लगते हैं। कोई भी देश सुरक्षा के अभाव में उन्नति नहीं कर सकता है। खेद का विषय तो यह है कि देश को सुरक्षित रखने वाले खुद को असहाय महसूस करने लगे हैं। निश्चित रूप से उनकी देश–भक्ति एवं बहादुरी में कोई कमी नहीं आयी है लेकिन उनका मानवीय रूप भी तो हैं। घर–परिवर से अलग रहने की पीड़ा से वह भी सहजता से मुक्त नहीं हो पाते। कई बार वे इतने प्रतिकूल स्थानों में रहते हैं कि उनको जीवन को छोड़ कर कुछ और सूझता ही नहीं है। 78 किमी0 लम्बी सियाचिन ग्लेशियर की रखवाली के लिये तैनात जवान मौसम और शत्रु से लड़ने में इतने

तल्लीन हो जाते हैं कि उनके लिये मानसिक तनाव का समय ही नहीं है। सियाचिन में तापमान शून्य से 60 डिग्री नीचे चला जाता है और जीवन बचाने का संघर्ष इतना कठोर है कि आपसी तनाव पास नहीं फटकता। उनके सामने राष्ट्र की रक्षा का प्रश्न प्राथमिकता पर होता है। सेना के अनुशासन की सर्वथा प्रशंसा होती है। इस अनुशासन की डोर में सभी रिस्ते व नाते भूल जाते हैं। फिर भी कहीं न कहीं उनकी मानवीय संवेदना हिलकोरें लेने लगती है। लाँस नायक जगसीर सिंह और मुहम्मद आरिफ कारगिल अभियान के बाद पाकिस्तानी सेना की गिरफ्त में आ गये। इन दोनों को सैन्य अधिकारियों ने भगोड़ा घोषित कर दिया था। लेकिन पाँच वर्ष बाद जब पाकिस्तानी जेलों से इन दोनों को मुक्त कर भारतीय सेना को सौंपा गया। तब जाकर उन्हे अपने ऊपर लगे कलंक से मुक्ति मिल सकी।[5]

आरिफ और जगसीर सिंह जैसे अनेक जवान गुमनामी और यातना भरा जीवन जी रहें हैं शायद अब तक वे यह भी भूल गये हों कि हम कौन है और कहां के निवासी हैं। सेना की फाइलों में या तो ये जवान वीरगति को प्राप्त हो चुके हैं या लापता हो गये हैं या इनको भगोड़ा साबित कर दिया गया है। "विक्टोरियो शाफील्ड" की पुस्तक "भुट्टो ट्रायल एक्सीक्यूशन" में वर्णन है कि कोट लखपत जेल में भारतीय कैदियों की इतनी पिटाई की गई कि युद्धबंदियों के वापसी के समय वे मानसिक रूप से इतने टूट चुके थे कि उन्हें यह भी याद न रहा कि वे कौन हैं। ये सभी सैनिक 3 दिसम्बर 1971 के युद्ध में भाग लिया था।[6] 5 दिसम्बर 1971 को 'संडे आब्जर्वर' में पाँच भारतीय पायलटों के बंदी बनाये जाने की खबर थी। इनमें एक नाम विजय बसन्त ताम्ब्रे का है। कई सालों बाद ताम्ब्रे की पत्नी दमयंती ताम्ब्रे की मुलाकात बांग्लादेशके नौसैनिक अधिकारी से हुयी जिसने बताया कि उसकी मुलाकात जिअल्लपुर जेल में ताम्ब्रे नामक व्यक्ति से हुयी थी जिसके गले में कटे का निशान था। 24 मार्च 1998 को पाकिस्तान से छोड़े गये मुख्तियार सिंह ने बताया कि उसके छोड़े जाते समय मेजर अशोक सिंह सूरी 'कोट लखपत' जेल में थे। 17 अगस्त 1975 को अशोक सूरी का करांची से आये पत्र में लिखा था उसकी तरह के बीस अफसर

पाकिस्तानी जेलों में बंद है। 22 दिसम्बर 1971 को पत्रिका टाइम्स में भारत के युद्ध बंदियों को दिखाते हुये पाक जेलों का फोटो छपा था। इस चित्र में सलाखों के पीछे खड़े सैनिकों की पहचान मेजर एस0के0 घोष के तौर पर हुई जबकि उन्हें बहुत पहले युद्ध में वीरगति प्राप्त होने की बात कही गयी थी।[7] इन वीर सैनिकों के परिजनों को आज भी विश्वास है कि उनके पुत्र, भाई, पति ाकिस्तानी जेलों में कैद हैं। इन परिजनो ने स्वंय खोजने का निर्णय लिया है। 13 सदस्यो का एक दल जिसको पाकिस्तान की सरकार ने अपने परिजनो को खोजने के लिये 10 दिन की अनुमति दे दी है।[8] सेना के जावानो को जब इस प्रकार की घटनाओ की जानकारी होती है तब वे अपने भावी जीवन के प्रति चितिंत हो उठते हैं। पूर्व रक्षामंत्री प्रणव मुखर्जी ने कुछ समय पूर्व भारतीय सशस्त्र सेनाओं में पाकिस्तानी जासूसी की घुसपैठ पर सार्वजनिक रूप से घोषणा की।[9] भौतिकता की दौड़ में अधिकाधिक पैसा प्राप्त करने की चाह में महत्त्वाकांक्षी सैनिक तथा अधिकारी राष्ट्र की सुरक्षा को दांव में लगाने से नहीं चूकते हैं। दक्षिण ऐशिया में भारत का खुफिया प्रमुख वीरेन्द्र सिंह थे लेकिन बाद में जब पता चला कि वे अमेरिका के लिये भी जासूसी करते थे। उनके इस कारनामो का भण्डाभोड़ होते ही वे अमेरिका भाग गये।[10]

यदि सैनिको में चरित्र नही है तो हमारी दुर्बलता का कारण बन जायेंगे। सैनिकों के जीवन में सुख शान्ति की जगह शोक विषाद की ही वृद्धि होगी और उनके भविष्य की तुलना में उनका अतीत ही अधिक गौरवशाली होगा। यदि यथेस्ट चरित्र न हो तो उनके मित्रों की अपेक्षा शत्रु ही अधिक सबल होंगे शान्ति की तुलना में युद्ध ही अधिक होगें, मेल मिलाप के स्थान पर हिंसा का ही आधिक्य होगा। यथेस्ट चरित्र के अभाव में उनका मानसिक सन्तुलन बिगड़ जायेगा और व्यावसायिक दक्षता में कमी आयेगी। थल सेनाध्यक्ष जनरल जे0जे0 सिंह जी ने कहा था– **"वेतन आयोग के पास हमें ठोस तर्कों के साथ यह बताना होगा कि सेना का जीवन कठोर है और जवानों को उसी हिसाब से वित्तीय लाभ देने की आवश्यकता है। निजी और सार्वजनिक क्षेत्र और अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति से तुलना के अलावा केन्द्र और राज्य वेतन**

ढाँचों और पदों के वर्गीकरण से जुड़े मुद्दों पर बारीकी से ध्यान दिया जाना चाहिये।"[11] निश्चित रूप से सेनाध्यक्ष के सुझाव सैनिकों के अन्दर एक सकारात्मक भाव लायेगा लेकिन अभी जवान अवमुक्त की स्थिति में हैं। ये जवान अपने ही दोस्तों जिनके साथ इन्होंने महीनों मौजमस्ती की है पलक झपकते ही मौत की नींद सुला दे रहें हैं। पिछले चार साल में जम्मू और कश्मीर में चार सौ सैनिक आत्महत्या कर चुके हैं इनमें से सौ सैनिक खुद को गोली मारने से पहले अपने साथियों पर ही गोली दागी। हाल ही में सेना कमाण्डरों के एजेण्डों में इस मसले का शामिल किया गया। भारतीय सेना दुनियां की दूसरी सबसे बड़ी सेना है और इसका लगभग आधा भाग अग्रिम मोर्चों पर तैनात है। सेना के सर्वोच्च चिकित्सा संस्था के महानिदेशक के अनुसार सैनिकों की अधिकांश समस्यायें आर्थिक एवं पारिवारिक हैं। बी0के0 सिंह **"यदि हम गाँवों में रह रहे जवानों के परिजनों की देखभाल करें तो समझों हमने नब्बे प्रतिशत लड़ाई जीत ली है।"**[12]

आज सैनिकों में अपने भविष्य को सुनिश्चित करने के लिये पदोन्नति अधिकार, सुविधा, परिवार का विकास, बच्चे का भविष्य व अन्य जीवन से जुड़ी आवश्यकताओं के प्रति जागरूकता बढ़ी है। वास्तव में समूह में रहने वाला अपने हितों की रक्षा करने में अकेले व्यक्ति की अपेक्षा अधिक सफल होता है। सरकार के द्वारा सैनिकों को यह सुविधा दी जा रही है कि वे सेवा के दौरान भी अपनी पढ़ाई को जारी रख सकते हैं। इसलिये उनमें बौद्धिक विकास तेजी से हो रहा है। ब्रिटिश कालीन सैनिक कानून एवं मान्यताओं को समाप्त करके प्रजातांत्रिक व्यवस्था लागू की जाय। यदि ऐसा नहीं होगा तो सैनिक ऊर्जा नकारात्मक दिशा में परिवर्तित हो जायेगी जो सैनिकों को निर्माण के स्थान पर विध्वंसकारी गतिविधियों की ओर उन्मुख कर देगी। जिससे राष्ट्र असुरक्षित हो सकता है। प्रजातांत्रिक सैन्य कानूनों का आशय अधिकारियों का सैनिकों के प्रति मित्रवत व्यवहार, कोर्टमार्शल की समाप्ति, अधिकारियों का सैनिकों को दण्डित करने के अधिकार की समाप्ति जैसे प्रावधान समाप्त हों इससे सैनिकों की क्रियाशीलता को बढ़ाया जा सके।

व्यावसायिक कमजोरियों की क्षति पूर्ति-

सैनिकों की व्यवसायिक कमजोरियों का विश्लेषण करना भी बहुत आवश्यक है इस सन्दर्भ में पुनवरालोकन करने से पड़ोसी खतरों तथा उनकी स्थिति का विश्लेष्ण भी आवश्यक है। 1950 के दशक में भारतीय सुरक्षा का सबसे प्रमुख खतरा उत्तर की ओर स्थित चीन से था। परन्तु रक्षा संधियों के प्रति तिरस्कार पूर्ण भावना रखने के कारण पं0 जवाहर लाल नेहरू (प्रधानमंत्री) ने नहीं माना। वे यह मानते थे कि इस क्षेत्र को बाहर से कोई खतरा नहीं है, अतः **"रक्षा किससे करनी है?"**[13]

1962 में उनका यही विश्वास गलत सिद्ध हुआ। पाकिस्तान, जो सोवियत संघ एवं चीन के विरूद्ध पश्चिमी राष्ट्रों से कई सैन्य समझौतों से जुड़ा था, चीन भारत संघर्ष (1962) के बाद चीन का विश्वसनीय मित्र बन गया। भारत ने 1950 से 1962 तक की अवधि में सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 2 प्रतिशत से भी कम रक्षा पर व्यय किया जो कुल वार्षिक सरकारी व्यय का 15 से 18 प्रतिशत ही था।[14] उन दिनों काश्मीर ही रक्षा–नीति का मुख्य मुद्दा था। जिस पर प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू स्वयं निर्णय लेते थे। रक्षा सम्बन्धी बहुत कम योजनाएं एवं बजट कार्यक्रम संसद के द्वारा निर्णीत कराये जाते थे। इनमें रक्षा एवं वित्त मंत्रालय का बहुत कम योगदान होता था। रक्षा सम्बन्धी मसलों पर पर्याप्त सीमा तक भरोसा भी किया जाता था, क्योंकि पाकिस्तान की तरफ से खतरा अत्यन्त सीमित मात्रा में था और चीन से भारत को खतरे की किंचित मात्र आशंका नहीं थी। 1950 के दशक में भारत द्वारा ब्रिटेन तथा फ्रांस से किया गया शस्त्र भण्डारण पाकिस्तान के सशस्त्र भण्डारण के प्रतिउत्तर स्वरूप था। ए0एम0एक्स–13 एवं सेन्चुरियन टैंक और हंटर, मिस्टीयर, औरगन तथा कैनबरा युद्धक विमान पाकिस्तान द्वारा अमेरिकी टैंकों व विमानों को प्राप्त करने की सूचना मिलने के बाद खरीदे गये।[15] यद्यपि 1962 के बाद वित्त एवं रक्षा के आपसी सम्बन्धों के नये चरण में पहुंचने पर स्थिति में बड़े पैमाने पर बदलाव आया। कृष्णामेनन के त्यागपत्र देने के बाद और यशवंत बलवंतराव चह्वाण के रक्षा

मंत्री बनने पर वित्त मंत्रालय का रक्षा के प्रति दृष्टिकोंण अधिक सहानुभूति पूर्ण हो गया। चह्वाण द्वारा रक्षा व्यय सम्बन्धी अनुरोध प्रस्ताव अपेक्षाकृत अधिक अच्छी तरह प्रस्तुत किये गये, और उनको शीघ्रता से स्वीकृत भी प्रदान की गयी।[16] 1962–63 में स्वीकृत भारत का लगभग 474 करोड़ रूपये का रक्षा में बढ़कर 816 करोड़ रूपये तक पहुंच गया। 1963 से 1965 के बीच के दो वर्षों में रक्षा के लिये स्वीकृत धनराशि वास्तविक उपयोग से क्रमशः 51 करोड़ रूपये व 48 करोड़ रूपये बढ़ा दी गयी।[17] ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। बाद के कई वर्षों में भी इसे इस सीमा तक नहीं देखा गया। यह पूर्णतः स्पष्ट है कि भारत को अपने रक्षाव्यय एवं रक्षा सम्बन्धी सभी व्यापक मुद्‌दों पर पुनर्विचार करने के लिये पाकिस्तान से अधिक चीन ने विवश किया है। 1962 के बाद ग्यारह डिवीजन की थल सेना को 21 डिवीजन कर दिया गया जिनमें 10 पहाड़ी डिवीजन थे।[18] वायुसेना को पर्वतीय क्षेत्रों में संचारतंत्र सम्बन्धी सहायता हेतु हेलीकाप्टरों एवं यातायात विमानों से सज्जित किया गया। इनमें अमेरिका से प्राप्त सी–119 पैकेट, कनाडा से गैरीबोऊ तथा फ्रांस से प्राप्त एलोटे थर्ड हेलीकाफ्टर तथा परिवहन योग्य रडार आदि थे। मुख्यतः चीन के विरूद्ध हवाई सुरक्षा के प्रति पश्चिमी देशों पर भारत की सैनिक निर्भरता विचार विमर्श का विषय बन गई।[19] भारत ने सोवियत संघ से मिग–21 विमानों को खरीदने तथा बाद में उनका निर्माण करने हेतु समझौता कर लिया। 1964 के बाद भारतीय नौसेना एवं वायुसेना के विस्तार के लिये केवल चीनी खतरें को उत्तरदायी नहीं माना जा सकता था क्योंकि भारत ने सोवियत संघ से मिग–21 एवं सुखोई विमानों तथा पनडुब्बियों को मात्र चीन को दृष्टिगत रखकर नहीं खरीदा। 1962 के पश्चात् चीन तथा पाकिस्तान के मध्य हुये सैन्य सहयोग के कारण भारत को अधिक चिंता हुयी। उधर इंडोनेशिया ने भी अंडमान तथा निकोबार द्वीप समूह पर भारत की संप्रभुता के बारे में प्रश्न चिन्ह खड़ा कर दिया था और 1965 के भारत–पाक युद्ध के समय चीन एवं पाकिस्तान ने घनिष्ठ सम्बन्ध विकसित कर लिया था।[20] भारत ने परमाणु उर्जा सम्बन्धी शोध गतिविधियां उस समय प्रारम्भ की जब अमेरिका एवं यूरोप बड़े पैमाने पर इसके व्यवसाय में लग गये थे। इसका आरम्भ 1945 में टाटा इंस्टीट्यूट आफ फंडामेंटल

रिसर्च की स्थापना तथा डॉ0 होमी भाभा की अध्यक्षता में 1948 में भारतीय परमाणु ऊर्जा आयोग की स्थापना के साथ हुआ। भारत परमाणु आत्मनिर्भरता पर हमेशा जोर देता रहा है और इसे ही पश्चात्य देश अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा प्रावधानों से बचाव की संज्ञा देते हैं।[21] भारत द्वारा 1974 में किये गये परमाणु परीक्षण से विश्व के अनेक देशों को यह विश्वास हो गया कि भारत ने प्लूटोनियम के मार्ग से बम बनाने का निर्णय कर लिया है। इसी कारण वह अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा प्रावधानों के विरूद्ध है तथा पहले से चल रहे तारापुर और राजस्थान के परमाणु रियेक्टरों के अतिरिक्त अन्य रिएक्टरों को अन्तर्राष्ट्रीय आणविक उर्जा एजेंसी या अन्य द्विपक्षीय सुरक्षा प्रावधान के अधीन करने से इंकार करता रहा है।[22] भारत के 1974 के किये गये परीक्षण के कारण उसका परमाणु कार्यक्रम वाधित हुआ है क्योंकि परीक्षण पर जापान, कनाडा एवं अमेरिका द्वारा की गई कार्यवाही के फलस्वरूप उसे अपने परमाणु कार्यक्रम में आपूर्ति सम्बन्धी मूल्यवान विलम्ब स्वीकार करने पड़े हैं। संपूर्ण परमाणु ईंधन चक्र पर दक्षता एवं अधिकार प्राप्त करने के लिये भारत ने पूर्णतः स्वदेशी क्षमता विकसित की है जिससे वह जादूगुड़ा की खानों से अपना यूरोनियम उत्पादित करता है, ईंधन को हैदराबाद व तारापुर में शोधित करता है, कान्डू श्रेणी का रियेक्टर बना सकता है। भारी पानी बनाकर उसे अनकूलित कर सकता है तथा इस्तेमाल में आ चुके ईंधन का पुर्नशोधन करके शस्त्र श्रेणी का प्लूटोनियम उत्पादित कर सकता है। भारत के पास आवश्यक शोध एवं उद्योग सम्बन्धी ढाँचा भी है। उदाहरणार्थ भाभा परमाणु शोध केन्द्र (BARC) तथा कलपक्कम (मद्रास) के शोध रियेक्टर। इनके अतिरिक्त सार्वजनिक क्षेत्र की विभिन्न औद्योगिक कम्पनियां परमाणु शक्ति संयत्रों की डिजाइन बनाने उन्हें निर्मित तथा संचालित करने हेतु शक्ति उत्पादों वाली इंजीनियरिंग इकाई, निजी क्षेत्र के सहयोगी आपूर्तिकर्त्ता तथा सरकारी सहायता प्राप्त अनेक शिक्षण व शोध संस्थान भी हैं।[23] मद्रास तथा नरोरा के परमाणु रियेक्टर (ककरापुर और कैगा के निर्माणाधीन रिएक्टर भी) शोध रिएक्टर ध्रुव एवं ट्राम्बे, तारापुर तथा कलपक्कम के पुर्नशोधन संयत्र आदि सभी अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु उर्जा एजेंसी की परिधि से बाहर हैं। अनेक प्रेक्षकों का विश्वास है कि ये सभी संयत्र भारतीय शस्त्र सम्बन्धी संभावनाओं की रीढ़

हैं। भारतीय सुरक्षा तैयारियों में आणविक संभाव्यता को सम्मिलित करना सुरक्षा की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होगा। एक साक्षात्कार में श्री पी0एन0 हक्सर ने आणविक मुद्दों में पं0 नेहरू ने अपने मतभेदों में बातचीत करते हुये कहा था कि भारत, चीन की भांति आणविक शस्त्र सम्पन्न शक्ति बन सकता था इससे हमें राजनीतिक सौदेबाजी के लिये शक्ति मिलती किन्तु नेहरू ने इस विचार की खिल्ली उड़ाई और सोंचा कि छोटे राष्ट्रों की समृद्धि एवं विश्व शांति के लिये गुटनिरपेक्षता ही विकल्प है। भारतीय सेना के विषय में सैनिक अधिकारी बहुत कम चर्चा करते हैं और सुरक्षा सम्बन्धी वक्तव्यों में बड़ी सावधानियां बरतते हैं, फिर भी 1960 के दशक में सेना के जर्नल चीन सम्बन्धी सरकारी निर्णयों से सन्तुष्ट नहीं थे। जनरल चौधरी के अनुसार "यदि वर्तमान चीनी आणविक शस्त्रों का विकास मात्र सोवियत संघ को लक्ष्य बनाकर किया जा रहा हो तो भी यह बिल्कुल निश्चित हीं हैं क्योंकि उपमहाद्वीप संकट के समय वह परोक्ष आणविक धमकी पर नहीं उतरेगा"[24] भारत में अपने आणविक कार्यक्रम की दिशा में कुछ निश्चित कदम उठायें हैं। उदाहरण के लिये उसने सन् 2000 ई0 तक 10,000 मेगावाट आणविक उर्जा उत्पादन करने के उद्देश्य से परमाणु उर्जा आयोग की स्थापना की है। यदि यह विवाद छोड़ भी दें कि भारत इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकेगा या नहीं तो भी यह उल्लेखनीय है कि उसके सभी पावर रिएक्टर अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा प्रावधानों से बाहर है।[25] नवम्बर 1988 में सोवियत संघ के साथ हुये समझौते के अनुसार भारत को दो उर्जा स्टेशन प्राप्त हुये। 1000 मेगावाट शक्ति के दाबयुक्त पानी के ये रिएक्टर तमिलनाडु के कुंडाकुलम में संचालित होने थे।[26] पूर्व सोवियत संघ द्वारा भारत को चार्ली–1 श्रेणी की पनडुब्बी (जिसका नाम चक्र है) का दिया जाना इस क्षेत्र की महत्वपूर्ण घटना थी। जब यह पनडुब्बी सोवियत नौसेना में थी इससे पारंपरिक अथवा आणविक शस्त्र युक्त क्रूज प्रक्षेपास्त्र छोड़े जा सकते थे।[27] यह पनडुब्बी शस्त्र श्रेणी के ईंधन से चलती है।

आज आधुनिक भारतीय वायु सेना का मुख्य आधार उसके द्वारा 1970 के दशक के अंत में तथा 1980 के दशक के प्रारम्भ में अर्जित लड़ाकू बमवर्षक है।

उदाहरण के लिये ब्रिटिश, फ्रांसीसी, जगुआर, फ्रांसीसी मिराज 2000 एवं सोवियत मिग–23, मिग–27, तथा मिग–29 तथा पाकिस्तान के पास अमेरिकी एफ–16, फ्रांसीसी मिराज–V, तथा कुछ अन्य पुराने मिराज– III ई0पी0 हैं। इन सभी विमानों के आणविक शस्त्रों के संवहक योग्य बनाना कोई बहुत कठिन कार्य नहीं है।[28] भारत ने 1980 तथा 1890 के दशक में एस0एल0वी0, ध्रुवीय एस0एल0वी0 एवं जी0एस0एल0वी0 प्रक्षेपित करने का कार्यक्रम बनाया। इन प्रक्षेपणों की दूरी तथा वाहक क्षकता अधिक है। यद्यपि भारत ने इससे इंकार किया है कि उसका अन्तरिक्ष कार्यक्रम किसी प्रकार से प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम से सम्बन्धित नहीं है। कुछ सूचनाएं मिली थी कि इसकी सम्भावनाओं पर विचार किया जा रहा है।[29] सिद्धान्ततः यह सम्भव है क्योंकि राकेट के तृतीय एवं चतुर्थ चरण में परिवर्तित किया जा सकता है जिसमें प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी नियंत्रण समूह द्वारा अनुबन्ध 500 किलोग्राम (1100 पौंड) तक का शस्त्राग प्रक्षेपित किया जा सकता है। 1988–89 में भारत द्वारा पूर्णतः स्वदेशी प्रौद्योगिकी द्वारा देश में बने कम और अंतरिम दूरी के प्रक्षेपास्त्रों के परीक्षण से उसके अतंरिक्ष कार्यक्रम की दिशा सुनिश्चित हो गयी। भारत में समन्वित निर्देशित प्रक्षेपास्त्र विकास (ICMD) कार्यक्रम 1983 में प्रारम्भ हुआ और परस्पर मिलती जुलती प्रौद्योगिकी का लाभ उठाते हुये भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान (ISRO) भी इस कार्यक्रम में इसका सहभागी बन गया। SLV-3 कार्यक्रम के प्रमुख कर्ता–धर्ता अब्दुल कलाम को इसरो से आई0जी0एम0डी0 में स्थान्तरित कर दिया गया। यहां उन्होंने पृथ्वी एवं अग्नि प्रक्षेपास्त्र के विकास में प्रमुख भूमिका निभाई। 1960 के दशक के मध्य में उन्होंने अमेरिका के वैलप्स हाईलैण्ड राकेट्री सेक्टर में एक युवा वैज्ञानिक के रूप में प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लिया था। भारत लौटने पर नागरिक अन्तरिक्ष कार्यक्रम में प्राप्त उनके अनुभवों के आधार पर उन्हें भारत के पृथ्वी एवं अग्नि बैलिस्टिक प्रक्षेपास्त्रों का मुख्य डिजाइनर बना दिया गया।[30] इन प्रक्षेपास्त्रों के अब तक कई सफल परीक्षण किये जा चुके हैं। यद्यपि भारत सरकार ने अग्नि प्रक्षेपास्त्र के मात्र प्रौद्योगिकी प्रदर्शक श्रेणी मं रखने की बात की है, फिर भी यह विश्वास करना कठिन

है कि वह इन प्रक्षेपास्त्रों को अधिक संख्या में निर्मित व तैनात करने से हिचकिचायेगा।

भारत 1990 के वर्तमान दशक में अधिक आग्नेय शक्ति युक्त, अधिक सटीकता एवं अधिकाधिक वैविध्यपूर्ण संवहन क्षमता से युक्त हो गये हैं। प्रौद्योगिकी में हुयी यह प्रगति अनुकूल नीति निर्माण के लिये निरंतर दबाव डालेगी और जब यह नियंत्रण से परे जाने लगेगी तो उसे रोक पाना कठिन हो जायेगा। प्रतिस्पर्धा के इस आधुनिक युग में सामरिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना मूलभूत जरूरतों तथा प्राथमिकताओं में से एक है यह और भी आवश्यक तब हो जाता है जब अपना पड़ोसी राष्ट्र ही शत्रु हो। इसके अतिरिक्त राष्ट्र के विकास कार्यक्रमों को बिना किसी रूकावट चलाये रखने के लिये सामरिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता अत्यन्त जरूरी है। क्योंकि सामरिक दृष्टि से सुरक्षित होने के बाद ही राष्ट्र में विकास कार्यक्रमों को चलाया जा सकता है। 1958 में रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन की स्थापना की गयी। जिसमें संचार उपकरणों, रडार प्रणालियों तथा परम्परागत शस्त्रों में न केवल सुधार किया गया बल्कि इनकी क्षमता में भी वृद्धि की गई।

जुलाई 1983 में समन्वित निर्देशित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम की आधारशिला रखी गयी। हैदराबाद स्थिति प्रयोगशाला से शुरू इस कार्यक्रम में लिक्विडइंजनराकेट प्रणाली, उन्नत फेब्रीकेशन सुविधाओं, इनार्शियल गाइडेड टेक्नोलाजी तथा सिस्टम डिजाइन में अपना ठोस कदम रख चुका था। समन्वित निर्देर्शित प्रक्षेपास्त्र विकास कार्यक्रम को कारगर रूप देने के लिये तत्कालीन रक्षामंत्री आर० वेंकट रमन के वैज्ञानिक सलाहकार डा० वी०एस० अरूणाचलम ने एक प्रक्षेपास्त्र अध्ययन दल का गठन किया। इस अध्ययन दल में डा० ए०पी०जे० अब्दुल कलाम के अतिरिक्त तीनों सेनाओं तथा रक्षा उत्पादन विकास के सदस्यों को नामित किया गया। इस अध्ययन दल ने चार महीने में अपनी रिपोर्ट केन्द्र सरकार को सौंप दी। रिपोर्ट में पाँच तरह के प्रक्षेपास्त्रों को आवश्यकतानुसार विकसित करने की आवश्यकता बताई गयी थी। केन्द्र सरकार द्वारा शीघ्र ही इन पाँचो प्रकार की परियोज़नाओं को एक साथ चलाये

जाने की अनुमति भी प्रदान कर दी गयी। परियोजना के सुचारू संचालन के लिये "निर्देशित प्रक्षेपास्त्र बोर्ड" नामक संस्था का गठन भी किया गया। रक्षा अनुसंधान और विकास सचिव की अध्यक्षता में गठित इस बोर्ड में रक्षा उत्पादन एवं रक्षा सचिव, सुरक्षा सेनाओं के वित्त सलाहकार, तीनों सेनाओं के सह अध्यक्ष, हिन्दुस्तान एअरोनाटिक्स के अध्यक्ष तथा भारत डायनामिक्स के प्रबन्ध निदेशक सदस्य बनाये गये। पाँच प्रक्षेपास्त्रों क्रमशः त्रिशूल, आकाश, पृथ्वी, नाग, अग्नि के विकास की परिकल्पना की गयी। 1983 में प्रारम्भ हुई इस परियोजना को अपने निर्धारित कार्यक्रम में सम्पन्न कर दिया गया जो भारत जैसे विकासशील देश की प्रौद्योगिकी उत्कृष्टता का प्रतीक है। भारत को (MTCR) का भी सामना करना पड़ा। परन्तु इसे भारतीय वैज्ञानिकों ने चुनौती के रूप में स्वीकार किया और इस कार्यक्रम से सम्बन्धित विभिन्न प्रौद्योगिकियों एवं तकनीकों का विकास देश में ही करना प्रारम्भ किया जो इसे 21वीं शताब्दी में अन्तरिक्ष सेना तथा सर्वशक्तिमान राष्ट्र के रूप में स्थापित करेगा। प्रक्षेपास्त्रों के विकास में भारतीय रक्षा वैज्ञानिकों ने अपने अथक प्रयास का परिणाम दुनिया के सामने रख दिया है। जिससे देश आज आधुनिक सुरक्षा उपकरण के सन्दर्भ में विश्व के गिने चुने राष्ट्रों की श्रेणी में आ गया है। भारत द्वारा विकसित प्रक्षेपास्त्र आकाश 14 अगस्त 1990 को उड़ीसा के चाँदीपुर प्रशिक्षण स्थल से आकाश का प्रथम सफल परीक्षण किया गया। सतह से आकाश में 25 किलोमीटर तक ध्वनि की गति से उड़ रहे शत्रु के विमान को मार गिराने में सक्षम है। इसमें फेज सिफ्टर प्रणाली का प्रयोग किया गया है। यह (फेसड एरे) एक साथ 30 लक्ष्यों पर नजर रख सकता है। अमेरिका की पैट्रियाट से बेहतर है। रूस के स्कड प्रक्षेपास्त्र, पाकिस्तान के हाल्फ I, II, III प्रक्षेपास्त्रों तथा चीन के M-11 प्रक्षेपास्त्रों को यह दक्षतापूर्वक नष्ट कर सकता है। आकाश प्रक्षेपास्त्र से अमेरिका के अब्राहम एवं लेपर्ड प्रक्षेपास्त्र ही मुकाबला कर सकते हैं। त्रिशूल का 5 जून 1989 को पहला सफल परीक्षण किया गया। यह प्रक्षेपास्त्र भी सतह से हवा में मार करने वाला प्रक्षेपास्त्र है। इसकी संहारक क्षमता 8 किलामीटर है। फ्लाई कैचर रडार का उपयोग

किया गया है सतह से हवा में प्रहार करने वाली प्रणाली भी सम्मिलित है। त्रिशूल कांम्बैट विहिकल प्रणाली का विकास किया जा रहा है।

नाग का 29 नवम्बर 1990 को पहला सफल परीक्षण किया गया। यह टैंक विरोधी प्रक्षेपास्त्र है इसकी मारक क्षमता 4 किलोमीटर है इस प्रक्षेपास्त्र में फोकलप्लेनएरे तकनीक का इस्तेमाल किया गया है। जिससे एक के दशवें अंश के बराबर तापमान के अंतर का पता लगाया जा सकता है और इन्फ्रारेड तकनीक के द्वारा यह टैंक को ध्वस्त कर सकता है। अपने लक्ष्य के प्रति सर्वाधिक संवेदनशील इस प्रक्षेपास्त्र का मूल मंत्र है **"दागो और भूल जाओ"** इस प्रक्षेपास्त्र की यह विशेषता है कि स्वयं ही अपने लक्ष्य तक पहुंच जाता है। एक बार दागे जाने के बाद इसे नियंत्रित करने की कोई आवश्यकता नहीं होती। यह प्रक्षेपास्त्र मोबाइल लॉंचर एवं हेलीकाप्टर पर भी लगाया जा सकता है। 25 फरवरी 1998 को श्रीहरि कोटा प्रक्षेपण केन्द्र से पहली बार जमीन से जमीन पर मार करने वाले पृथ्वी प्रक्षेपास्त्र का सफल परीक्षण किया गया। इसकी मारक क्षकता 250 किलोमीटर है। SLV-3 प्रौद्योगिकी आधार पर बनाया गया है। यह लक्ष्य की चारो तरफ की परिधि में बम बरसाता है। पैट्रियाट प्रक्षेपास्त्र भी इसे लक्ष्य से विचलित नहीं कर सकता। अग्नि प्रक्षेपास्त्र मध्यम दूरी का सतह पर मार करने वला प्रक्षेपास्त्र है। प्रथम सफल परीक्षण 22 मई 1989 को उड़ीसा के चाँदीपुर परीक्षण स्थल से किया गया। वर्तमान कई परीक्षणों के बाद 3500 किलोमीटर तक लक्ष्य भेद सकता है। नेवीगेशन प्रणाली ग्लोवल पोजीशनिंग सिस्टम से युक्त है जिसके कारण इसकी दिशा में बीच में ही संशोधन किया जा सकता है। पश्चिम के सैन्य विशेषज्ञों ने अग्नि–2 के परीक्षण के बाद यह टिप्पणी की है कि भारत लम्बी एवं मध्यम दूरी की प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी के मामले में चीन के बराबर पहुंच रहा है। सागरिका एक ऐसी प्रक्षेपास्त्र प्रणाली है जिसका उपयोग समुद्र के अन्दर किया जा सकता है। इसका प्रयोग पनडुब्बियों से भी किया जा सकता है। इसकी मारक क्षमता 300 किलोमीटर है। पिनाका 28 दिसम्बर 1997 को उड़ीसा के चाँदीपुर परीक्षण स्थल से किया गया। पिनाका स्वदेश निर्मित आधुनिक बहुनालक

राकेट प्रक्षेपण प्रणाली है। 40 किलोमीटर तक प्रहार कर सकने वाली प्रणाली है। एक सेकण्ड में 12 राकेट एक साथ दागे जा सकते हैं। इस प्रणाली के साथ इसमें राकेट रखने उसका प्रक्षेपण करने तथाराकेट दागने के लिये एक वाहन भी है। भारतीय सेना में शाामिल किये जाने से सेना की प्रहारक क्षमता में प्रहारक करने की क्षमता में काफी वृद्धि होगी। सूर्य, धनुष, अस्त्र, प्रक्षेपास्त्रों की परिकल्पना सूर्य की मारक क्षमता 5000 किलोमीटर से अधिक, अस्त्र किसी लड़ाकू विमान से छोड़ी जाने वाली मिसाइल है जो 60 से 100 किलोमीटर तक किसी हमलावर विमान को मार कर गिरा सकती है। धनुष बैलिस्टिक प्रक्षेपास्त्र है। अपने प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम के तहत और सचेत रहने की आवश्यकता है ताकि किसी भी खतरे का सामना सरलता से किया जा सकता है। उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय सशस्त्र सेनाओं की परिवर्तित व्यावसायिक, क्षमता में गिरावट की रोकथाम में वैज्ञानिक शोधों में महत्त्पूर्ण भूमिका निभाई है। आज भारतीय सेना व्यावसायिक दक्षता का ग्राफ जो 1950 के दशक में गिर रहा था। आज वह विश्व स्तर पर अपने कीर्तिमान स्थापित कर चुका है। अर्थात इसे हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि सेनाओं की व्यावसायिक दक्षता की क्षतिपूर्ण में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त की गयी।

अनैतिक साधनों का प्रयोग– (सैनिकों में अनैतिकता का विकास कारण एवं प्रभाव)

वर्तमान भूमण्डलीकरण के दौर में समाज में प्रतिस्पर्धायें उत्पन्न हो रही हैं। उपभोक्तावाद के विकास में परम्परागत नैतिक सिद्धान्तों को अप्रासंगिक कर दिया है। ऐसे में मानवीय प्रवृत्तियों को नियंत्रित करने वाली संस्थायें अत्यन्त कमजोर हो गयी हैं। प्राचीनकाल में परिवार में जाति–उपजाति आर्थिक सामाजिक ढाँचे में अनैतिकता को प्रोत्साहित करने वाले कारक स्वतः नष्ट हो जाते थे। ऐसी स्थिति में व्यक्ति मर्यादित रहता था किन्तु अनैतिक सत्ता ने भारत के आर्थिक सामाजिक ढाँचे को नष्ट कर दिया है। इससे एकांकी पूंजी की अवधारणा से व्यक्ति स्वयं अपने भाग्य का निर्माता बन गया है। व्यैक्तिक पूंजीवाद के उन्नत होने से भौतिक अभिलाषाओं का अनियंत्रित होना स्वाभाविक है। भूमण्डलीकरण के दौर में वैश्विक प्रतिस्पर्धा अनैतिकता आधारभूत होने लगी है। उपभोक्तावाद ने विकास एवं संचार के कारण आमदनी से ज्यादा व्यय को बढ़ा दिया है। ऐसे में व्यक्ति अनैतिक माध्यमों की ओर आकर्षित हो जाता है। जिसमें भ्रष्टाचार, लूट एवं जघन्य अपराध भी होने लगता है। कभी भी अभिलाषाओं की पूर्ति न होने पर व्यक्ति आत्महत्या या परिवार की सामूहिक हत्या भी कर बैठता है। इस बाजारवाद के प्रभाव से सैनिक भी अछूते नहीं है। उनमें भी वहीं संवेदना है और इसी समाज की उपज है। इसलिये सैनिकों में बाह्रय अनुशासन के भीतर समाज की समस्त बुराईयाँ अन्तर्निहित हैं। सैनिकों को मिलने वाला कम वेतन और क्षेत्र विशेष में प्राप्त विशेषाधिकार उन्हें और भी अनैतिक बनाता है। कम वेतन और अधिक महत्त्वाकांक्षा से सैन्य सेवा में राष्ट्रभक्ति के तत्व का धीरे–धीरे क्षरण हो रहा है, और धन कमाना मुख्य लक्ष्य बन रहा है। सीमावर्ती इलाकों में यदि पड़ोसी देश से खतरा है तो धन कमाने की अपार सम्भावनायें भी हैं। यहां पर नशीले पदार्थों की तश्करी, मानव तश्करी, हथियारों की बिक्री, मनी लाउण्डरिंग सुगमता से करायी जा सकती है। भारत विश्व के दो बड़े मादक निर्यातक देश से घिरा हुआ है। एक ओर पाकिस्तान दूसरी ओर म्यांमार मादक दृव्यों के बड़े केन्द्र हैं । भारतं से म्यांमार की 1650 किलोमीटर लम्बी सीमा रेखा है।

जिससे प्रतिदिन लगभग 20 किलोग्राम हीरोइन की तश्करी होती है।[31] इसलिये मणिपुर व उत्तर पूर्व के नवयुवक नशे के शिकार हो रहें हैं। महत्त्वपूर्ण यह है कि इस कार्य में सैनिकों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। हालाँकि यह धन और इससे प्राप्त हथियार सैनिकों के विरूद्ध ही प्रयोग किये जाते हैं। किन्तु व्यक्तिगत हित की भावना व्यक्ति को राष्ट्रीय दायित्व से प्रथक कर देती है और उपभोक्तावाद के दौर में इसका चरित्र भयावह हो जाता है। हाल में यह शोध किया गया कि नागा विद्रोही मादक द्रव्यों का देश के अन्दरूनी भागों में व्यापार करते हैं। मजे की बात यह है कि विद्रोहियों के पास विदेशी हथियारों से अधिक भारतीय सेना के हथियार मिलते हैं। यह देखा गया है कि बीहड़ के सरगनों, आतंकवादियों के पास सेना के हथियार एवं गोलियां मिलती हैं। इससे यह निश्चित है कि सेना में ऐसे तत्त्व हैं जो यह कार्य कर रहें हैं। सेना की गुप्त सूचनायें,शत्रु देश तक पहुँचाना आमदनी का जरिया बन गया है। कहने का आशय है कि सैनिकों में व्याप्त भ्रष्टाचार भारत के अन्य संगठनों से अलग नहीं है सेना में व्याप्त कमियां ढाँचे में कमी के कारण है। गर्मी के दिनों में एकाएक सैन्य डिपों में आग लग जाती है करोड़ों का हथियार नष्ट हो जाता है। इसका कारण गर्मी बता दिया जाता है। भारत के सैन्य डिपों में ऐसी कई बार आग लग चुकी है। हालाँकि जाँच करने के उपरान्त हथियार की अवैध बिक्री से जोड़ा गया है। यह राष्ट्रीय सुरक्षा के लिये गम्भीर खतरा है। अफसरों के द्वारा शस्त्रों की अवैध सप्लाई करके, सैनिकों के खाने में कटौती करके अभ्यास में फायरिंग ज्यादा दिखाकर अथवा क्षेत्र विशेष में लूट करके धन अर्जित करते हैं। सैनिक अपनी गाड़ियों का पेट्रोल बेंचकर, मादक तश्करी व छोटी मोटी विशेषाधिकार में लूट करके धन अर्जित करता है। एक कारण यह है कि वह कम वेतन से अपने परिवार का पालन पोषण, भविष्य की सुरक्षा एवं भौतिक मनः स्थिति की तृप्ति नहीं कर पा रहा है। हद तो तब हो जाती है जब वह पदोन्नति के लिये फर्जी मुठभेड़ों को अंजाम देता है। क्या इस भौतिकतावाद ने मानव संवेदना को नष्ट कर दिया है। तेल पिपासा ने अमेरिका को बहसी बना दिया है। तो धन पिपासा ने समाज को मानवीय संवेदना से प्रथक कर दिया है। अब वह राष्ट्र भक्ति का जज्बा नहीं रहा जिसमें कभी

क्रान्तिकारियों एवं स्वतंत्रता सेनानियों को राष्ट्र की स्वतंत्रता का दीवाना बना दिया था। किन्तु अब प्रेरणाओं पर स्वार्थ हावी हो गया है और व्यक्ति अपनी जीवन की असुरक्षित धारा को सुरक्षित करने में सारे नैतिक एवं अनैतिक रास्तों का प्रयोग बेहिचक कर रहा है। लेकिन सवाल यह है कि सभी ओर अनैतिकता उत्पन्न हो जायेगी तो सेना कैसे संचालित हो पायेगी। और राष्ट्र कैसे सुरक्षित रह पायेगा। इसलिये इस दिशा में प्रयास करना सैनिकों के इस प्रकार के जीवन चरित्र से सैन्य कर्मठता पर तो प्रभाव पड़ ही रहा है साथ राष्ट्र की सुरक्षा भी खतरे में पड़ रही है। अगर पहरेदार में चोर बनने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाये तो कोई भी घर सुरक्षित नहीं रह सकता। इसलिये सैनिकों में अनुशासनहीनता का तेजी से बढ़ना राष्ट्र एवं समाज के लिये अशुभ संकेत है।

अधिकारियों के प्रति सैनिकों का दृष्टिकोंण एवं अधीनस्थ अधिकारियों के प्रति वरिष्ठ अधिकारियों का दृष्टिकोंण-

मानव जीवन के प्रार्दुभाव से ही सुरक्षा का प्रश्न साथ में ही जुड़ा हुआ है। सिन्धुकाल में दुर्गीकरण की एक मजबूत परम्परा प्राप्त होती है। सिन्धुघाटी की सभ्यता से मौर्य काल तक सुरक्षा के अनेक प्रयासों एवं व्यवस्थाओं का ज्ञान प्राप्त होता है। मौर्य के समय में यह परम्परा उत्कर्ष पर पहुंची जब अमात्यों के द्वारा एक विशाल सेना को क्रियाशील किया गया। राजपूत सेना वंशानुगत सामन्तों के वश में रहती थी। युद्ध प्रणाली में प्रत्यक्ष युद्ध को अधिक महत्त्व दिया जाता था। भारत में सैन्य अधिकारियों की नियुक्तियों की परम्परा मुगलों के द्वारा हुई। इन्होंने मनसबदारी व्यवस्था के अन्तर्गत अधिकारियों को सैनिक एवं प्रशासनिक दायित्त्व सौंपा। मुगलकाल में कुल मनसबदारों की 66 श्रेणियां थी। इनका विभाजन परस्पर जात व सवार के रूप में किया गया था। घुड़सवार सेना के साथ मुगलों ने तोपखाने एवं पैदल एवं बन्दूक चलाने वाले सैनिकों की भी भर्ती की थी। महत्त्वपूर्ण यह है कि मुगल सेना केवल अपने अधिकारियों के नियंत्रण में रहती थी। उसकी भर्ती प्रक्रिया, वेतन, भुगतान केन्द्रीय अधिकारियों के हुआ करते थे। यह आधुनिक सैन्य प्रणाली का पूर्वाभ्यास था। मुगलों ने इस प्रक्रिया के द्वारा नौकरशाही को प्रधानता प्रदान की। सोलहवीं शताब्दी के उपरान्त यहां पर यूरोप की वाणिज्यवादी विचारधारायें मूर्त रूप लेने लगी। परस्पर व्यापारिक हितों को लेकर विभिन्न देशों की कटुता भी व्यापक हुई। कम्पनियों का निर्माण करके उपनिवेशवाद की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। इससे सैन्य परिदृश्य में गम्भीर बदलाव आया। समुद्र राजनीति का केन्द्र बनने से नौसैनिक बेड़े का निर्माण एवं सैन्य प्रौद्योगिकी में गम्भीर बदलाव आरम्भ हुये। उपनिवेशों के विस्तार का मूलाधार समुद्र के वर्चस्व से जुड़ा था। इंग्लैण्ड, स्पेन, पुर्तगाल, फ्रांसीसी, डेनमार्क जैसे देशों के मध्य वर्चस्व की प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हुई। विश्व सैन्य परिदृश्य में गम्भीर बदलाव आया तथा जहाजी बेड़े में सेना लगायी जाने लगी। सुरक्षा के लिये सैन्य दस्ते एवं अनुशासन एवं प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। सैन्य अनुसंधान

भी प्रारम्भ किये। यूरोप में सैन्य विज्ञान को एक विषय के रूप में विश्वविद्यालय में सम्मिलित किया गया। महान खगोलविद् गौडलियोपाड्यो, विश्वविद्यालय में सैन्य विज्ञान के प्राध्यापक नियुक्त हुये थे। विश्वविद्यालय में सैन्य विज्ञान सम्मिलित करने से सेना में अनुसंधान समस्याओं का समाधान, रंगरूटों के जीवन शैली में तथा गम्भीर विषयों में चिंतन आरम्भ हुआ। इसी ने यूरोपीय सेनाओं को विश्व में अग्रणी बना दिया। कर्नाटक युद्ध के दौरान यूरोपीय सेना ने भारतीय सेनाओं को पराजित किया। इसका गम्भीर प्रभाव पड़ा। इससे अनुशासित विचारों एवं शस्त्रों से लैस यूरोपीय सेनायें भारत में अपना बेहतर राजनीतिक भविष्य बना सकती है। ब्रिटिश साम्राज्यवाद का चरण बंगाल से आरम्भ होता है। जब इन्होंने सैन्य बिग्रेडों का निर्माण करके प्लासी एवं बक्सर का युद्ध जीता था। भारत में भारतीय जनों से सैन्य भर्ती की परम्परा फ्रांसीसियों के द्वारा 1721–29 के मध्य आरम्भ की गई। 1748 में स्ट्रींजर लारेंस ने पहले पहल अंग्रेज सेना के लिये भारतीयों की भर्ती की। 1757 में बंगाल में प्रभावी होने के उपरान्त क्लाइव ने यूरोपीय मापदण्डों के अनुरूप प्रशिक्षित एवं अनुशासित सैनिकों की भर्ती का नियम बनाया। जिनकी कमान यूरोपीय अधिकारियों के पास थी।

19वीं शताब्दी के आरम्भ में कानून बनाकर 20000 सैनिकों की भारत में तैनाती अनिवार्य बना दी गई। जिसका खर्च कम्पनी उठाती थी। भारत में धीरे–धीरे कम्पनी सेना का आकार बढ़ता रहा। 1794 में सैनिकों की संख्या बयासी हजार थी जो 1824 में बढ़कर 154000 और 1856 में 256000 हो गयी। भारत में कम्पनी का सबसे अधिक खर्च सेना पर होता था। इनकी भूमिका राजस्व में भी होती थी, इसलिये डगलरपियर्स ने इसे सैन्य वित्तवाद कहा। सेना का दायित्व साम्राज्य विस्तार के साथ–साथ कृषक विद्रोह को भी रोकना था। कम्पनी की सेना में भर्ती के लिये किसानों के घरों के लोगों को महत्त्व दिया गया। इसके लिये मिथक का प्रचलन रहा कि चावल खाने वाले लोगों की अपेक्षा गेहूँ भोगी लोग शारीरिक दृष्टि से अधिक मजबूत होते हैं। यह नस्लीरूढ़ वाद 19वीं शताब्दी के अंतिम चरण में अधिक प्रभावी रहा। वारेन हेस्टिंगज

के द्वारा ब्राह्मणों, राजपूतों एवं भूमिहारों को सेना में अधिक प्राथमिकता दी गयी। ये वर्ग सेना में इसलिये सम्मिलित हुये क्योंकि इनके वेतन एवं भत्ते आदि सुविधायें रजवाड़ों से बहुत बेहतर थी। महत्त्वपूर्ण यह है कि वेतन नियमित मिलता था। 1820 तक कम्पनी की सैन्य पहचान सवर्णों की थी। 1820 के दशक में इस प्रक्रिया में बदलाव आया क्योंकि इस समय तक कम्पनी साम्राज्य अखिल भारतीय स्तर पर नही थी, जिससे गोरखाओं, पहाड़ियों व अन्य लोगों को सेना में शामिल किया गया। रजवाड़ों के समापन के बाद सैनिकों का झुकाव ब्रिटिश सेना की ओर हुआ। 1820 के उपरान्त गोरखा एवं गढ़वाली सैनिक सेना के विश्वसनीय सैनिक बन गये। जैसे–जैसे साम्राज्य का विस्तार बढ़ता गया, सेना में विभिन्न जातिगत समूह सम्मिलित होते ऐसे में इनमें सन्तुलन बैठाना कठिन हो गया। 1830 के दशक में सार्वभौम संस्कृति के विकास का प्रयत्न किया गया जिसके अन्तर्गत सभी सैनिकों के प्रति समान नीतियाँ बनाई जाने लगी। किन्तु इसी समय 1857 के विद्रोह के नियंत्रक के नीति निर्माण के लिये प्रयत्नशील कर दिया। भारत में सैनिक मामलों के विचार के लिये पील आयोग का गठन किया गया। इसकी सिफारिश से देशी सेना में विभिन्न संप्रदाय एवं जातियों को शामिल किया गया, और एक सामान्य नियम के अंतर्गत प्रत्येक रेजीमेण्ट में इसका मिश्रण किया गया। इस व्यवस्था में भर्ती मुख्यतः पंजाब पर केन्द्रित रही जो विद्रोह के दौरान वफादार बने रहे। पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत के पठानों एवं राजपूतों एवं नेपाल के गोरखाओं को भी सेना में शाामिल किया गया। इन समूहों को उग्र एवं विश्वसनीय माना जाता था। डेविड ओमीसीकी गणना के अनुसार 1914 तक भारतीय पैदल सेना का तीन चौथाई भाग पंजाब, नेपाल व पश्चिमोत्तर भाग आता था। ये सम्पूर्ण सेना ब्रिगेड आधार पर संचालित की जाती थी। 1857 के पहले भारतीयों को तोपखाने में नियुक्ति नहीं दी गयी और कोई भी भारतीय सूबेदार से आगे नहीं बढ़ सकता था। पील कमीशन की सिफारिश पर कोर्टमार्शल की व्यवस्था की गई। कहने का अर्थ है कि उपनिवेशवादी व्यवस्था में भारतीय सैनिकों पर अनेक कठोर नियम लागू किये गये। स्वतंत्रता के उपरान्त भारत जो अंग्रेजों से मुक्त हो गया लेकिन सैन्य अधिकारियों की मनः स्थिति से उपनिवेशवाद नहीं हट सका। आज भी हमारी

सैन्य व्यवस्था प्रजातांत्रिक नहीं हो सकी है। छावनियों में रहने वाले सैनिकों का खान पान रहन–सहन अन्य सुविधायें मानक के अनुरूप नहीं है। कोर्टमार्शल की प्रक्रिया से भयाक्रान्त होकर सैनिक अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के बारे मे आवाज नहीं उठा पाता है। परिवार एवं सैन्य सेवाओं से युक्त होने के कारण या तो आत्महत्या करता है या तो अपने साथियों या अधिकारियों को मारने का प्रयत्न करता है। वर्तमान सैन्य सेवा अधिकारी एवं सैनिकों के मध्य में एक गम्भीर द्वन्द्व है। अधिकारियों की शैली निरंकुशता से युक्त है एवं सैनिक प्रजातांत्रिक देश का निवासी होने के नाते बराबरी की अपेक्षा करता है। ऐसे में यदि इस समस्या का समाधान न हुआ तो सैन्य सेवाओं के माध्यम से देश के लिये भी एक खतरा उत्पन्न हो जायेगा। इसलिये अधिकारियों एवं सैनिकों के बीच समन्वय का भाव उत्पन्न करने की सार्थक प्रयास किया जाना चाहिए। अधिकारियों के प्रशिक्षण में सैन्य गतिविधियों के साथ–साथ समता एवं प्रजातांत्रिक समझ उत्पन्न करवाई जानी चाहिये। इससे उन्हें एहसास हो कि वे एक प्रजातांत्रिक देश के सैन्य अधिकारी हैं, जहां योग्यता के आधार पर अन्तर हो सकता है लेकिन व्यक्ति के आधार पर सभी मे समानता है। सैन्य छावनियों के वातावरण को भी घोर प्रजातांत्रिक बनाना होगा। सभी सैनिकों एवं अधिकारियों को एक ही रसोई का भोजन देने की नीति चलानी होगी। त्यौहार, उत्सव, राष्ट्रीय पर्व पर एकजुट होकर समारोह को मनाने का नियम बनाना होगा। अधिकारी को यह अहसास कराना होगा कि वह सैनिकों के संरक्षक है। ऐसे में उसका दायित्व सैनिकों के दुःखों को दूर करना है। इस प्रकार से दृष्टिकोंण में बदलाव सेना को प्रजातांत्रिक प्रशासनिक, देशभक्त एवं कार्यक्षमता में निपुण बनायेगा।

भ्रष्टाचार के मानक, भ्रष्टाचार का सैनिकों के साहस तथा दृष्टिकोण पर प्रभाव-

भारत में भ्रष्टाचार अब राष्ट्र के लगभग सभी क्षेत्रों में स्पष्ट रूप से अपने पैर जमा चुका है। विशेषकर हवाला काण्ड एवं तहलका प्रकरण के बाद रक्षा क्षेत्र में भ्रष्टाचार की उपस्थिति ने एक नये प्रकार के भय को जन्म दिया है। भारत में कालाधन एक बड़ी समस्या के रूप में हमेशा से उपस्थित रहा है और अब राष्ट्र में 40 करोड़ से लेकर एक लाख करोड़ रूपये तक का काला धन होने का अनुमान है। हवालाकाण्ड ने राजनीतिज्ञों के कश्मीरी आतंकवादियों से सम्पर्क के संकेत दिये थे। सन् 1993 के मुंबई बम काण्ड में मारे गये तीन सौ लोग एक कस्टम अधिकारी के उस भ्रष्टाचार के शिकार हुये, जिसने 20 करोड़ रूपये की रिश्वत लेकर घातक आर0डी0एक्स0 की खेप को आने दिया था।[32] वाररूमलीक काण्ड में भारत की सुरक्षा की अग्रिम बीस वर्षीय योजना सहित अनेक अतिसंवेदनशील गुप्त जानकारियाँ विदेशों को बेंच दी गयी। इसमें तीनों सेनाओं के सैन्य अधिकारियों के नाम उभर कर सामने आया। जिनमें कमाण्डर रविशंकरण मुख्य अभियुक्त हैं। ये तत्त्कालीन एडमिरल के भतीजे थे। अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा की अवधारणा का परम्परागत स्वरूप अब तेजी से बदल रहा है। यह अवधारणा पहले की तरह सैनिक सन्दर्भों में केन्द्रित न होकर उन अपरम्परागत क्षेत्रों तक विस्तार कर रही है, जिसे पहले सुरक्षा चिन्तक इस अवधारणा का हिस्सा नहीं मानते थे। विशेषकर शीतयुद्ध के अवसान और सैनिक गतिविधियों में एक ध्रुवीय प्रभुत्त्व के बाद यह अवधारणा और अधिक प्रमुखता अर्जित कर रही है। 25 जुलाई से 4 अगस्त 1999 के बीच अमेरिकी रक्षा विभाग ने एक गोपनीय अध्ययन कराया था। न्यूपोर्ट स्थिति नेवल वार कालेज में सम्पन्न इस अध्ययन ''एशिया 2025''[33] में यह जानने की कोशिश की गई थी 21 वीं शताब्दी के पहले कुछ वर्षों में एशिया क्षेत्र में अमेरिकी रक्षा हितों को कैसी चुनौतियां मिल सकती हैं जो तथ्य उभर कर सामने आये उनमें अमेरिका का विरोधी भारत और चीन होगें तथा पकिस्तान

शक्तिविहीन हो चुका होगा। शीतयुद्धोत्तर काल में परम्परागत सैनिक और राज्य केन्द्रित सुरक्षा की अवधारणा धीरे–धीरे समाप्त हो रही है, विशेषकर विकासशील देशों में बड़ी जनसंख्या, भुंखमरी, अशिक्षा, और कुपोषण जैसी चुनौतियाँ बड़े खतरों का स्रोत बनती दिख रही हैं।[34] पर्यावरणीय खतरे सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में बढ़ती हिंसक प्रवृत्ति, जातीय और वर्ग केन्द्रित संघर्ष जैसी घटनायें राज्य सुरक्षा की परम्परा छवि को बदल रही हैं।[35] अब यह व्यापक तौर पर माना जाने लगा है राष्ट्रीय सुरक्षा, राज्य सुरक्षा ही नहीं बल्कि मानवीय सुरक्षा भी है।[36] अगर सेना में भ्रष्टाचार को 'ग्रेडसाफेक्टमाडल' (*GREDD SAFECT*) के द्वारा समझने का प्रयास किया जा सकता है। G : गर्वनेन्स, RE : राइजिंग एक्सपेक्टेसन्स, D : ड्रग ट्रैफिकिंग, दूसरा D : डिजास्टर, SA : स्माल आर्म्स, F : फूड सिक्योरिटी, E : इनवायरमेन्टल सिक्योरिटी, C : करप्शन तथा T : टेरेरिज्म का प्रतिनिधित्व करता है।

शासन व्यवस्था एवं सुरक्षा का परस्पर सम्बन्ध इस समय दक्षिण एशियाई देशों के विकास क्रम में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। राजनीतिक भ्रष्टाचार, सेना के लिये एक खतरनाक चुनौती है, जिसे सन् 1995 में प्रस्तुत बोहरा कमेटी की रिपार्ट में प्रस्तुत निष्कर्षों से आसानी से समझा जा सकता है। जिसमें कहा गया था कि यहां आपराधिक गिरोहों, नौकरषाही और राजनीतिज्ञों में आधारभूत गठजोड़ हैं।[37] राज्य के संसाधन भी जनता के लिये नहीं बल्कि राजनीतिज्ञों के लिये अधिक नियोजित किये जा रहे हैं।[38] जिससे सेना के एक बड़े भाग में व्यवस्था के प्रति असन्तोष मुखर होने लगा है। विशेषज्ञों का कहना कि अगले एक दशक में यह अभिव्यक्तियाँ और अधिक हिंसक स्वरूप लेंगी, जिसे रोक पाना सरकारों के लिये बड़ी चुनौती होगी। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के देशव्यापी पहुंच ने मध्यमवर्गीय तथा निम्नवर्गीय परिवारों अपनी क्षमता से अधिक प्राप्त करने की लालसा पैदा कर दी हैं। सैनिक इन्हीं परिवारों से निकल कर सेना में आते हैं और इन अभिलाषाओं की पूर्ति करने में जब असमर्थ पाते हैं तो वे भ्रष्टाचार की ओर उन्मुख हो जाते हैं। जो भविष्य में राष्ट्र के लिये गंभीर चिंताये उपस्थित कर सकता है। मणिपुर तथा म्यांमार की सीमा पर 77

अवैध लेवोरेट्रीज है जो इस क्षेत्र में हीरोइन के उत्पादन और प्रसार के लिये जिम्मेदार है।[39] इस पूरे प्रसंग में सर्वाधिक खतरनाक तथ्य ड्रगमाफिया तथा अन्य राष्ट्र के हिस्सों में सक्रिय विघटनकारी आतंकवादियों एवं सैनिकों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध होना है। आई0एस0आई0 की प्रमुख भूमिका नेशनल सोशलिस्ट काउन्सिल आफ नागालैण्ड के सदस्य भारतीय सीमा में बाहर से आये मादक पदार्थ सामग्री के पैकेटों को देश के अन्य हिस्सों में पहुंचाते हैं।[40] भविष्य में सरकार के प्रति लोगों की घटती निष्ठा राष्ट्र में ऐसे आपराधिक समूहों को सामाजिक स्वीकृत एवं प्रतिष्ठा दिला सकती है। यह देश में 'नार्को सुपर स्टेट' की अवधारणा को जन्म देगी।[41] इस घृणित कार्य में भ्रष्टाचारी सैन्य अधिकारियों की भी भूमिका होती है।

राष्ट्र में प्राकृतिक आपदायें केवल जनहानि ही नहीं करती बल्कि समाज, राजनीतिक व्यवस्था, बैचारिक आधार, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्षेत्रों, आर्थिक, तकनीकी तथा वैज्ञानिकों क्षेत्रों में अपूर्णनीय क्षति पहुंचाती है।[42] यहां भी भ्रष्टाचार देखने को मिल ही जाता है। सन् 1991 में भारतीय सेना उग्रवादियों से मुठभेड़ के बाद 151 मशीनगने, 849 पिस्तौलें, सन् 1999 में 59 मशीनगनें और 358 पिस्तौलें थी। 1991 में 274 किग्रा0 विस्फोटक और 18 छोटे विस्फोटक उपकरण जबकि 1999 में 3233 किलोग्राम तथा 466 हो गई।[43] इस पूरे मामले में सर्वाधिक खतरनाक बात यह है कि इन विस्फोटक पदार्थों का प्रसार कुछ भ्रष्ट कर्मियों की लापरवाही के चलते पूरे देश में कोने–कोने तक फैल चुका है। विशेषज्ञों का अनुमान है आने वाले दशकों में यह प्रसार और तेजी से होगा और तब राष्ट्र वस्तुतः विस्फोटक के मुहाने पर होगा। सन् 1995 में भारत की जनसंख्या 93 करोड़ थी और अनुमान है कि 2025 तक यह दो अरब तैंतीस करोड़ तक पहुंच जायेगी। दुःखद तथ्य यह है कि बढ़ी हुयी इस आबादी के अनुपात में हमारा खाद्य उत्पादन अपेक्षित गति से नहीं बढ़ रहा है और इस बात के खतरे भी स्पष्ट परिलक्षित होने लगे हैं कि देश में आबादी का एक बड़ा हिस्सा खाद्यान्न सामग्री से विपन्न होगा। सेना में खाद्यान्न घोटाला जिसमें मेजर जनरल तथा ब्रिगेडियरों का एक बड़ा रैकेट पकड़ा गया जिससे स्पष्ट हो जाता है

कि भविष्य में क्या स्थिति होगी तथा सेना कितने स्तर तक विश्वसनीय होगी, सुरक्षा के प्रति यह एक चिंता का विषय है। पर्यावरणीय परिवर्तन के कारण कई नुकसान हो सकते हैं। कृषि योग्य भूमि की कर्मी, जल संकट, जलवायु में परिवर्तन, रेगिस्तानी क्षेत्र में वृद्धि तथा नवीनीकरण और तेजी से हो रहे पारिस्थितिकीय क्षति के चलते बहुत सी समस्यायें उत्पन्न कर देगी। जर्मन स्थिति भ्रष्टाचार के उन्मूलन के क्षेत्र में कार्यरत प्रसिद्ध गैर सरकारी संगठन –''ट्रांसपरेन्सी इण्टरनेशनल'' द्वारा जारी वार्षिक भ्रष्टाचार सूचकांक तालिका में 85 देशों की सूची में इस वर्ष भारत का स्थान 61वाँ था, जबकि दो वर्ष पूर्व यह 66 स्थान पर था। अगले दो वर्षों में इसे 40वें स्थान पर आ जाने की आशंका है।[44] देश में आतंकवादी समस्या से सैनिक बहुत प्रभावित हो रहें हैं। सुरक्षाबलों द्वारा उपलब्ध कराये गये आकड़ों के मुताबिक कश्मीर में अभी भी 400 से अधिक विदेशी आतंकवादी मौजूद हैं।[45] आने वाले कुछ वर्षों में यह देश के लिये अत्यन्त चिंता जनक चुनौती प्रस्तुत करेगा भारतीय सुरक्षा चिंतक परम्परागत सैन्य खतरों पर आधारित सम्भावित रणनीतिक उपायों के साथ–साथ इन अपरम्परागत प्रकृति वाले किन्तु सम्भवतः अधिक विनाशक प्रवृत्ति वाले खतरों से निपटने की कार्य योजना तैयार करें तथा सेना के नैतिक स्तर में सुधार करके ही सेना इन सभी चुनौतियों का सामना कर सकने में सक्षम होगी।

सैनिक नेतृत्व की नैतिकता का सैनिक नियंत्रण पर प्रभाव-

जब किसी निर्जीव वस्तु का उचित प्रबन्ध करके उससे अनगिनत व आश्चर्यचकित परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। निर्जीव परमाणुओं को व्यवस्थित करके नाभिकीय बम तक बना लिये गये हैं, तो मानव जैसे सर्वश्रेष्ठ व सजीव तत्त्व का यदि उचित प्रबन्धन कर लिया जाय तो उससे असीम लाभ उठाया जा कसता है। मानव प्रकृति की सर्वोत्तम अमूल्य निधि है इसमें अपार ऊर्जा, गुण व सामर्थ्य भरा पड़ा है। आवश्यकता है उसके उचित प्रबन्ध व्यवस्था की जिससे अनुकूल परिस्थितियों का निर्माण कर इच्छित सफलता प्राप्त की जा सकती है। वैज्ञानिक विकास ने यांत्रिक युग का सूत्रपात किया अब मनुष्य की तरह यंत्र कार्य करने लगे हैं। यहां तक कि भारी जोखिम वाले कार्यों में मनुष्य के स्थान पर यन्त्रों का सहारा लिया गया है। युद्ध के लिये सेना में अतिविनाशक शस्त्रों को सम्मिलित किया गया है। किन्तु ऐसा नहीं है कि अब युद्ध में जनशक्ति की आवश्यकता नहीं रह गयी है, हाँ संख्या में कमी हो सकती है। उनकी कार्यकुशलता एवं बौद्धिक क्षमता को और अधिक विकसित करना होगा, क्योंकि मनुष्य ही ऐसे शस्त्रास्त्रों का निर्माता, नियंत्रक और संचालक होता है। आवश्यकता आविष्कार की जननी है। आविष्कार उपयोगिता को बढ़ावा देती है और अधिक उपयोगिता प्रबन्ध को जटिल बनाती है। मानव को हर पग पर सुविधाभोगी बना दिया है और सेना भी उन्हीं लोगों में से भर्ती हुये व्यक्तियों से बनी होती है। अतएव आधुनिक सुशिक्षित समाज से भर्ती हुये लोग सैनिक के रूप में अपने उपयोग की वस्तुओं की उपलब्धता तथा अपने अधिकारों की सजगता पर अधिक ध्यान रखते हैं। ऐसे सैनिकों के हितों का पूर्ण ध्यान रखते हुये उचित अनुशासन बनाये रखने के लिये कुशल नैतिक नेतृत्व की तथा मानव प्रबन्धन की आवश्यकता होती है। मानव प्रबन्ध सैनिक दृष्टि से सैनिक का प्रबन्धन करना है क्योंकि सेना सशस्त्र व्यक्तियों का सुसंगठित दल होता है। मानव प्रबन्ध का तात्पर्य सेना के सैनिकों की ऐसी प्रबन्ध व्यवस्था से है जिससे समय पर उनकी समस्त उचित व जरूरी आवश्यकतायें सुगमता से पूरी हो सके। मानव प्रबन्ध सैनिकों के लिये की जाने वाली वह व्यवस्था

है जिसमें उसके दैहिक, बौद्धिक एवं नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है जिससे सैनिक शारीरिक एवं मानसिक दोनों रूप से यौद्धिक आकांक्षाओं के अनुरूप पूर्ण समर्थ हो जाता है। सैनिकों को नियंत्रित रखने में भोजन, वस्त्र, शस्त्रास्त्र, अनुशासन, साहस आदि का प्रबन्धन किया जाता है। इन उपयोगी तत्त्वों के प्रबन्धन में यदि कमी हो जाती है तो सैनिक पूरे मनोयोग एवं पूरी शारीरिक क्षमता का चाह कर भी योगदान नहीं दे पाता तथा अनुशासनहीन अनियंत्रित हो जाता है। सेना का व्यवसाय मानव जीवन का सबसे कठिनतम कार्य है। इसमें राष्ट्र अपनी पूरी ताकत एवं सैनिक अपनी पूरी क्षमता भेंट कर देता है। ऐसी स्थिति में यदि सैनिक किसी अभावग्रस्तता! का शिकार रहता है तो अपने उद्देश्य को पाने से दूर रह जाता है अतः ऐन–केन प्रकारेण मानव प्रबन्धन मानक के अनुरूप होना चाहिये, जिससे सैनिक पूर्ण दक्षता के साथ अपना योगदान देकर राष्ट्र का लक्ष्य अर्जित कर सकें।

प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध में भारतीय सशस्त्र सेनाओं ने मित्र राष्ट्रों की तरफ से भाग लिया था। इन युद्धों में भारतीय सेना की व्यावसायिक कमजोरियां जिस तरह से सामने आयी इस युद्ध में वह बहुत दिल दहलाने वाले तथ्य सामने आयें हैं भारतीय सिपाही सिंगल फायर राइफल को लेकर जर्मनी के सैनिकों की स्वचालित मशीनगनों की फायर के सामने किस प्रकार असहाय हो जाते थे, और भारतीय जवानों की लाशों का ढेर लग जाता था, वे साधन विहीन होकर विपरीत मौसम में भी युद्ध करते थे। भारतीय सैनिकों का प्रशिक्षण केवल देशी राजाओं की सेनाओं से लड़ने तक ही सीमित था। लेकिन अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिये इन सैनिकों को ऐसे युद्ध में झोंक दिया जिसके बारे में सैनिकों ने कभी स्वप्न में भी नहीं सोंचा था लेकिन भारतीय सैनिकों ने अपनी नैतिक दृढ़ता के साथ अपने कर्तव्यों का पालन किया। अन्ततः मित्र राष्ट्रों की व्यावसायिक कुशलता ने धुरी राष्ट्रों को पराजित कर दिया। मित्र राष्ट्रों साथ केवल नैतिकता के शब्द जुड़े थे जिससे उसकी सेनाओं का मनोबल ऊँचा था।

1962 के भारत चीन युद्ध में जिस प्रकार चीनी सेना पर्वतीय युद्ध में निपुण थी भारतीय सेना को उस समय तक पर्वतीय युद्धों का प्रशिक्षण भी प्राप्त नही था। रेगिस्तानी सेनाओं को पर्वतीय युद्ध में संलग्न कर दिया गया था। इसके अतिरिक्त भारतीय सेनाओं के शस्त्रास्त्र भी चीन की तुलना में निम्नस्तर के थे। फिर भी भारतीय सैनिको ने अपनी नैतिक जिम्मेदारी के कर्तव्य बोध से युद्ध से अपने पैर पीछे नहीं रखे और रक्त की अंतिम बूंद तक चीनियों से लोहा लेते रहे। 6 अगस्त एवं 9 अगस्त की हिरोशिमा एवं नागासाकी की घटना ने अमेरिका को सुपर पावर का दर्जा प्राप्त हो गया जो आज विश्वरंगमंच पर अपनी व्यावसायिक कुशलता के बल पर छाया हुआ है और विश्व पुलिसमैन का कार्य कर रहा है। उसकी सशस्त्र सेनायें अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिये अफगानिस्तान, ईराक, आदि देशों में संलग्न हैं।

आज भारतीय सशस्त्र सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के साथ–साथ नैतिक मूल्यों को भी बढ़ावा मिलना चाहिये जिससे सेना राष्ट्रीय हितों की पूर्ति में सामर्थ्यवान बन सके।

नैतिक मूल्यों का सशस्त्र सेनाओं की व्यावसायिक दक्षता पर प्रभाव-

भारतीय सेना में असीमित क्षमता एवं ऊर्जा है आवश्यकता इस बात की है इसका बेहतर उपयोग कैसे किया जाय इसके लिये नियोजन एवं प्रबंधन की सख्त आवश्यकता है। इसके द्वारा हम इसका सर्वोत्तम लाभ ले सकते हैं एवं मानवीय संवदेना का विकास कर सकते हैं। नेतृत्व सेना का ऐसा कारक है सेना का आधार बनकर उसके विकास को दिशा, वास्तव में समुचित नेतृत्व के अभाव में सेना की सम्पूर्ण नीतियां दिग्भ्रमित एवं प्रभावहीन हो जाती है। अतएव खाद्य सामग्री के भण्डारण, कच्चेमाल की सुरक्षा, औद्योगिक इकाइयों के संचालन, राष्ट्रीय मनोबल में वृद्धि तथा विकास सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण कार्यकुशल नेतृत्व द्वारा ही संभव है। शांति काल में राष्ट्रीय शक्ति का निर्माण एवं कुशल वैदेशिक नीति का संचालन तथा राष्ट्र के आन्तरिक मूल्यों की सुरक्षा हेतु वांछित स्वस्थ आर्थिक व सामाजिक वातावरण कुशल नेतृत्व में ही सम्भव है। चर्चिल के नेतृत्व में द्वितीय विश्व युद्ध में ब्रिटेन की विजय, माओं के नेतृत्व में सफल माओवादी आंदोलन, श्रीमती इन्दिरा गाँधी के कुशल राजनीतिक नेतृत्व में बांग्ला देश मुक्ति संघर्ष में भारत की शानदार विजय इसके प्रमुख उदाहरण है।

इस दृष्टि से फ्रेडरिक महान व नैपोलियन के सैन्य योगदान को भुलाया नहीं जा सकता क्योंकि इन्होंने अपने विलक्षण नेतृत्व से सामरिकी के क्षेत्र में कई नवीन सिद्धान्तों को जन्म दिया। अरब इजराइल युद्धों में इजराइलियों की विजय, भारत पाक युद्धों में भारत की विजय तथा खाड़ी युद्ध (आपरेशन डिजर्ट स्टार्म–1991) मित्र राष्ट्रों के विजय के पीछे कुशल नेतृत्व की निर्णायक भूमिका रही है।[46] महान लीडर अपने अनुयायियों को जुड़ाव का एहसास दिलाने में विशेष रूप से निपुण होते हैं। नैपोलियन बोनापार्ट लोगों को महत्त्वपूर्ण अनुभव कराने और जुड़ाव का एहसास कराने में निपुण थे। वे अपने कैम्प में घूमने व हर अधिकारी को उसे नाम से बुलाने के लिये

मशहूर थे। जब वे किसी सैनिक अधिकारी से बात करते थे तो वे उसके गृहनगर, पत्नी और परिवार के बारे में जरूर पूंछते थे। नैपोलियन किसी ऐसे युद्ध के बारे में भी जरूर बात करते थे जिसमें वे जानते कि उस आदमी ने भाग लिया था। अपने अनुयायिओं के प्रति वे जिस रूचि का प्रदर्शन करते थे, उन्हें जितना समय देते थे उससे टीम भावना और जुड़ाव का एहसास विकसित होता था। कोई आश्चर्य नहीं कि उनके सैनिक उनके प्रति इतने निष्ठावान थे।[47] सैनिकों की दृष्टि में यदि नेतृत्व कर्ता अर्थात सेनानायक का चरित्र अच्छा है तथा उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण है तब सभी सैनिक पूर्ण मनोयोग से अपने सेनानायक के प्रति समर्पित होते हैं। सेना नायक का चरित्र वृक्ष की तरह है और छवि उसकी छाया की तरह। छाया महज सोंच है, असली चीज वृक्ष है। अब्राहम लिंकन ने एक भाषण में ये विचार प्रस्तुत किया।[48] सेनानायक अपने उच्च्य चरित्र के नैतिक बल से सैनिकों में एक असीम उत्साह का संचार कर उनके अन्दर आशा जाग्रत कर देते हैं। कोई व्यक्ति बिना भोजन के चालीस दिन तक, बिना पानी के चार दिन तक और बिना हवा के चार मिनट तक रह सकता है परन्तु बिना आशा के वह सिर्फ चार सेकण्ड तक ही रह सकता है। जब सैन्य अधिकारी सैनिकों को एक सपना देते हैं और उनकी भावी सफलता की तश्वीर बनाते हैं तो दरअसल आप उन्हें हौंसला बंधाते हैं प्रेरित करते हैं और आगे बढ़ने को प्रेरित करते हैं। वर्तमान समय में सैन्य अधिकारियों तथा सैनिकों में इस बात की कमी देखने को मिल रही है जिससे सैनिक असन्तुलित होकर खुद को तथा सैन्य अधिकारियों को भी पलक झपकते गोलियों से छलनी कर देता है। एक चरित्रवान सैन्य अधिकारी अपने सैनिकों का नेतृत्व करने से पहले उनसे प्रेम करता है, जिससे सैनिकों को यह अहसास हो जाता है कि आप उनकी परवाह करते हैं। उसी पल (सैन्य अधिकारी) के प्रति उनका नजरिया बदल जाता है और सेना तथा सैन्य अधिकारी आपस में प्रेम की डोर से बंध कर एक आदर्श अनुशासन स्थापित करने में सफल हो सकते हैं। सैन्य अधिकारी के अन्दर ये गुण होने चाहिये कि वह अपने अधीन सैनिकों की महत्त्वाकांक्षा को समझ सके तथा उनके सपनों को एक दिशा प्रदान कर सके। अमेरिकी राष्ट्रपति विडरो बुल्सन ने कहा था "हम सपनों के

माध्यम से विकास करते हैं। सभी महान लोग स्वप्नदर्शी होते हैं। वे बंसत की नर्मधुंध में या लम्बे जाड़े की शाम को जलती लाल आग में चीजें देखते हैं। हममें से बहुत से लोग इन महान सपनों को मर जाने देते हैं, परन्तु कुछ लोग उन्हें पोषण देते हैं और सुरक्षित रखते हैं बुरे समय में अपने सपनों को पोषण दें जब तक कि वे सूरज की रोशनी और प्रकाश में न आ जायें जो हमेशा उन लोगों के जबान में आता है जिन्हें अपने सपनों के साकार होने की सच्ची आशा होती है।'' प्रबल इच्छा वह ईंधन है जिससे सैनिकों को अपने सपनों को पोषण देने और उन्हें सुरक्षित रखने में मदद मिलती है। हेलन केलर के अनुसार ''जब किसी सैनिक के मन में उड़ने का आवेग हो तो वह कभी रेंगने के लिये तैयार न होगा'' आज सेना में भर्ती होने वाला जवान जागरूक तथा शिक्षित है वह एक सपना संजोकर सेना में भर्ती होता है लेकिन वहां पर जब उसके आत्मसम्मान को ठेंस पहुंचती है तथा ब्रिटिश मानसिकता से पीड़ित सैन्य अधिकारी द्वारा अपमानित होकर दण्डित होता है तब उसके सारे सपने दफन हो जाते हैं और वह अपने सपनों को दफन करना खुद को दफन करना मान लेता है, क्योंकि वह वास्तव में सपनों से बना है। नैपोलियन हिल ने कहा है **''अपने सपनों को इस तरह सहेज कर रखे, जैसे कि वे आपकी आत्मा के शिशु हों, आपकी उपलब्धियों के ब्लूप्रिंट हों''** सैनिक अपनी समस्याओं के समाधान के लिये अपने अधिकारियों से अपेक्षा करते हैं सैनिकों को बहुत कम चीजें इतना हताश करती हैं जितना कि समस्या का अप्रत्याशित आक्रमण, हताशा तब बढ़ जाती है जब सैनिक अपने अधिकारी से उसकी अपनी मदद नही पाता है। सैनिकों को अनुशासित रखने में सैन्य अधिकारियों के चरित्र का बहुत बड़ा योगदान होता है। जिस प्रकार शिशु अपने बड़ों का अनुकरण करता है उसी प्रकार सैनिक भी अपने सैन्य अधिकारी का अनुकरण करते हैं। जिस सैन्य यूनिट का अधिकारी का जैसा आचरण होगा उसी प्रकार वहां अनुशासन होगा। सैन्य अधिकारी सैनिकों के बारें में ऊँचे विचार रखेंगे और उस विचार पर दृढ़ रहेंगे तो अन्ततः सैनिक भी अपने अधिकारी के बारे में उसी तरह का नजरिया रखने लगेंगे। यह प्रक्रिया सैन्य अधिकारियों तथा सैनिकों के बीच एक रिस्ता बनाती है और मजबूत साझेदारी का रास्ता तैयार करती है।

कोई भी सेना अच्छी या बुरी नहीं होती बल्कि सेनानायकों पर यह निर्भर करती है। प्लूटार्क ने लिखा है "सबसे उपजाऊ जमीन को भी अगर जोता न जाय और अच्छे बीज न डाले जाय तो वहां पर खरपतवार के सिवाय कुछ नहीं उगेगा।" इसी प्रकार सैनिक होते हैं यदि सेनानायकों द्वारा सैनिकों मे उत्साह का संचार करके उनके अन्दर आशा की किरण जाग्रत करके सेना को ओजस्वी बना सकते हैं– ज्याला फान्टेन के अनुसार **"मनुष्य को इस तरह बनाया गया है जब भी कोई चीज उसकी आत्मा को सुलगा देती है तो असम्भव शब्द गायब हो जाता है।"** बाबर के हाँथ से जब फरगना और कान्धार दोनों का शासन निकल गया, उस समय भी बाबर विचलित नहीं हुआ और अपने कुछ बचे सिपाहियों के साथ एक गुफा में भविष्य की रणनीति तय कर रहा था उस समय बाबर के सैनिकों का मनोबल टूटा हुआ था तथा वे विजय को आकाश के तारे सदृश्य समझने लगे थे, बाबर ने जब भोजन के समय सभी सैनिकों को सामने बैठालकर रोटियां वितरित किया, बाबर के लिये मात्र एक रोटी शेष बची बाबर पूर्ण प्रसन्नता के साथ उस रोटी को सबके सामने ही बैठकर खाया। बाबर ने अपने सैनिकों के सामने एक आदर्श छवि प्रस्तुत की जिससे उसकी सेना का उत्साह इतना बढ़ गया कि काबुल पर विजय प्राप्त कर लिया। इतना ही नहीं 1526 में पानीपत के संग्राम में बाबर की मात्र बारह हजार सेना ने इब्राहिम लोदी की एक लाख सेना पर विजय प्राप्त कर ली। खानवाँ के युद्ध में राणा सांगा की सेना की वीरता तथा उनकी सैन्य संख्या को देख कर बाबर की सेना हतोत्साहित हो गयी उस समय बाबर ने अपने सभी सैनिकों को धर्म के नाम पर लड़ने को प्रोत्साहित किया जिससे सैनिकों में एक नयी चेतना जाग्रति हुयी और वे विजयी हुये। 1971 के भारत–पाकिस्तान युद्ध में लेफ्टीनेंट जनरल जगजीत सिंह अरोरा ने अपनी सेना का इतनी कुशलता पूर्वक संचालन किया तथा स्वयं युद्धक्षेत्र में प्रत्यक्ष भाग लेते हुये पाकिस्तानी जनरल ए0के0 नियाजी सहित लगभग एक लाख सैनिकों को आत्मसमर्पण करने पर मजबूर कर दिया। लेकिन वर्तमान में सैन्य अधिकारियों के नित नवीन भ्रष्टाचार के कारनामें सामने आ रहें हैं कही पर नौसेना कमाण्डर वार रूम लीक काण्ड को अंजाम दे रहें हैं या मेजर जनरल अपने सैनिकों के खाद्यान्न

घोटाले में लिप्त पाये जा रहें हैं तो कोई सैन्य अधिकारी नशीले पदार्थों की तश्करी में गिरफ्तार किये जा रहे हैं जिसके कारण सैनिकों में आत्महत्याओं का जो दौर चला वह रूकने का नाम नहीं ले रहा। अब सैनिक अपने साथियों तथा अधिकारियों को भी अपना निशाना बना रहें हैं। राजनीतिक नेतृत्व तो रक्षा सामग्री आयात पर स्वयं के आय का स्रोत मानते हैं जिसके अनेकों मामले सामने आ चुकी हैं जैसे बोफोर्स घोटाला, ताबूत घोटाला, स्कोर्पीन पनडुब्बी मामला, डैनलतोप मामला आदि अनेकों उदाहरण हैं। जिसका आज शिक्षित एवं जागरूक सेना पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ रहा है। अतः समय रहते सैन्य नेतृत्व को चरित्रवान बनाकर इस समस्या का समाधान खोजा जा सकता है। सैन्य अधिकारियों के प्रशिक्षण स्थल, नेशनल डिफेंस एकेडमी खड़गवासला, इण्डियन मिलिट्री एकेडमी देहरादून आदि संस्थाओं में सैन्य अधिकारियों को स्त्रातजी एवं सामरिकी के प्रशिक्षण के अतिरिक्त नैतिकता (चरित्र) एवं प्रजातांत्रिक मूल्यों का प्रशिक्षण प्रदान करना सर्वाधिक अपरिहार्य हो गया है।

सन्दर्भ

1. रक्षार्थ – Vol 1 No. 2 इलाहाबाद विश्व विद्यालय इलाहाबाद 2000 पृ0 –79

2. खन्ना विनोद सी0 "इम्प्रूविंग इण्डिया चाइना रिलेशन्स" सेमिनार नई दिल्ली दिसम्बर 1998

3. जवाहर लाल नेहरू संविधान सभा में 3 अप्रैल 1948 को भाषण, सी0ए0डी0 एवं 'दि स्पीचेज 1946–49, प्रकाशन विभाग भारत सरकार, पृष्ठ 73–74

4- रक्षार्थ Vol 3 No. 3-4 इलाहाबाद विश्व विद्यालय इलाहाबाद विन्टर 2001 P-164

5. हि [illegible] ानपुर, 6 नवम्बर 2006 पृष्ठ– 7

6. अमर उजाला इलाहाबाद 10 अगस्त 2004

7. राष्ट्रीय सहारा कानपुर 27 मई 2007 पृष्ठ– 16

8- *Ibid.. P. 16.*

9- *Ibid.. P. 16.*

10. आज 14.11.2006

11. जनसत्ता 30.11.2006

12. इंडिया टुडे नवम्बर 2006 पृष्ठ –40

13. स्टेट्स मैन, 5 मई 1959

14. राजू जी0सी0 टॉमस, इंडियन सिक्यूरिटी पॉलिसी (प्रिंसटन न्यू जर्सी प्रिसंटन यूनीवर्सिटी प्रेस, 1986) पृष्ठ–184

15. टामस टी0 7 पृष्ठ संख्या – 21, सिपरी टी0 – 11 पृष्ठ–475

16. एस0एस0 खेड़ा इंडियन डिफेंस प्राबलम्स (नई दिल्ली ओरियंट लांगमैंस, 1968 पृष्ठ – 47)

17. टाइम्स आफ इंडिया, 13 जुलाई 1963 टॉमस, टी0 – 7 पृष्ठ– 26

18. सिपरी टी0 ' 11, पृष्ठ–479–80

19- Ibid.. P.. 479

20- Ibid.. P. 497

21. रिचर्ड पी0 क्रोनिन ''प्रासपेक्ट्रस फार न्यूक्लियर प्रालिफरेशन इन साउथ एशिया, दि मिडिल ईस्ट जनरल, वाल्यूम – 37, नं0 4 आटम – 183, पृष्ठ 597

22. ल्योनार्ड एस0 स्पेक्टर, 'दि अनडिक्लेर्यउ बॉम्ब' (कैम्ब्रिज मास बैलिंगर 1988 पृष्ठ –111–15)

23. क्रोनिन टी0 26, पृष्ठ 597 इंडिया परमाणु उर्जा विभाग, वार्षिक रिपोर्ट – 1988–89 (बम्बई – 1989)

24. जे0एन0 चौधरी, इंडियाज प्राब्लम्स आफ नेशनल सिक्यूरिटी इनदि सेवेंटीज (नई दिल्ली यू0 एस0 आई0 1973) पृष्ठ–16–20

25. स्पेक्टर, टि0 34 पृष्ठ–102,111,112

26. इंडिया टि0 28 पृष्ठ–25–26

27. यू0एस0 डिपार्टमेन्ट ऑफ डिफेंस सोवियत मिलिट्री पावर (वाशिगंटन डी0सी0 यू0 एस0 गर्वनमेन्ट प्रिटिंग आफिस 1988) पृष्ठ– 26

28. स्पेक्टर टी0 पृष्ठ 49–51 यू0 एस0 कांग्रेस सीनेट कमेटी आन फारेन रिलेशंस, हियरिंग्स ऑन एड ऐण्ड दि प्रोप्रोज्ड आर्म्स सेल्स ऑफ एफ–16 टु पाकिस्तान, कांग्रेस प्रथम सत्र, 12 तथा 17 नवम्बर 1981.

29. एच0पी0 मामा, ''इंडियाज इस्पेस प्रोग्राम ''इंटराबिया, वैल्यूम – 1, 1960 पृष्ठ सं0–60, 'इंडिया लांचेज टु न्यू सेटेलाइट'' एवीएशन वीक ऐण्ड स्पेस टेक्नोलॉजी, 28 जुलाई 1980 पृष्ठ सं0–17, इंडिया राकेट कुडमांट मिलिट्री ऐम्बीशंस, न्यू साइिटिस्ट, 26 अगस्त 1982 पृष्ठ – 555

30. विलियम्स वेस्टर डाइरेक्टर, सी0आई0ए0 टेस्टीमनी ऑन न्यूक्लीयर नॉन प्रालिफेरेशन ऐट ऐ हियरिंग ऑफ दि गर्वनमेंटल अफेयर्स कमेटी चेयर्ड वाइ जॉन ग्लेन, स्ट्रेटजिक डाइजेस्ट में उद्धृत, वाल्यूम – 19 सं0 8 अगस्त 1989 पृष्ठ 945

31. बोरा कमेटी की रिपोर्ट पृष्ठ संख्या 5, गृहमंत्रालय भारत सरकार–1995

32- रक्षार्थ VOL 3 –No 3-4 इलाहाबाद वि0वि0 इलाहाबाद Winter 2001 P-149

33- हरीष मेहता, 'टू प्ले दि न्यूक बाक्स ट्यून' आउट लुक 18 सितम्बर 2000

34- *Ibid-P.P. – 2, 26*

35. ए0आर0खान, 'ग्लोबलाइलजेशन एण्ड नानट्रेडीशनल सिक्योरिटी इनसाउथ एशिया, आर0सी0एस0एस0 न्यूजलेटर, वो0 6, नं0 1.2000 पृष्ठ 4

36- *Ibid-P. – 4-5*

37. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, दिसम्बर – 17, 1995

38. सौरभ क्राइसिस आफ गर्वनेस इन इण्डिया आर्टिककल नं0 588 सितम्बर 27. 2001 आई0पी0सी0एस0 बेव पोर्टल

39- Bora op-cit ..P.- 5

40. विलियम जे0 क्रेसी 'दि इण्टरनेशनल लिंकजेज–व्हाइट डूवीनो, 'यूरी रॉनान, आर0एल0 फ्टेजग्राफ्ट, आर0एच0शुल्ज, ई हेल्यिरिन तथा इगोर ल्यूक्स संपादित हाइड्रा आफ कर्नेज, लेक्सिंगटन वुक्स, पृ0.–194

41. सुधीर सावन्त 'ग्रोइंग मिनेल आफन्नार्को टेररिज्म इन एशिया' आक्रोश जनवरी 1999 वो 2 नं0 2 पृ0–51

42. इन्द्र प्रकाश 'डिजास्टर मैनेजमेण्ट' 1999 पृ0–5

43. साउथ एशिया टेररिज्म पोर्टल डाटा वेस

44. एन0 विट्ठल और एस0 महालिंगम 'पब्लिक सेक्टर गवरनेन्स ऐण्ड मैनेजमेण्ट एमर्जिंग डाइमेन्संस नई दिल्ली पृ0–63–69

45. अनिमेश राउल 'ए न्यू फेस आफ टेररिज्म एण्ड कमिंग एनार्की आर्टिकल नं0 608 अक्टूबर 15,2001 आई0पी0सी0सी0एस0 बेब पोर्टल।

46. बाबूराम पाण्डेय राम सूरत पाण्डेय 'राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध' प्रकाश डिपो बरेली 2005, पृष्ठ 31

47. डा0 सुधीर दीक्षित, 'दूसरों के जीवन में सकरात्मक प्रभाव कैसे डालें, मंजुल पब्लिसिंग हाउस प्रा0 लि0 निसात कालोनी भोपाल, (2005) पृ–58।

48- Ibid ..P. 150.

षष्ठ अध्याय

अधीनस्थ अधिकारियों के हितों के प्रति नकारात्मक सोंच

बढ़ता हुआ भ्रष्टाचार-

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार ने भारतीय सेना को बहुत अधिक प्रभावित किया है। सेना के कुछ सैनिकों ने भी व्यक्तिगत सौदेबाजी और राष्ट्रद्रोह की भावना भारत में उच्चस्तरीय भ्रष्टाचार के चरित्र को बढ़ावा दिया है। इससे हमारी सुरक्षा व्यवस्था पर प्रहार हो रहा है। बोफोर्स जैसे प्रकरणों से भ्रष्टाचार की जड़े सेना में दिन प्रतिदिन मजबूत होती जा रही हैं। इस समस्या का कोई अन्त नजर नहीं आ रहा है। भ्रष्टाचार सेना में सैनिकों से लेकर सैन्य अधिकारियों तथा इससे जुड़े तमाम संगठनों एवं रक्षामंत्रालय तक पहुंच चुका है। 17 अप्रैल 1987 को स्वीडिश नेशनल रेडियो ने बोफोर्स तोप और दलाली का 'रहस्योद्घाटन' किया।[1]

जुलाई 1987 में संसदीय समिति की रिपोर्ट तत्पश्चात् अंग्रेजी दैनिक हिन्दू द्वारा बोफोर्स दलाली का पुनः रहस्योद्घाटन किया गया।[2] करोड़ों रूपये का घोटाला कोई एक व्यक्ति नहीं कर सकता।[3] निश्चित ही इस प्रकरण से हमारे देश के कई दिग्गज नेता और नौकरशाह जुड़े होगें। सेना का भ्रष्टाचारी वर्ग एक ही झटके में सेना के खजाने को लूट लेना चाहता हैं। बोफोर्स का मामला शान्त भी न हो पाया, तहलका और डेनेल जैसे मामले प्रकाश में आ गये। सैनिकों में तहलका जैसे भ्रष्टाचार का मामला ऐसा संदेश देता है कि सेना विद्रोही बन जाये कोई असम्भव नहीं है।

देश की रक्षा करने में अपने शरीर से रक्त की अंतिम बूंद तक बहा देने वाले जवानों को जब मालूम होता है कि युद्ध में वीरगति प्राप्त सैनिकों के शवों के लिये क्रय किये जाने वाले ताबूतों में कमीशन लिया जा रहा है तब उनके अन्दर असन्तोष की लहर उठना स्वाभाविक है। सेना के अन्दर भ्रष्टाचार रूपी जहर किस हद तक फैल चुका है इसका अंदाजा साधारण जन नहीं लगा सकता। सेना के इतिहास में शायद यह पहली बार होगा कि लेफ्टीनेंट जनरल स्तर के अधिकारी का किसी घोटाले में नाम आया है। सूत्रों के मुताबिक लेफ्टीनेंट जनरल दाहिया ने, लेफ्टीनेंट

जनरल साहनी पर हजार टन दाल की खरीद में घोटाले की शिकायत की थी। इसके जवाब में लेफ्टीनेंट जनरल साहनी ने लेफ्टीनेंट जनरल दाहिया द्वारा मीट की खरीद में घोटाले का आरोप लगा दिया।

बरेली की 6 मांउटेन डिवीजन के मेजर जनरल गुरू इकबाल सिंह ने सेना के जवानों की शराब बेंच ली। मेजर जनरल के अलावा चार और ब्रिगेडियर फंसे हुये हैं।[4] भ्रष्टाचारी लोग यह मानने लगे हैं कि बिना भ्रष्टाचार के जीवन में उन्नति नहीं की जा सकती। यही भ्रष्टाचार के फलने–फूलने का मुख्य आधार है। भ्रष्टाचार का पाठ पढ़ने के लिये इन्हें किसी पाठशाला की जरूरत नहीं पड़ती, पद में बैठते ही इसके दुरूपयोग करने की कला स्वयं ही आ जाती है। जो अधिकारी रिश्वत लेते हैं तो रिश्वत देने में उनकों कोई बुराई समझ में नहीं आती। इस प्रकार भ्रष्टाचार दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। भ्रष्टाचार की कोई सीमा नहीं है। कोई किस हद तक बेइमान और भ्रष्ट हो सकता है इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है।

वाररूम लीक काण्ड में कमाण्डर रविशंकरण ने नौसेना से सम्बन्धित सभी अतिमहत्त्वपूर्ण गोपनीय दस्तावेज तथा भारतीय सुरक्षा सम्बन्धी स्तात्रजी एवं सामरिकी योजनाओं को विदेशियों को मुहैया करा दिया। इस काण्ड में कुछ पूर्व नौसेना अफसरों की मिली भगत के पुख्ता प्रमाण सामने आये हैं जिसमें कैप्टन कश्यप, कमाण्डर राणा, कमाण्डर झां आदि थे।[5] अम्बाला में ब्याल रोड स्थिति सेना के सब एरिया यूनिट से 28 मार्च 2006 की शाम 6 बजे चोरी की घटना प्रकाश में आई थी। पुलिस अधीक्षक राजबीर सिंह देसवाल का अनुमान है कि चोरों ने कमरे के शीशे तोड़ने के बाद अन्दर जाकर अलमारियों को खोलने के लिये चाभियों का इस्तेमाल किया, और क्यू0एम0जी आफिस से सेना के महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों की चोरी कर लिया।[6] निश्चित रूप से इसमें किसी भ्रष्टाचारी सैन्यकर्मी की भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी। सेना में पद और पुरस्कार प्राप्त करने के लिये नैतिकता को तिलांजलि देकर भ्रष्टाचार के रास्ते से प्राप्त करने का प्रयास कियहा जाता रहा है। मेजर सुरेन्दर सिंह ने सियाचिन ग्लेशियर में फर्जी मुठभेड़ कर पद एवं पुरस्कार के लिये दावा किया

जिसे जाँच के दौरान फर्जी पाया गया। 1962 में भारत चीन युद्ध के समय सरकार ने कलकत्ता में बैंक आफ चाइना का खाता जब्त किया था। उसमें भारत के प्रमुख राजनीतिक व्यक्ति का भी खाता मिला था। जिसमें माना जाता है कि इस खाते में धन सोवियत संघ से आता था।[7]

भ्रष्टाचार को एक चिंताजनक रोग के रूप में न लेने और इसे कड़ाई से रोकने का प्रयास न करने में नेतृत्व का महत्त्वपूर्ण हांथ होता है। समाजवादी विचारधारा में भ्रष्टाचार एक साधारण बात है वे मानते हैं कि जब समाजवाद आयेगा तो भ्रष्टाचार दूर हो जायेगा। 42वें संविधान संशोधन द्वारा समाजवाद और सेकुलरिज्म को संविधान में जोड़ दिया गया। लेकिन भ्रष्टाचार बढ़ता ही जा रहा है। अधिकार सम्पन्न लोग अपने भ्रष्टाचार को छिपाने के लिये एवं संसदीय बहस को दबाने के लिये अध्यक्ष के अधिकारों का गलत प्रयोग कर रहें हैं, तथा जाँच आयोग को निष्प्रभावी बनाने के अवसर भी खोज रहें हैं। शासक दल के पक्ष में गृहमंत्रालय और जाँच एजेसियों का राजनीतिक इस्तेमाल किया जा रहा है तथा विपक्षी नेतृत्त्व को देशद्रोही घोषित कर दिया जाता है। असंवैधानिक कार्य सत्तापक्ष को मजबूत किये जाने के लिये ही किये जाते हैं।

भ्रष्टाचार में फंसे सम्बंधित शक्तिशाली व्यक्तियों को जांच में निर्दोष सिद्ध किया गया। बोफोर्स घोटाले में महालेखा परीक्षक की रिपोर्ट ने जहां जनता को आन्दोलित किया है वहीं विपक्ष को सत्तापक्ष के विरूद्ध एक होकर लड़ने का साहस प्रदान किया है। विपक्ष के सासंदों ने सामूहिक इस्तीफा देकर अपने नैतिक जिम्मेदारी को प्रदर्शित किया। सेना में जब सैन्य अधिकारियों तथा सैनिकों एवं अन्य कर्मचारियों में नैतिकता देश प्रेम के बीज अंकुरित होंगे तब भ्रष्टाचार को जड़ से समाप्त किया जा सकता है। जिससे एक चरित्रवान सेना का निर्माण हो सकेगा।

कमजोर प्रदर्शन-

भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा की समीक्षा विशेषकर उच्चतर संगठन, संरचना एवं भूमिका को लेकर विगत 53 वर्षों में उत्तरोत्तर सरकारों ने मौखिक प्रयास ही किये हैं। प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू जी के कार्यकाल में सैन्य बलों के प्रति शंकालु रवैये को कम करते हुये गैर सैनिक नौकरशाही ने 27 मई 1952 को एक सरकारी निर्णय द्वारा सैन्य मुख्यालय को रक्षामंत्रालय से सम्बद्ध घोषित कर दिया था। इसी के साथ एक ही झटके में नौकरशाही ने सैन्य मुख्यालय की नीति निर्माण की भूमिका ही खत्म करा दी। सरकार की कार्यालयीय प्रक्रिया के अन्तर्गत एक विज्ञप्ति के जरिये रक्षा मंत्रालय को नीति निर्माण की जिम्मेदारी सौंपी गयी एवं सैन्यमुख्यालय को इसे लागू करने वाली एक इकाई के तौर पर अधिकृत किया गया।

रक्षा आवश्यकताओं में लालफीताशाही, खराब खुफिया तंत्र, एवं युद्ध का सामना करने में कमजोरी, 1947 के युद्ध के बाद से एक बड़ी सामरिक कमजोरी के तौर पर उभरकर सामने आयी है। आन्तरिक सुरक्षा के खतरों के कारण सशस्त्र आक्रमणों का सामना करने की क्षमता में वृद्धि हुयी है। जिसके चलते शांतिकाल में भारतीय सेना को आंतरिक सुरक्षा को बरकरार रखने के लिये भी भूमिका अदा करनी पड़ रही है। भारतीय रक्षा आवश्यकतायें तकनीकी रूप से आधुनिक होने के बावजूद मानव श्रम विशेष तौर पर सेना पर निर्भर है। वर्तमान परिस्थितियों में सैनिकों को आतंकवाद के साये में जीना पड़ रहा है। भारत की सीमावर्ती राज्यों में आधे से अधिक सेना संलग्न है। तथा अत्याधुनिक शस्त्रों से सुसज्जित होने के बावजूद भी वे आतंकवाद का सफाया करने में अपने आप को असहाय सा महसूस कर रहें हैं। दिसम्बर 1999 में काठमाण्डू से नई दिल्ली की उड़ान वाले अप्रहृत विमान की रिहाई के बदले में कश्मीर घाटी के आतंक का पर्याय बन चुका अजहर मसूद तथा उसके साथियों को सुरक्षित स्थान पर छोड़ दिया गया। इससे विश्व सैन्य रंगमंच पर भारतीय सेना की कारगिल विजय को फीका कर दिया। सेना में भ्रष्टाचार के चलते उनकी कार्यक्षमता प्रभावित हुयी है। स्वाधीनता के पश्चात् अधिसंख्य भारतीय

राजनीतिज्ञों द्वारा सत्ता प्राप्त के लिये की गई मूल्य विहीन अवसरवादी व राष्ट्र विरोधी राजनीति ने देश के सभी पहलुओं को नितांत खोखला व संवेदनहीन बना दिया है। बोफोर्स, फेयर फैक्स व प्रतिभूति घोटाले जैसे बड़े काण्ड आज भारतीय राजनैतिक तंत्र के लिये आये दिन की सामान्य घटनायें बनती जा रही हैं। देश के शीर्ष पर बैठे राजनेताओं में इन घोटाला काण्डों की नैतिक जिम्मेदारी लेने का न तो साहस रह गया है और न ही उत्तरदायित्त्व पूर्ण दृष्टिकोंण इसके विपरीत वे इन घोटालों में संलिप्त व्यक्तियों की यत्र तत्र सहायता करते देखे जाते हैं। राष्ट्रीयता व राष्ट्रीय हितों से मुंह मोड़ते देश के लगभग सभी राजनैतिक दल अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति हेतु देश की सुरक्षा व गौरव की सौदेबाजी करने में जरा सा भी संकोच नहीं करते हैं। रक्षा मामलों में उदासीनता, राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की निष्क्रियता, रक्षा उपकरणों की खरीद–फरोक्त में दलाली, राष्ट्रीय सम्पत्ति का दुरूपयोग तथा विदेशनीति के संचालन में प्रदर्शित राजनीतिक बौनेपन से यह पुष्ट होता जा रहा है कि वस्तुतः देश का मौजूदा राजनैतिक तंत्र लक्ष्य विमुख हो गया है। भारतीय सेना का हो रहा अपराधीकरण एक ऐसी चुनौती है जिसकी चिंता अब राजनैतिक दल भी करने लगे हैं। 'वाररूमलीक' काण्ड की जाँच रिपोर्ट से यह स्पष्ट हो गया कि सैन्य अधिकारियों, राजनीतिज्ञ, नौकरशाही तथा विदेशी एजेन्टों की मिली भगत से देश को कभी भी बन्धक बनाया जा सकता है। ये सभी मिलकर देश में समानान्तर सरकार चला रहें हैं। यह राजनैतिक हस्तक्षेप का ही परिणाम है कि देश के बड़े–बड़े अपराधी ससम्मान अपराधों से मुक्त होते जा रहें हैं। टाडा जैसे महत्त्वपूर्ण विधेयक की समाप्ति तथा लोकपाल की अक्षमता, राजनीतिक जीवन में बढ़ रहे माफियाओं के हस्तक्षेप राजनीतिक निरंकुशता का ही परिणाम है। अपराधियों की पहुंच इस स्तर तक है कि उन्हें देश में मनमानी करने से रोका नहीं जा सकता। यही कारण है कि आज भारतीय जनता का विश्वास न केवल देश के राजनेताओं अपितु लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप से शनैः शनैः हटता जा रहा है। देश मे उत्पन्न हो रही यह राजनीतिक रिक्तता एक ऐसी चुनौती है जो सीधे राष्ट्रीय सुरक्षा व अखण्डता को प्रभावित कर रही है।

बढ़ती हुई अनुशासनहीनता-

अनुशासन दो शब्दों से निर्मित है। अनु+शासन 'अनु' शब्द से तात्पर्य स्वीकार करने से है तथा 'शासन' शब्द से अभिप्राय नियंत्रण से है। अतः सेना में संगठन कर्तव्य पालन तथा नियमों एवं कानूनों का पूर्ण तरीके से पालन करना ही अनुशासन है। अनुशासन सेना की आत्मा है। बिना अनुशासन के सेना उन उपायों को नहीं अपना सकती जो मनोबल को ऊँचा रखते हैं। अनुशासन का अर्थ होता है सैनिकों को जो कार्य सौंपा जाय वह निश्चित योजना के अनुसार निश्चित तरीके से उत्तरदायित्व के साथ पूरा करें।[8]

सैनिकों को नियमित रूप से प्रशिक्षण, व्यायाम तथा मनोबल बनाये रखने के लिये अनुशासित करते रहना ही अनुशासन है। फ्रेडरिक महान कहते हैं कि अनुशासन की नीव प्रशिक्षण है अतः यह अच्छे अनुशासन के लिये अति अनिवार्य है।[9] अनुशासन सुव्यवस्थित प्रशिक्षण, अभ्यास, मानसिक, नैतिक और शारीरिक शक्तियों का विकास तथा नियंत्रण एवं अनुदेश व्यवस्था एवं नियंत्रण स्थापित अधिकार की अधीनता स्वीकार करने की शिक्षा, आत्मनियंत्रण और नियमित व्यवहार है। अनुशासन ही सेना को भीड़ से अलग करती है। अच्छे अनुशासन द्वारा किसी भी सेना को शक्तिशाली बनाया जा सकता है। अनुशासनहीन सेना आकाश की ओर तो देखती है परन्तु उसे लक्ष्य से मुंह मोड़ना पड़ जाता है। अनुशासनहीन सेना में शक्ति की कमी होती है नार्मन कोपलैण्ड के शब्दों में "अनुशासन मनोबल की नींव है।"[10] अनुशासनहीन सेना से उच्च मनोबल की आशा नहीं की जा सकती। स्वतंत्र भारत की सशस्त्र सेनाओं का अनुशासनहीनता का ग्राफ बढ़ता ही जा रहा है। जो राष्ट्र की सुरक्षा के लिये चिंता का विषय बनता जा रहा है। सेना के उच्च अधिकारियों में आपस में आरोप प्रत्यारोप का जो दौर चल रहा है उससे सेना की अनुशासनहीनता की झलक मिलती है। एडमिरल विष्णुभागवत ने वाइस एडमिरल हरिंदर सिंह पर कलकत्ता उच्चन्यायालय में यह आरोप लगाये थे कि सैनिक साज सामान की सप्लाई, एजेण्टों

की हितपूर्ति तथा धार्मिक आधार का दुरूपयोग करते हुए उन्होंने राष्ट्रीय हितों को नुकसान पहुंचाया। एडमिरल द्वारा लगाये गये आरोपों में सच्चाई हो या न हो लेकिन इतना तो कहा ही जा सकता है कि यदि अधीनस्थ अधिकारियों के प्रति वरिष्ठ अधिकारी नकारात्मक सोंच रखते हैं। इस सन्दर्भ में कलकत्ता उच्चन्यायालय ने 5 नवम्बर 1998 के अपने फैसले में एडमिरल द्वारा लगाये गये सभी आरोपों को रद्द कर दिया। इसके पूर्व में वाइस एडमिरल हरिदंर सिंह ने भी एडमिरल पर सार्वजनिक रूप से आरोप लगाये थे। जिसके लिये अपना लिखित माफीनामा उन्होंने रक्षा मंत्रालय को भेजा है। नौसेना के उप प्रमुख पद पर वाइस एडमिरल हरिदंर सिंह की नियुक्ति की संस्तुति मंत्रिमण्डल की नियुक्ति समिति ने की थी। लेकिन एडमिरल विष्णुभागवत ने अपने आतंरिक मतभेद के चलते इसे मानने से यह कहते हुये इंकार कर दिया था कि उच्च पदों पर नियुक्तियाँ नौसेनाध्यक्ष की संस्तुति के आधार पर ही होनी चाहिये।[11] एडमिरल की सार्वजनिक बयानबाजी भारतीय सशस्त्र सेना के अनुशासन को तोड़ना है अतः सेना में अनुशासन बनाये रखने के लिये केन्द्र सरकार ने एडमिरल विष्णुभागवत को 30 दिसम्बर 1998 को बर्खास्त कर दिया तथा एक अन्य कार्यवाही के तहत अनुशासन हीनता के कारण रक्षा सचिव अजीत कुमार का स्थानान्तरण कर दिया था। भारतीय सशस्त्र सेनाओं के इतिहास में 1962 में भारत चीन युद्ध के पश्चात् थल सेनाध्यक्ष जनरल थापा को अनुशासनहीनता के लिये पद छोड़ने को कहा गया था किन्तु जनरल थापा ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया था।[12] सुब्रमन्यम समिति की ''आश्चर्य से आंकलन तक'' देश की गुप्तचर व सुरक्षा प्रबन्ध प्रणाली की विस्तृत व्याख्या की गयी है। जिसमें स्पष्ट रूप से सरकार, सेना व सुरक्षा एजेंसियों से आपसी मतभेद दिखाया गया है।[13] इन्टेलीजेन्स ब्यूरो रॉ तथा मिलिट्री इन्टेलीजेन्स के प्रमुखों का आपसी ताल मेल न होने के कारण ही देश को इतना बड़ा युद्ध झेलना पड़ा। सुरक्षा व्यवस्था के सन्दर्भ में सेना तथा राजनीतिज्ञों में आपसी तालमेल का अभाव है। वर्तमान सेना व्यवस्था में ब्रिटिश साम्राज्य की पुरानी थियेटर प्रणाली की संस्कृति प्रभावी है। हमारी सुरक्षा नीति पर आज भी लिखित कोई दस्तावेज मौजूद नहीं है और न ही हमारा कोई रक्षा सिद्धान्त है। एक व्यावहारिक

रक्षानीति एवं सिद्धान्त तैयार करने के लिये राजनीतिक एवं सैनिक नेतृत्व के बीच बेहद मजबूत सन्तुलन और ताल मेंल होना चाहिये। सेना में बढ़ रहे अनुशासनहीनता के पीछे भौतिकता का भी बहुत बड़ा हाथ हैं। बढ़ती हुई महंगाई तथा न्यूनतम वेतन, सैन्य अधिकारियों का आपसी मतभेद, भ्रष्टाचार, नैतिक क्षरण, आदि के कारण राष्ट्रीय चरित्र, त्याग, बलिदान की भावनायें समाप्त होती जा रही हैं। अनुशासनहीन सेना में युद्धों को संचालित करने की शक्ति शेष नहीं रह जाती। सन् 1526 में बाबर ने अनुशाासित सेना के बल पर इब्राहिम लोदी की सेना को पराजित किया। द्वितीय विश्व युद्ध में उत्तरी अफ्रीका के संग्राम में विजय का दारोमदार बहुत कुछ आपूर्ति के ऊपर निर्भर करता था। सैनिकों को समय से पौष्टिक भोजन मिलना चाहिये। कहा गया है कि सेना पेट के बल चलती है। लेकिन भारतीय सशस्त्र सेना के लेफ्टीनेंट जनरल दाहिया एवं साहनी जैसे सेनाधिकारियों ने अपने सैनिकों के दाल, मीट, शराब आदि को स्वयं के हित के लिये बाजार में बेंच दिया। जिससे सैनिकों में अनुशासनहीनता बढ़ना स्वाभाविक है। सेना में बढ़ती अनुशासनहीनता को समाप्त करने के लिये सैनिकों को इस बात की जानकारी दी जानी चाहिये कि मनुष्य जीवन यापन के लिये अनेक तरीके प्रयोग कर सकता है किन्तु प्रत्येक जीवन शैली व व्यवस्था का अपना अलग–अलग महत्त्व है। धन तो अधिक व कम कई तरीके से अर्जित किया जा सकता है किन्तु ऐसा पुनीत कार्य जिससे अपने देश व समाज का कल्याण हो सके केवल सैनिक ही देकर अपना जीवन कर सकता है। सैनिकों को समय से वेतन भत्ता उचित रूप से मिलते रहना चाहिये जिससे कि उनके आश्रित परिवार धनाभाव से ग्रस्त न हों।

यद्यपि सैनिक सेवा का मूल्य वेतन कदापि नहीं हो सकता, क्योंकि सैनिकों के त्याग व बलिदान के आकंलन में राष्ट्र अपने को ऋणी समझता है। व्यावहारिक जीवन में भौतिक पदार्थ धन से ही प्राप्त किये जाते हैं इसलिये सैनिकों को एक सम्मान जनक वेतन आदि का ठीक प्रबन्धन रखा जाना चाहिये। समय–समय पर महंगाई भत्ते आदि दिया जाना चाहिये जिससे सैनिक किसी प्रकार के अभाव का

अनुभव न कर सके। इसके अतिरिक्त सैनिक कभी–कभी अवसाद ग्रस्त हो जाते हैं। इसका अर्थ यह नहीं लगाना चाहिये कि सैनिक व्यवस्था के प्रति विरोध व विद्रोह कर रहा है वरन् सामान्य ढंग से उसकी आपत्तियां नोट की जानी चाहिये। आपत्तियों का निराकरण करते समय पूर्ण न्याय किया जाना चाहिये। इसमें अंशमात्र भी पक्षपात नहीं होना चाहिये क्योंकि यदि पक्षपात की आशंका होती है तो विश्वास उठ जाता है और सैनिक बदले की भावना का शिकार हो सकता है। अनुशासन बनाये रखने के लिये नेतृत्वकर्त्ता को चरित्रवान होना चाहिये। भारतीय सशस्त्र सेना में पनप रहे भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता जैसी अनैतिक गतिविधियों पर अंकुश लगाकर नैतिकता का संचार करना चाहिए।

सन्दर्भ

1. डा0 राजवीर सिंह, 'देश–देशान्तर सामयिकी' एडवांस पब्लिकेशन इलाहाबाद, 1989 पृ0 97

2- *Ibid .. P. 97*

3- *Ibid .. P. 101*

4- *Danik jagaran Allahabad 04.11.2005*

5- *Danik jagaran 12.06.2006*

6- *Amar ujala 01.04.2006*

7. रक्षार्थ वै0 1 नं0 2, 2000 इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद पृ0 सं0 81

8- *Lyonard yas spectar.. the ondicleyard moral Band (Kaembrijmas Baelingar – 1988 P. No - 114)*

9- *Pretiyogita Darpan February 1999, P. – 1142*

10- *Ibid.. P. -1142*

11- *Ibid.. P. -1125*

12- *Pretiyogita Darpan August. 2000/6715*

निष्कर्ष एवं सुझाव

निष्कर्ष एवं सुझाव

सोलहवीं शताब्दी से अंग्रेजों ने अपनी व्यापारिक यात्रा प्रारम्भ की थी और अपने नैतिक एवं व्यावसायिक दक्षता के बल पर अपने सारे विरोधियों को परास्त करते हुये भारत सहित विश्व के अनेक देशों में व्यापारिक एवं राजनीतिक प्रभुत्व स्थापित किया। भारत में अंग्रेजों की राजनैतिक एवं व्यापारिक सफलता के प्रमुख कारण भारतीय राजाओं और सेनाओं का नैतिक क्षरण एवं व्यावसायिक दक्षता की कमी रही है। अंग्रेजों ने भारत में अपने उद्देश्य के अनुरूप ही भारतीय सेना का संगठन किया एवं उसकी व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि की।

अंग्रेजों द्वारा प्रसारित व्यापारिक नीति के फलस्वरूप उपनिवेश का प्रसार हुआ था। जिसके लिए अंग्रेजों को अत्यधिक शक्ति की आवश्यकता थी। प्रथम विश्वयुद्ध में पराजित राष्ट्र पुनः राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत होकर एवं हिटलर जैसे प्रभावशाली नेतृत्व को पाकर जर्मनी ने ब्रिटेन को भी चुनौती दे डाली। वायुयान, टैंक, जहरीली गैसें, पनडुब्बियाँ तथा मशीनगनों का विकास हुआ जिससे सामरिक चालें परिवर्तित हो गई। ब्रिटेन ने राडार जैसे यंत्र का आविष्कार किया। द्वितीय विश्व युद्ध में मानवता का व्यापक स्तर पर ह्रास हुआ जिसके प्रमाण हिरोशिमा और नागासाकी में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता था। भविष्य में इन युद्धों की पुनरावृत्ति न हो इसके लिये मानवतावादी राष्ट्रों को विश्वभर में नैतिकता का प्रसार करना चाहिये तथा नैतिकता के आधार पर ही सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ानी चाहिये भारतीय सेना एक अच्छी सशस्त्र सेना है जिसके पास अब तक हुए युद्धों का अच्छा अनुभव है, नाटों के कमांडो भी हमारी सेना का लोहा मानते है। लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण पहलू यह है कि सेना का मानव प्रबन्धन लड़खड़ाया हुआ है। इसके चलते सैनिक आत्महत्या कर रहे हैं और अपने अधिकारियों पर निशाना साध रहें हैं। जबकि सशस्त्र सेना का जवान चुनौतियों से मुंह नही मोड़ता लेकिन उसे जब अपने भीतर ही लड़ाई लड़नी पड़ती है, तब हार जाता है। इसका सबसे बड़ा कारण नैतिक क्षरण है। परिणामतः

सेना में भ्रष्टाचार बढ़ा है जिससे प्रबंधन व्यवस्था कमजोर हो रही है। पिछले कुछ दशकों से रक्षा सौंदों में घोटाला एवं आपूर्ति में बाधा पड़ने से व्यावसायिक दक्षता में कमी आ रही है। अतः सेना के मानसिक शारीरिक एवं व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के लिये नैतिक स्तर के क्षरण को रोकना होगा।

ब्रिटिश काल में सेना की दक्षता बढ़ाने के पीछे सिर्फ अंग्रेजों का स्वार्थ छिपा होता था, लेकिन स्वतंत्र भारत में भारतीय सशस्त्र सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के पीछे किसी भी बाह्य्य आक्रमण से राष्ट्र की सुरक्षा एवं आंतरिक शांति बनाये रखना तथा विश्व में मानवता के लिये कार्य करना आधारभूत लक्ष्य है। भारतीय सेना निरन्तर इस लक्ष्य की ओर अग्रसर है। एक नये भारत के उत्थान में सैन्य बलों के सहयोग से समूचा राष्ट्र कृतज्ञ है। भारतीय सैन्य बल राष्ट्र का प्रमुख आधार स्तम्भ है। जिस प्रकार 1748 में तीनों प्रेसीडेन्सी सेनाओं के संयुक्त कमाण्डर इन चीफ पद पर लारेन्स की नियुक्ति हुई थी। उसी प्रकार स्वतंत्र भारत में तीनों सेनाओं को एक ही कमाण्ड में रखने के लिये 11 जनवरी 2000 को सरकार ने भारतीय संसद प्रस्ताव प्रस्तुत किया। भारत को इस सन्दर्भ में आस्ट्रेलिया का उद्धरण सामने रखना चाहिए कि किस प्रकार सैन्य बलों को देखा जाता है। सन् 2000 के आस्ट्रेलियन व्हाइट पेपर ऑफ डिफेंस में वर्णित है 'सैन्यबल सरकार द्वारा दी जा रही कोई सेवा नही बल्कि वह आस्ट्रेलिया के राष्ट्रीय गर्व के अहम हिस्सा है।' भारतीय सैन्य बलों में भी अपने महत्त्वपूर्ण पराक्रमों से सिद्ध किया है कि वे राष्ट्रीय गर्व के प्रतीक हैं। राष्ट्र में नागरिकों की भूमिका हर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण है। सेना में सैनिकों व अधिकारियों का चयन भी इन्ही में से होता है। वयस्क नागरिक ही जनप्रतिनिधियों का चुनाव कर संसद में भेजते हैं जो देश की शासन व्यवस्था को संचालित करते हैं। सेना भी जनप्रतिनिधियों (रक्षा–मंत्रालय) के अधीन है। अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने हेतु राष्ट्रभक्त नागरिकों को चरित्रवान जनप्रतिनिधियों का ही चुनाव करना चाहिए। चरित्रवान जनप्रतिनिधियों से बनी सरकार राष्ट्र का समग्र विकास कर विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में खड़ा कर सकती है।

सेना का संचालन एवं नीति–निर्माण असैनिक क्षेत्र (रक्षा–मंत्रालय) द्वारा होता है जो सैनिक जीवन की कठिनाइयों से अनभिज्ञ होते हैं जिसके कारण वे सेना के साथ पूर्ण न्याय नहीं कर पाते। सैनिक तथा सैन्य अधिकारियों के वेतन सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के समकक्ष कर्मचारियों एवं अधिकारियों से अत्याधिक कम होने के कारण उनमें असंतोष बढ़ता है। वे अपनी बढ़ी हुई पारिवारिक आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति में असमर्थ हो जाते हैं जिसके चलते वे अन्य क्षेत्रों में जाने के लिए लालायित रहते हैं। जब उनकी यह अभिलाषा पूर्ण नही होती तब वे अनैतिक कार्य की ओर उन्मुख हो जाते हैं और यदि इस राह में एक कदम भी चल लिये तो फिर वापस आना कठिन हो जाता है। एक न एक दिन इसका खुलासा होकर समाज में पहुंचता है तो सेना के प्रति आम लोगों के दृष्टिकोण परिवर्तन हो जाता हैं जिसके चलते प्रतिभासम्पन्न नवयुवक सेना में अधिकारी बनने की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों में जाना पसन्द करते हैं। इसी कारण आज सेना में सैन्य अधिकारियों की संख्या घट रही है।

भारत में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण बेरोजगारी के चलते लोग कम पैसों में ही सेना में भर्ती होकर जोखिमपूर्ण कार्य करने के लिये बाध्य हो जाते हैं। आज सेना में सैनिकों की कमी नही है लेकिन ये सैनिक भी अपनी भावी पीढ़ी को सेना में भेजने की अपेक्षा अन्य क्षेत्रों के बेहतर विकल्पों पर विचार करते हैं। जिसके चलते सेना आज गम्भीर संकट के दौर से गुजर रही है। सेना को इस संकट से उबारने क लिए राष्ट्रभक्ति की भावना जगाकर ही भ्रष्टाचार से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है तथा सेना में योग्य सैन्य अधिकारियों की पूर्ति हो सकेगी। राष्ट्रभक्ति की भावना से ओतप्रोत योग्य युवक कम आर्थिक संसाधन में भी देश की सेवा के लिये तत्पर हो जायेंगे। क्योंकि उनको तब यह अहसास हो जायेगा कि हम नौकरी नही बल्कि अपनी राष्ट्र की रक्षा का पुनीत कार्य कर रहे हैं। आर्थिक दौड़ ने नैतिकता का जो क्षरण किया है उससे सेना भी प्रभावित हुई है। फलतः सेना में भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिला है। जिसमें सेना के कुछ अधिकारी एवं सैनिक भी संलिप्त पाये गये हैं। ये लोग व्यक्तिगत लाभ के लिये राष्ट्र की सम्प्रभुता को दाँव में लगाने से भी नही चूक रहे

हैं। आज कुछ सैनिक अधिकारी, खाद्य सामग्री, बेंचकर अपनी जेब भरते पाये गये हैं। इतना ही नही देश की प्रतिरक्षा योजनाओं को भी बेंचने में उन्हे जरा भी हृदय में पश्चाताप नही होता। सेना ऐसी परिस्थितियों के दौर से गुजर रही है जिससे राष्ट्र की सम्प्रभुता के लिये किसी भी समय समस्या उत्पन्न हो सकती है।

वर्तमान में विज्ञान, आर्थिक एवं राजनीतिक शक्तियों के ढाँचे का अंग बन चुका है। विज्ञान और संस्कृति की भिन्न धाराएं है। ऐसा इसलिये है क्योंकि विज्ञान अभी सचेतन शक्ति नहीं बन पाया है। ज्ञान से विज्ञान और विज्ञान से विकास की अन्धी दौड़ में आज का संसार उलझा हुआ है। मनुष्य आरम्भ से ही सभ्यता के विकास से जाने अनजाने विज्ञान का प्रयोग करता आ रहा है। प्राचीन भारत में आर्यभट्ट, बाराहमिहिर, ब्रम्हगुप्त, भास्कराचार्य जैसे गणितज्ञ और खगोलशास्त्री द्वारा प्रतिपादित अनेक वैज्ञानिक सिद्धान्त आज भी मान्य है।

चिकित्सा के क्षेत्र में चरक तथा धनवन्तरि जैसे महान विभूतियों का जन्म भारत भूमि पर हुआ। स्वतंत्रता के बाद भारत में शिक्षा एवं तकनीकी क्षेत्र में गम्भीरता से प्रयास किया गया। यही कारण है कि आज के परिवर्तित दौर में भारत प्रौद्योगिकी के लिये मोहताज नहीं है।

अंतरिक्ष, सूचना, जैव, कृषि, परमाणु आदि क्षमताओं को भारत ने विकसित कर लिया है। प्रतिरक्षा के क्षेत्र में वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुसंधान को बढ़ावा देने के उद्‌देश्य से एक नोडल एजेन्सी के रूप में प्रतिरक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डी0आर0डी0ओ0) की स्थापना की गई। (डी0आर0डी0ओ0) देश की रक्षा अनुसंधान योजनाओं के प्रारूप तैयार करने से लेकर उसका क्रियान्वयन, मूल्याकंन एवं देश के रक्षा अनुसंधानों में लगी सभी संस्थानों के बीच समन्वय का कार्य करता है। सार्वजनिक क्षेत्र के रक्षा प्रतिष्ठानों का ढाँचा इस तरह बनाया गया कि उनमें लचीली संचालन व्यवस्था, विकेन्द्रित प्रबन्ध और पर्याप्त स्वायत्तता है। जिसके परिणामस्वरूप भारत को इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई है, जिसमें परमाणु प्रौद्योगिकी, प्रक्षेपास्त्र प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी एवं संचार प्रौद्योगिकी में महारत हासिल

करता जा रहा है। इस वैज्ञानिक प्रगति ने हमारी रक्षा आवश्यकताओं में आत्मनिर्भरता पैदा की है। लेकिन परिवर्तित परिस्थितियों में मानवीय दृष्टिकोण संकुचित हुआ है। जिसका सीधा प्रभाव नैतिक मूल्यों पर पड़ा है जिससे हमारे रक्षातंत्र पर प्रश्न चिन्ह लगता जा रहा है।

भारत विश्व बन्धुत्व की भावना वाला देश है इसके पडो़सी देश नेपाल, भूटान, बांगलादेश, श्रीलंका आदि सभी एक संरक्षक राज्य की श्रेणी में सम्बद्ध है। इनका संरक्षण करना भारत का नैतिक दायित्त्व है। किन्तु वर्तमान में भूटान के संरक्षण के नैतिक दायित्त्व के निर्वहन की प्रक्रिया को भी विश्व तथा पड़ोसी देश संदेह की भावना से देखते है जो परिवर्तित मूल्यों का जीता जागता उदाहरण है।

इस प्रकार हमारे पड़ोसी देश नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, श्रीलंका के प्रति भारत के अलग से उत्तरदायित्त्व रहे हैं। भारत ने उनको भली भांति निभाया है यह भारतीय नैतिकता का ही परिणाम है। भारतीय सेनाओं ने बांग्लादेश जाकर मुक्तियुद्ध को लड़ा बांग्लादेश का निर्माण के बाद भारतीय सेनाओं की वापसी करना दुनिया में नैतिकता का अव्यक्तीय उदाहरण है। इसी प्रकार श्रीलंका की आन्तरिक समस्या के समाधान हेतु हमारे प्रयास हमारी सेनाओं की नैतिक एवं व्यावसायिक दक्षता की मजबूती स्पष्ट करता है। विश्वमंच पर तो हमारी सशस्त्र सेनायें आज भी व्यावसायिक एवं नैतिक शक्ति की एक उदाहरण है, लेकिन इधर पिछले कुछ वर्षों से इसमें क्षरण हुआ है जिसके प्रति हमें सावधान रहने की जरूरत है।

भौतिकवादी दृष्टिकोण के विकास एवं प्रभाव से आज सेना भी प्रभावित हुई है। पूर्व में जब सेना शहर के बाहर दूरदराज क्षेत्रों में रहती थी। इसका अपना एक परिवेश होता था। शहर एवं नागरिक जीवन से सेना का कोई सम्बंध नही होता था। सेना केवल अपनी व्यावसायिक एवं नैतिक दक्षता में लीन रहती थी। आज दुनियाँ सिमट कर एक गांव बन चुकी है। संचार क्रान्ति ने हर स्थान को एक दूसरे से जोड़ दिया है। आज टी.वी., मोबाइल, डी.बी.डी. कपड़ा धोने की मशीन, ए.सी., फ्रिज, गाड़ी सभी की आवश्कयता सी बन गई है। सैनिकों पर इन भौतिक साधनों की प्राप्ति हेतु

दबाव बढ़ा है। संसाधनों के अभाव में इन्हे प्राप्त करने हेतु नैतिकता का क्षरण शुरू होता है। साथ ही ऊपर से सैनिक अधिकारियों का दबाव सैनिकों को मनोरोगी बना देता है। फलतः उनमें विद्रोह की भावना पैदा हो जाती है तथा आत्महत्या एवं हत्या की प्रवृत्तियाँ जन्म लेती हैं। इस प्रकार भौतिकतावादी दृष्टिकोण के प्रभाव ने सैन्य तंत्र को झकझोर कर रख दिया है।

संयुक्त परिवार व्यवस्था के बिखराव ने सेना के नैतिक एंव व्यावसायिक मूल्यों को सीधा प्रभावित किया है। पहले उनके परिवार को संयुक्त परिवार पालता था। अब एकल परिवार व्यवस्था ने उसे अलग–थलग कर दिया है जिससे आन्तरिक रूप से उनके ऊपर दबाव बढ़ गया है एक ओर आर्थिक दबाव दूसरी ओर सैनिक अधिकारियों का दबाव होने के बीच ताल–मेल बैठाने वाली संयुक्त परिवार व्यवस्था के विखराव ने स्थिति विकराल कर दी है। परिणामस्वरूप इन परिस्थतियों ने सैनिकों में आत्महत्यायें एवं हत्याओं की वृद्धि में सहयोग प्रदान किया है। जिसे तत्काल रोकना होगा।

देश की जीवन मूल्यों की गिरावट का प्रमुख कारण आधुनिक कृषि विकास एवं उसकी उपलब्धियों से जोड़ कर देखा जा सकता है जैसे कहा जाता कि 'जैसा खाये अन्न वैसा बने मन।' रासायनिक जनित एवं व्यापारिक सोच के उत्पादन से हमारी संवेदनशीलता तथा सोच को प्रभावित किया है। प्राचीन जीवन मूल्य अब व्यापारिक सोच पर आधारित हो गये हैं जिससे हमारे नैतिक क्षरण को गति मिली है। सारे देश की जनता इस क्षरण से प्रभावित हुई है। सशस्त्र सेनाओं पर इसका सीधा प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है तथा सैनिकों में विद्रोह की प्रवृत्तियाँ बढ़ रही है। जिस देश में राणा प्रताप ने घास की रोटी खाकर अपनी देशभक्ति एवं नैतिकता का ध्वज सारे विश्व में फहराया था और अकबर की आधीनता स्वीकार नहीं की थी। वहां पर अब चन्द लाभ के लिये बड़े–बड़े सैनिक अधिकारी अपना ईमान बेचते दिखाई दे रहे हैं। यह बड़ी भयावह स्थिति है। जनसंख्या वृद्धि एवं शहरीकरण की प्रवृत्ति ने लोगों के मन में विकास हेतु भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया है। पहले लोग नैतिक आधार पर सूखी

रोटी खाकर संतोष से जी लेते थे। किन्तु आज लोग अनैतिक तरीके से आधुनिक सुख–सुविधाओं को एकत्र करने में प्रतिस्पर्धात्मक तरीके से जुटे हुये हैं। फलतः हमारी नैतिकता प्रभावित हो रही है। आज लोगों को धन चाहे जिस प्रकार से मिले राष्ट्रहित, राष्ट्रभावना के स्थान पर स्वहित की भावना बलवती होती जा रही है। अब सेना में भर्ती होने वाले सैनिकों में राष्ट्र सेवा, देश सेवा के स्थान पर धन अर्जित करने की भावना प्रधान हो गयी है। इससे सेना की नैतिक गुणवत्ता प्रभावित हुई है।

देश की रक्षा से जुड़ी संवेदनशील एवं बेहद महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ व दस्तावेज विरोधियों के हाँथ लगना खतरनाक एवं गम्भीर ही नही शर्मनाक भी है। सेना में जासूसों का पकड़ा जाना इस बात का प्रमाण है कि हमारी सैन्य व्यवस्था में कहीं न कहीं कमी है। नौसेना के वाररूम से सैन्य सूचनाओं के लीक होने के बाद अब थल सेना में जासूसी के जरिये गोपनीय सूचनाओं को मात्र पैसे के लिये दुश्मन के जासूसों के हाँथ बेंच देना निकृष्टतम चरित्र का उदाहरण हैं। सैन्य अधिकारियों एवं सैनिकों में राष्ट्र प्रेम की भावना को जाग्रत करने लिये उनमें उच्च नैतिक स्तर लाना होना सैन्य अधिकारियों को चरित्रवान बनाकर सशस्त्र सेनाओं के गिरते नैतिक एवं व्यावसायिक मूल्यों को बचाया जा सकता है।

भौतिकता की चकाचौंध में हमारे सेनानायकों तथा सैनिकों के कार्याचरण में परिवर्तन होता जा रहा है वे एक दूसरे को अपने पद, ऐश्वर्य, व रुतवे से पीछे करने की होड़ में रत हो गये हैं। वे भ्रातृत्त्व भावना, परस्पर प्रेम, सौहार्द जैसी नैतिकता को दाँव में लगाकर अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति में लगे हैं तथा राष्ट्रद्रोह जैसी गतिविधियों में संलग्न हो रहे हैं। सैनिक अपनी महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति न होने से मानसिक उदिग्नता के शिकार होकर अपने साथियों तथा अधिकारियों की हत्याएं तक करने से नहीं चूक रहे हैं। इस प्रकार की स्थिति सेना तथा राष्ट्र दोनों के लिये घातक होती जा रही है। अतः ऐसी महत्त्वाकांक्षाओं को नैतिक आधार से युक्त सकारात्म दिशा देने की आवश्यकता है जिससे सेना को अनुशासित, शक्तिशाली, राष्ट्रभक्त बनाया जा सके।

धर्म निरपेक्षता का दृष्टिकोण देश में एकता, भ्रातृत्त्व, सहज एवं स्वस्थ विकास, शान्ति, सौहार्द एवं समरसता की महत्त्वपूर्ण कसौटी बन सकता है। किसी सैनिक में जब तक त्याग की भावना उत्पन्न नही होती तब तक वह चाहे जितनी अच्छी सुविधा का उपभोग करता रहे उससे सन्तुष्ट व परिपूर्ण नहीं होता है। किन्तु त्याग की भावना आते ही विपन्नता दूर होकर नवीन चेतना एवं उच्च मनोबल का विकास होने लगता है। संसार के पदार्थ भोग की इच्छा समाप्त होने लगती है तथा महत्त्वाकांक्षा की दिशा राष्ट्र कल्याण की ओर उन्मुख हो जाती है। जिससे सेना का प्रत्येक सिपाही राष्ट्र की सुरक्षा तथा राष्ट्रहित को ही सर्वोपरि समझता है।

आज सैनिकों में अपने भविष्य को सुनिश्चित करने के लिये पदोन्नति, अधिकार, सुविधा, परिवार का विकास, बच्चे का भविष्य व अन्य जीवन से जुड़ी आवश्यकताओं के प्रति जागरूकता बढ़ी है। वास्तव में समूह में रहने वाला अपने हितों की रक्षा करने में अकेले व्यक्ति की अपेक्षा अधिक सफल होता है। सरकार के द्वारा यह सुविधा दी जा रही है कि वे सेवा के दौरान भी अपनी पढ़ाई को जारी रख सकते हैं। इसलिए उनमें बौद्धिक विकास तेजी से हो रहा है। अतः आवश्यक है कि सेना में ब्रिटिश कालीन सैनिक कानून एवं मान्यताओं में परिवर्तन करके मानवोचित व्यवस्था लागू की जाय अन्यथा सैनिक ऊर्जा नकारात्मक दिशा में परिवर्तित हो जायेगी जो सैनिकों के निर्माण के स्थान पर विध्वंसकारी गतिविधियों की ओर उन्मुख कर देगी जिससे राष्ट्र असुरक्षित हो सकता है।

भारतीय सशस्त्र सेनाओं की परिवर्तित व्यावसायिक क्षमता में गिरावट की रोकथाम में वैज्ञानिक शोधों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज भारतीय सेना की व्यावसायिक दक्षता का ग्राफ जो 1950 की दशक में गिर रहा था। आज वह विश्वस्तर पर अपने कीर्तिमान स्थापित कर चुका है तथा हमारी सेनाओं ने व्यावसायिक दक्षता में महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त की है।

सेना के तकनीकी विकास के कारण व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि हुई है किन्तु नैतिक क्षरण के कारण सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार भारत के अन्य संगठनों से अलग नहीं

है। सेना में व्याप्त कमियाँ ढाँचे में कमी के कारण है। गर्मी के दिनों में सैन्य डिपों में एकाएक आग लग जाती है। करोड़ों का हथियार गोलाबारूद नष्ट हो जाता है। इसका कारण गर्मी बताया जाता है। भारत के सैन्य डिपों में ऐसी कई बार आग लग चुकी है। हालांकि जांच करने के उपरान्त इसे हथियारों की अवैध बिक्री से जोड़ा गया है। यह राष्ट्रीय सुरक्षा के लिये गंभीर खतरा है। कतिपय सैन्य अधिकारियों के द्वारा सैनिकों के रसद में कटौती करना आदि कृत्य, उन्हे मिलने वाले कम वेतन से जोड़कर देखे जा सकते है। भौतिकवाद ने मानव संवेदना को नष्ट कर दिया है। तेल पिपासा ने अमेरिका को बहसी बना दिया है तो धन पिपासा ने समाज को मानवीय संवेदना से शून्य बना दिया है। अब वह राष्ट्रभक्ति ही नही रह गयी जिसनें कभी क्रान्तिकारियों एवं स्वतंत्रता सेनानियों को राष्ट्र की स्वतंत्रता का दीवाना बना दिया था। किन्तु अब प्रेरणाओं पर स्वार्थ हावी हो गया है जीवन की असुरक्षित धारा को सुरक्षित करने में सारे नैतिक एवं अनैतिक रास्तों का बेहिचक प्रयोग किया जा रहा है। प्रश्न यह है कि यदि सभी ओर अनैतिकता उत्पन्न हो जायेगी तो सेना कैसे संचालित हो पायेगी और राष्ट्र कैसे सुरक्षित रह पायेगा। इसलिये इस दिशा मे विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है सैनिकों के इस प्रकार के जीवन चरित्र से सैन्य दक्षता पर तो प्रभाव पड़ ही रहा है साथ ही राष्ट्र की सुरक्षा भी खतरे में पड़ रही है। सैनिकों में अनुशासहीनता का तेजी से बढ़ना राष्ट्र एवं समाज के लिये अशुभ संकेत है।

उपनिवेशवादी व्यवस्था में भारतीय सैनिकों पर अनेक कठोर नियम लागू किये गये थे। स्वतंत्रता के उपरान्त भारत तो अंग्रेजों से मुक्त हो गया लेकिन सैन्य अधिकारियों की मनः स्थिति से उपनिवेशवाद नही हट सका। छावनियों में रहने वाले सैनिकों का खान–पान, रहन–सहन अन्य सुविधायें मानक के अनुरूप नही हैं। कोर्टमार्शल की प्रक्रिया से भयाक्रान्त होकर सैनिक अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों के बारे में आवाज नही उठा पाता है। फलतः तनावग्रस्त सैनिक या तो आत्महत्या करता है या तो अपने साथियों या अधिकारियों को मारने का प्रयत्न करता है।

वर्तमान सैन्य सेवा अधिकारियों एवं सैनिकों के मध्य में एक गम्भीर द्वन्द्व है। अधिकारियों की शैली निरंकुश एवं सैनिक प्रजातांत्रिक देश का निवासी होने के नाते बराबरी की अपेक्षा करता है। ऐसे में यदि इस समस्या का समाधान न हुआ तो सैन्य सेवाओं के माध्यम से देश के लिये भी एक खतरा उत्पन्न हो जायेगा। इसलिये अधिकारियों एवं सैनिकों के बीच समन्वय का भाव उत्पन्न करने का सार्थक प्रयास किया जाना चाहिए।

सैन्य अधिकारियों एवं सैनिकों के प्रशिक्षण में सैन्य गतिविधियों के साथ–साथ समता एवं प्रजातांत्रिक समझ उत्पन्न करने बल दिया जाना चाहिए। इससे उन्हे यह अहसास हो कि वे एक प्रजातांत्रिक देश के सैनिक है, जहाँ योग्यता के आधार पर अंतर हो सकता है लेकिन व्यक्ति के आधार पर सभी में समानता है। सैन्य छावनियों के वातावरण को भी मानवोचित एवं सौहार्दपूर्ण बनाया जाना चाहिए। त्योहार, उत्सव, राष्ट्रीय पर्व एक जुट होकर समारोह को मनाने का नियम बनाना होगा। अधिकारी को यह अहसास कराना होगा कि वह सैनिकों के संरक्षक हैं तथा उनका दायित्त्व सैनिकों की पारिवारिक एवं आर्थिक समस्याओं का निराकरण करना है।

देश में आतंकवादी समस्या से सैनिक बहुत प्रभावित हो रहें हैं। काश्मीर में सैकड़ों विदेशी आतंकवादी मौजूद हैं। आने वाले कुछ वर्षों में यह देश के लिये चिंताजनक चुनौती प्रस्तुत करेगा। भारतीय सुरक्षा–चिंतको को परम्परागत सैन्य खतरों पर आधारित सम्भावित रणनीतिक उपायों के साथ–साथ इन अपरम्परागत प्रकृति वाले किन्तु सम्भवतः अधिक विनाशक प्रवृत्ति वाले खतरों से निपटने की कार्ययोजना तैयार करनी चाहिए तथा सेना के नैतिक स्तर में सुधार करके ही इन सभी चुनौतियों का सामना किया जा सकता है।

प्रथम एवं द्वितीय विश्व युद्ध में भारतीय सशस्त्र सेनाओं ने मित्र राष्ट्रों की तरफ से भाग लिया था। इन युद्धों में भारतीय सेना की व्यावसायिक कमजोरियाँ सामने आयी। सिंगल फायर राइफलधारी भारतीय सैनिक जर्मनी के सैनिकों की स्वचालित मशीनगनों के फायर के सामने असहाय हो जाते थे और भारतीय जवानों

की लाशों के ढेर लग जाते थे वे साधन विहीन होकर, विपरीत मौसम में भी युद्ध करते थे। भारतीय सैनिकों का प्रशिक्षण केवल देशी राजाओं की सेनाओं से लड़ने तक ही सीमित था लेकिन अंग्रेजों ने अपने लाभ के लिये इन सैनिकों को ऐसे युद्ध में झोंक दिया था, जिसके बारे में सैनिकों ने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। लेकिन भारतीय सैनिकों ने अपनी नैतिक दृढ़ता के साथ अपने कर्तव्यों का पालन किया। अन्ततः मित्र राष्ट्रों की व्यावसायिक कुशलता ने धुरी राष्ट्रों को पराजित कर दिया। मित्र राष्ट्रों के साथ नैतिकता जुड़ी थी जिससे उसकी सेनाओं का मनोबल ऊँचा था।

1962 के भारत–चीन युद्ध में चीनी सेना पर्वतीय युद्ध में कुशल थी। भारतीय सेना को उस समय तक पर्वतीय युद्धों का प्रशिक्षण भी नहीं प्राप्त था। रेगिस्तानी सेनाओं को पर्वतीय युद्ध में संलग्न कर दिया गया था। इसके अतिरिक्त भारतीय सशस्त्र सेनाओं के शस्त्रास्त्र भी चीन की तुलना में निम्नस्तर के थे फिर भी भारतीय सैनिकों ने अपनी नैतिक जिम्मेदारी के कर्तव्य बोध से युद्ध स्थल से अपने पैर पीछे नही रखे और रक्त की अंतिम बूंद तक चीनियों से लोहा लेते रहे। 6 अगस्त एवं 9 अगस्त 1945 की हिरोशिमा एवं नागासाकी की घटना से अमेरिका को सुपर–पावर का दर्जा प्राप्त हो गया जो आज विश्व रंगमंच पर अपनी व्यावसायिक कुशलता के बल पर छाया हुआ है और विश्व पुलिस मैन का कार्य कर रहा है। उसकी सशस्त्र सेनायें अपने राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिये अफगानिस्तान, ईराक आदि देशों में युद्ध में रत है। आज भारतीय सेना की व्यावसायिक दक्षता बढ़ाने के साथ–साथ नैतिक मूल्यों को भी बढ़ावा मिलना चाहिए जिससे सेना राष्ट्रीय हितों की पूर्ति में सामर्थ्यवान बन सके।

शिक्षित एवं जागरूक सेना पर भ्रष्टाचार का बहुत गहरा प्रभाव पड़ रहा है। अतः समय रहते सैन्य नेतृत्व को चरित्रवान बनाकर इस समस्या का समाधान खोजा जा सकता है। सैन्य अधिकारियों के प्रशिक्षण स्थल नेशनल डिफेंस एकेडमी खड़गवासला, इण्डियन मिलिट्री एकेडमी देहरादून आदि संस्थाओं में सैन्य अधिकारियों को स्त्रातजी एवं सामरिकी के प्रशिक्षण के अतिरिक्त नैतिकता (चरित्र) एवं मानवीय

मूल्यों का प्रशिक्षण प्रदान करना अपरिहार्य हो गया है। भ्रष्टाचार को चिंताजनक रोग के रूप में न लेने और इसे कड़ाई से रोकने का प्रयास न करने में नेतृत्व का महत्त्वपूर्ण हाँथ होता है। समाजवादी विचाराधारा में भ्रष्टाचार एक साधारण बात है वे मानते हैं कि जब समाजवाद आयेगा तो भ्रष्टाचार दूर हो जायेगा। 42वें संविधान संशोधन द्वारा समाजवाद और सेकुलरिज्म को संविधान में जोड़ दिया गया। लेकिन भ्रष्टाचार बढ़ता ही जा रहा है। अधिकार सम्पन्न लोग अपने भ्रष्टाचार को छिपाने के लिये एवं संसदीय बहस को दबाने के लिये अध्यक्ष के अधिकारों का गलत प्रयोग कर रहे हैं, तथा जाँच आयोग को निष्प्रभावी बनाने के अवसर भी खोज रहे हैं शासक दल के पक्ष में ग्रहमंत्रालय और जांच एजेसिंयो का राजनीतिक इस्तेमाल किया जा रहा है तथा असंवैधानिक कार्य सत्ता पक्ष को मजबूत करने के लिये किये जाते हैं।

सेना में जब सैन्य अधिकारियों तथा सैनिकों एवं अन्य कर्मचारियों में नैतिकता, देशप्रेम के बीज अंकुरित होंगे तब भ्रष्टाचार जड़ से समाप्त किया जा सकता है। जिससे एक चरित्रवान सेना का निर्माण हो सकेगा। वाररूम लीक काण्ड की जांच रिपोर्ट से यह स्पष्ट हो गया कि सैन्य अधिकारियों, राजनीतिज्ञ, तथा विदेशी एजेण्टों की मिली भगत से देश को कभी भी बन्धक बनाया जा सकता है। यह राजनीतिक हस्तक्षेप का ही परिणाम है कि देश के बड़े–बड़े अपराधी ससम्मान अपराधों से मुक्त होते जा रहें हैं। टाडा जैसे महत्त्वपूर्ण कानून की समाप्ति तथा लोकपाल की अक्षमता राजनैतिक जीवन में बढ़ रहे माफियाओं के हस्तक्षेप तथा राजनैतिक निरंकुशता का ही परिणाम है। अपराधियों की पहुंच इस स्तर तक है कि उन्हे देश में मनमानी करने से रोका नही जा सकता है। यही कारण है कि आज भारतीय जनता का विश्वास न केवल देश के राजनेताओं अपितु लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप से शनैः–शनैः हटता जा रहा है। देश में उत्पन्न हो रही यह राजनीतिक रिक्तता एक ऐसी चुनौती है जो राष्ट्रीय सुरक्षा व अखण्डता को सीधे प्रभावित कर रही है।

वर्तमान सेना व्यवस्था में ब्रिटिश साम्राज्य की पुरानी थियेटर प्रणाली की संस्कृति प्रभावी है। एक व्यावहारिक रक्षानीति एवं सिद्धान्त तैयार करन के लिये

राजनैतिक एवं सैनिक नेतृत्व के बीच बेहद मजबूत सन्तुलन और ताल–मेल होना चाहिए। सेना में बढ़ रहे अनुशासनहीनता के पीछे भौतिकता का भी बहुत बड़ा हाथ है। बढ़ती हुई मंहगाई तथा न्यूनतम बेतन, सैन्य अधिकारियों का आपसी मतभेद, भ्रष्टाचार, नैतिक क्षरण, राष्ट्रीय चरित्र, त्याग बलिदान की भावनायें समाप्त होती जा रही हैं।

अनुशासनहीन सेना में युद्धों को संचालित करने की शक्ति शेष नहीं रह जाती। सन् 1526 में बाबर ने अनुशासित सेना के बल पर इब्राहिम लोदी की विशाल सेना को पराजित किया। द्वितीय विश्व युद्ध में उत्तरी अफ्रीका के संग्राम में विजय का दारोमदार बहुत कुछ आपूर्ति के ऊपर निर्भर करता था। सैनिकों को समय से पौष्टिक भोजना मिलना चाहिए। कहा गया है कि सेना पेट के बल पर चलती है। लेकिन भारतीय सशस्त्र सेना के लेफ्टीनेण्ट जनरल दाहिया एवं साहनी जैसे सेनाधिकारियों ने अपने सैनिकों के दाल, मीट, शराब आदि को स्वयं के हित के लिये बाजार में बेंच दिया। जिससे सैनिकों में अनुशासनहीनता बढ़ना स्वाभाविक है। सेना में बढ़ती अनुशासनहीनता को समाप्त करने के लिए सैनिकों को इस बात की जानकारी दी जानी चाहिए जिससे उनके आश्रित परिवार धनाभाव से ग्रस्त न हो।

सेना में नैतिक मूल्यों के क्षरण को रोकने एवं व्यावसायिक दक्षता में अभिवृद्धि के लिए निम्न बिन्दुओं के सन्दर्भ में त्वरित एवं प्रभावी कार्यवाही किये जाने की महती आवश्यकता है।

1. सैनिकों की योग्यता एवं निजी जीवन से सम्बन्धित अधिकतम जानकारी रखनी चाहिए। उनकी समस्याओं, अपेक्षाओं एवं भावनाओं के सम्बन्ध में वैयक्तिक स्तर पर ज्ञान होना चाहिए।

2. सैनिकों को उनकी योग्यता एवं अभिरूचि के अनुसार काम का विभाजन किया जाना चाहिए।

3. सैनिकों में तनाव को कम करने के लिए उनमें हास्य भाव का संचार करना चाहिए।

4. पुरुस्कार एवं दण्ड की व्यवस्था भेदभाव रहित एवं पारदर्शी होनी चाहिए।

5. सैनिकों की मूलभूत आवश्यकताओं को सर्वोत्तम तरीके से पूरा किया जाना चाहिए।

6. भूतपूर्व सैनिकों के पुनर्वास सम्बन्धी समस्याओं को हल करने के सीधे, सरल एवं असरदार तरीके खोजे जाने चाहिए।

7. सेना की संगठनात्मक व्यवस्था में समुचित सुधार कर सभी को उन्नति एवं व्यक्तित्व विकास के समान अवसर प्रदान करने हेतु प्रभावी व्यवस्था की जानी चाहिए।

8. सैनिकों में आध्यात्मिक कारकों जैसे राष्ट्रभावना, राष्ट्रोत्सर्ग, धर्म के प्रति निष्ठा, सेना के रीति रिवाजों एवं परम्पराओं का सम्मान, के विकास पर बल दिया जाना चाहिए।

9. सैनिकों में हतोत्साह उत्पन्न होने वाले कारकों जैसे–आवश्यकता के अनुरूप भोजन, वस्त्र एवं आवास, आय के साधनों का अभाव तथा उच्चस्तरीय आवश्यकताओं को अतिसामान्य साधनों से पूरा करना, को निर्मूल करना चाहिए। क्योंकि हतोत्साहित सैनिकों में निराशा, नकारात्मक विचार, आत्मविश्वास में कमी तथा दुश्चिन्ताएं उत्पन्न होती हैं।

10. सैनिकों के मनोबल को ऊँचा बनाये रखने के लिए वेतन भत्ते आवासीय, शैक्षिक, मनोरंजन एवं चिकित्सीय सुविधाओं, शिकायत निवारण एवं संचार की स्तरीय व्यवस्थाएं बनायी जानी

चाहिए। ऊँचे मनोबल से सैनिकों में अनुशासन, कार्य संतुष्टि, निपुणता, मेलजोल की भावना, विपरीत परिस्थितियों में चुनौतियों का सामना करने की क्षमता की अभिवृद्धि होती है।

11. मानव शक्ति का सही प्रबंधन एवं कार्यों का तर्कसंगत बंटवारा किया जाना चाहिए।

12. सैनिकों में युद्ध तनाव दूर करने के लिए तथा तनाव के प्रभाव को कम करने के प्रभावी प्रयास किये जाने चाहिए।

13. सैनिकों के साथ अवकाश स्वीकृति, विशिष्टि नियुक्ति, पदोन्नति, पुरुस्कार एवं दण्ड आदि अवसरों पर निष्पक्ष व्यवहार किया जाना चाहिए। पक्षपात पूर्ण व्यवहार के कारण सामूहिक कार्यभावना, अनुशासन में कमी आती है, तथा आपसी मनोमालिन्य बढ़ता है।

14. सैनिकों की पदोन्नति, कार्यविभाजन, पारिवारिक एवं आर्थिक समस्याओं सम्बन्धी शिकायतों के निवारण की त्वरित एवं प्रभावी व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए।

15. सैनिकों की समस्याओं के समाधान तथा कल्याणकारी योजनाओं की जानकारी प्रदान करने के लिए सैनिक सम्मेलन आयोजित कराये जाने चाहिए। सैनिकों के कल्याण सम्बन्धी क्रियाकलापों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।

16. सैनिकों में गुणात्मक सुधार के लिये शारीरिक एवं मानसिक रूप से उन्हे स्वस्थ रखना आवश्यक है। क्योंकि शारीरिक स्वास्थ्य से बुद्धि की दिशा सकारात्मक होगी। वैसे भी कोई भी कितना योग्य क्यों न हो वह अस्वस्थ्य होकर कोई काम नही कर

सकता। सैनिक को स्वस्थ रखने के लिये नियमित भोजन, व्यायाम, एवं निद्रा एवं चिकित्सा सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए। वर्तमान भारतीय सेना में इन चीजों का समन्वय नही हो पा रहा है। भोजन की गुणवत्ता ठीक नही रहती, सोने का समय नही मिलता, चिकित्सा की समस्या बनी रहती है। इसे दूर करने के लिये सैनिकों की स्वयं की कमेटी बनाकर भोजन निर्माण एवं प्रवंधन की अनुमति दी जाय अथवा उस अधिकारी को सैनिकों के भोजन में भोजन करना अनिवार्य किया जाय जो खाद्यान्न की आपूर्ति करता है।

17. सैनिकों को नियमित चिकित्सा सुविधा तो दी जाय उन्हे स्वस्थ रहने के लिये मूल जानकारियां भी दी जायें। इसके लिये विषम परिस्थिति में भी स्वस्थ रहने के लिये प्रयास हो। मेरा मानना है कि सैनिकों को योग क्रिया को अनिवार्य कर दिया जाय। इससे सैनिकों में कार्य का दबाव नही आयेगा। सैनिकों को जिस दायित्व का निर्वाह करना है उसके लिये शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ रहना चाहिये। बहुधा यह देखा गया है कि सैनिक काम के दबाव के कारण अवसाद में आकर उग्र जो जाता है और उसके दुष्परिणाम सामने आते हैं।

18. सैन्य अधिकारियों को चाहिए कि सैनिकों से अच्छे सम्बंध बनाये तथा मनोंरंजन की व्यवस्था हो। सैनिक मनोरंजन में स्वयं संलग्न हो जिसमें गीत–संगीत खेल आदि की व्यवस्था हो।

19. सैनिकों के कार्य पद्धति में गुणात्मक सुधार के लिये यह भी आवश्यक है कि उन्हे समयानुसार वेतन व भत्ता मिलता रहे। बहुधा यह देखा गया है। कि वेतन में कमी होने के कारण सैनिक अवसाद से ग्रस्त हो जाता है। मेरा मानना है यदि

सैनिकों का परिवार जिसमें माता–पिता भी सम्मिलित हों अगर उस पर आश्रित हों तो पारिवारिक भत्ता दिया जाना चाहिये। इससे सैनिक अपने पारिवारिक जिम्मेदारियां का निर्वहन कर सकेगा। भारतीय समाज में अभी यूरोपियन जैसे स्वच्छन्दता एवं व्यक्तिवादिता नहीं आई है। भारत में आज भी व्यक्ति पारिवारिक जिम्मेदारियों से अपने को पृथक नही कर सकता है। वैसे भी भारतीय सैनिक निम्न मध्यमवर्गीय एवं किसानों के घरों से आते हैं जहां भी संयुक्त परिवार व्यवस्था मजबूत है। बेरोजगारी की समस्या के कारण परिवार का प्रत्येक सदस्य आर्थिक अपेक्षायें करता है। इसलिये सैनिकों की पारिवारिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में उसे उचित वेतन एवं पारिवारिक भत्ता दिया जाना चाहिये।

20. सैनिकों के साथ एक बड़ी समस्या अवकाश को लेकर आती है। काम करने की प्रकृति को लेकर उसमें सदैव तनाव बना रहता है। पहले सदैव युद्ध की परिस्थितियों में सैनिकों की व्यस्तता ज्यादा रहती थी। किंतु आज छद्म आतंकी युद्ध में सदैव युद्ध जैसा माहौल बना रहता है। इसलिये उसे अवकाश नही मिल पाता। सैनिकों को समय–समय पर घर जाने एवं परिवार के साथ समय बिताने की छूट देना चाहिये ऐसा करने से सैनिकों का अवसाद कम होगा और तनाव से मुक्ति होगी अक्सर सैनिकों को सेवाशर्तों के कारण परिवार पर आई विपदाओं को अनदेखा करना पड़ता है पारिवारिक दायित्व के निर्वहन के लिये नौकरी करने वाला व्यक्ति पारिवारिक समस्याओं से विमुख नहीं रह सकता है। अतः सैनिकों की सेवा भर्ती यथोचित परिवर्तन वांछित है। अक्सर यह देखा जाता है जब सैनिक

अपनी समस्याओं के बारे में अफसरों से बात करता है तो उसकी बात न सुन कर नियम कानून का हवाला देकर डाँटा जाता है, जिससे सैनिकों में अवसाद बढ़ जाता है। जब सैनिक इसका प्रतिकार करता है तो उसे सैन्य नियमों का उल्लंघन करने का आरोप लगा दिया जाता है। इसके कारण वह आत्महत्या या अपने अधिकारियों की हत्या के लिये तत्पर हो जाता है, इसे तत्काल रोका जाय।

21. सैनिकों की विविध समस्याओं का निराकरण करके उनं की कार्य क्षमता बढ़ाई जा सकती है। सरकार को चाहिये कि सेवारत सैनिकों के लिये एक संस्था का संगठन करे जो इसकी व्यक्तिगत व पारिवारिक समस्याओं का निराकरण करे।

22. सैनिक सेवा कोई नौकरी नही बल्कि राष्ट्र की सेवा है। सैनिकों को विश्वविद्यालय के प्रबुद्ध वर्ग से जोड़े रखना चाहिये। सैनिकों में नैतिक मूल्य बनाये रखने के लिए धर्म गुरूओं से सकारात्मक मूल्यों का ज्ञान दिलाना चाहिये और परस्पर संवादों को जीवित रखना चाहिये।

यद्यपि सैनिक सेवा का मूल्य कदापि नही हो सकता, क्योकि सैनिकों के त्याग बलिदान के आंकलन में राष्ट्र अपने को ऋणी समझता है। व्यावहारिक जीवन में भौतिक पदार्थ पैसे से प्राप्त किये जाते हैं इसलिये उन्हे एक सम्मानजनक वेतन आदि का ठीक प्रबन्धन रखा जाना चाहिए जिससे सैनिक व सैन्य अधिकारी किसी प्रकार के अभाव का अनुभव न कर सकें। सैनिक कभी–कभी अवसाद ग्रस्त हो जाते हैं। इसका अर्थ यह नही लगाना चाहिए कि सैनिक व्यवस्था के प्रति विरोध या विद्रोह कर रहा है वरन सामान्य ढंग से उसकी आपत्तियाँ नोट की जानी चाहिए। आपत्तियों का निराकरण करते समय पूर्ण न्याय किया जाना चाहिये, इसमें अंशमात्र भी पक्षपात नही होना चाहिए क्योंकि यदि पक्षपात की आशंका होती है तो विश्वास उठ जाता है और

सैनिक बदले की भावना का शिकार हो जाता है। अनुशासन बनाये रखने के लिए नेतृत्व को चरित्रवान होना चाहिए। जिससे भारतीय सशस्त्र सेना की नैतिक एवं व्यावसायिक दक्षता बढ़कार विश्व की श्रेष्ठ सेना का स्थान प्राप्त कर भारत की सुरक्षा के साथ विश्व में शांति कायम कर सकती है।

ग्रन्थ-सूची

ग्रन्थ–सूची

श्रीमद्भागवत् गीता, '182वां संस्करण' गोविन्द भवन कार्यालय गीता प्रेस गोरखपुर वि0 सम्वत् 2025

श्रीरामचरित् मानस, '140वां संस्करण' गोविन्द भवन कार्यालय गीता प्रेस गोरखपुर वि0 सम्वत् 2062

कर्नल कमाण्डेट नरेन्द्र सिंह, ''कनिष्ठ नेतृत्व अकादमी (कोर्स प्रैसी) पाठ्यक्रम, 8–जे0एल0 बरेली 2006 प्रष्ठ–116

कार0 एच0 सी0 ''भारतीय सैन्य इतिहास'' कलकत्ता 1980

जाली जे0 (सम्पा0), ''मानव धर्म शास्त्र (कोड ऑफ मनु शीर्षक के अन्तर्गत)'' लन्दन–1981

डॉ0 एम0जोसी0 ''स्वतंत्रता आन्दोलन का संक्षिप्त इतिहास'' अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद 1999

बिग्रेडियर राजेन्द्र सिंह, ''भारतीय सेना का इतिहास'' आर्मी एजुकेशनल स्ट्रोरेज नई दिल्ली 1965

वेद प्रकाश वर्मा, ''नीति शास्त्र के मूल सिद्धान्त'' एलाइड पब्लिशर्स लिमिटेड लखनऊ –1977

डा0 बी0 एल0 फड़िया, ''अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति'' साहित्य भवन आगरा 1993

सुन्दर लाल, ''भारत में अंग्रेजी राज'' सूचना मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली 1972

तोमर, रामबिहारी सिंह, ''सामाजिक मनोविज्ञान'' साहित्य भवन आगरा 1979

सुखदेव प्रसाद, "भारत एवं शेष नाभिकीय विश्व" साहित्य भण्डार इलाहाबाद 1999

David chandler.. 'The army of British India' Oxford New yark O.U. Press 1994/P-379

Dupuy and dupuy.. military of America, Mc graw hall 1956 P-337

D.K. Palit.. 'Essentials of military knowledge gale and polden, 1951, P-34

D.R. mankekar.. 'the guilty men of 1962, Bombay the tulsi shah enterprises – 1968 P-57.57

H.S. Bhatia military of britsh India (1602-1947) new delhi deep and publication – 1977

H. Kissinge.. Nucliar weapons and foreign policy. (New yeark -1951) P. -142

Hans J. Morgenthew.. poltics Among nations. (third edition) P.-192

I.L.claud.. power and International relations. (New yark-1959) P-7071

J.F.C. Fullar.. armament and history, londan.

J.S. Rajpoot.. Report patconfrence and Houlan University of Technology, Needarland- 1981

J.N. Nanda.. Science and technology in Indias Transformation, Conxept, publicing New Delhi-1986

J.N. Chaudhari.. Indias problems of National Security in the Sellintary New Delhi U.S.I. 1973

K.M. Panikkar.. problems of Indian defence, Asia Publising hause Bombay- 1960

Kavic L.J. Indias Quest for Security defence police's (1947-1965).

Lyonard S. Spector.. The ondicleryu Bamb, Caembris mash Baelingar-1988

Major Jenral Lakshaman singh.. in Bangladesh. Natry publisher Rajapur road Dehradun.

Lt. Jenral K.P. Candath P.V.S.M. (Retd), the Westan front indo Pakistan war 1971- New Delhi.

Navde Maruell.. India china war, jaico pililishing house Bombay-1971

Nay Chaudhri.. D. Science, Ankur publication house New Delhi-1977

Parshotam Mahri.. The Mackmahan and ofter, a study of the triangular contest on India north eastern and after, a study of the China and Tilat. 1904-47, the Mackmi company of India ltd. -1975.

Quated by David V. vitas.. the struggle for populstion. Oxford-1955.

Raya rai singh.. Equketonal for the Tewenty first ashiypaesifik parcitals. Unesko rejanal office Bankank -1991.

Raju G.C. tons.. Indian Security Police. Prinstan noejorsi. Prinstan university press-1986

S.T.Dash.. Indian military history its history and development, New delhi shagar publication 1969

S.N. goyal.. Air power in modern warfare (IAF) thacker and company Ltd. 1952

Cyril falls.. A Hundred years of war, London-1961.

Charles P. Schlicher.. Internationl relation, New Yark-1968

S.S. kheda.. Indian difence problems, Oriyential Longman New delhi- 1968

Sir Henari Lawrance.. Indian Army and oudh/Suampere friend of India press-1859

Field marshal lord nappies- londan 1927

शोध प्रबन्धः—

Janak singh, the role of armed forces in India's defence in-1971 Ph.D (Defence) Bundelkhand university -1987.

Ajay Mohan.. Military Education of first freedom struggle 1857 with special reference to Avadh, Ph.D (Defence) Avadh University, Fajabad.

Majar G.S. rekhi.. Securtiy fo the hill states in north eastern India Ph.D (Defence university Meerut -1984.

शचीस कुमार, ''उत्तरी पूर्वी भारत की सुरक्षा के सन्दर्भ में अरूणांचल प्रदेश का भू—सामरिक अध्ययन. विद्यावाचस्पति (रक्षा अध्ययन) अवध विश्वविद्यालय फैजाबाद, 1990.

Journal

Military Review.. how to change an army volume, lxiv November. 1984. No-11 pub u.s. army command and general staff collage fort Leavenworth kansas 66027-6910

Mainstream.. Punjab eight years after blue star. Vol xxx special report on China no-33, june-1962 m.s. f-24 Bhagat singh market new Delhi 11001

Mainstream Militarization of politics and. Vol-xxx no-30 may 16 1962 politicization of the Military.

Strategic digest 'defense and disarmament review.. Vol-xxv number-2 February 1955 [idsa] Institute for defense studies and analyses new Delhi

Strategic analysis 'imminence of indo park arms race vol iii no-ii february-1980 idsa – new Delhi

Strategic Analysis.. 'prospects of India China trade vol-1. No-2 may-1977 idsa-new Delhi

India International center quarterly, use of nuclear, weapons. Vol-8 number-2 june-1981 Vikas publishing house pbt . Ltd Ghaziabad (u.p.)

Bharatiya samajik chintan 'a truth about the Geeta' vol-xii no-102 march – june, 1989 B.sarkar department of electrical engineering, India, Instude of technology, Kanpur 208016

International affairs the non aligned movement.. All union zanantye society v.p. shafranov Moscow April -4, 1981

Strategic digest.. ' nonalignment under stress the west and the India china border war', August- 1980 idsa new Delhi

Strategic digest. World nuclear industries review' October 1989 Idsa new Delhi

India quarterly.. 'Panchsheel in Asia role of India' January June 1988 Indian council of world affairs new Delhi

India quarterly.. 'Disarmament- development linkages vol xi no-1 January March-1984 Indian council of world affairs new Delhi

New review on south Asia/Indian ocean 'Bangladesh special friend Premieerli vol-22 no-3 march 1989 Idsa new Delhi

India quarterly.. developing countries threats to their security, vol xLii no-1 January March-1986 idsa new Delhi.

समाचार–पत्र

टाइम्स आफ इण्डिया, लखनऊ

टाइम्स आफ इण्डिया, नई दिल्ली

हिन्दुस्तान टाइम्स नई दिल्ली

स्टेटमैन– नई दिल्ली

साप्ताहिक हिन्दुस्तान – नई दिल्ली

हिन्दू – नई दिल्ली

पान्च्यजन्य – नई दिल्ली

जनसत्ता – नई दिल्ली

न्यूजचीक – न्यूयार्क

नव भारत टाइम्स – नई दिल्ली

पत्रिका

फ्रन्टलाइन चेन्नई

इण्डिया टूडे नई दिल्ली

इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली

एनुअल रिपोर्ट ऑफ दि आर्कियोलाजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया

प्रसाद सुखदेव, ''वैज्ञानिक निबन्ध'' पुस्तक प्रकाशन मन्दिर इलाहाबाद–1988

धर्म युग

प्रतियोगिता साहित्य

कुरूक्षेत्र

प्रतियोगिता दर्पण

क्रानिकल

स्वतंत्र भारत
दिनमान वार्षिकी